उपर्युक्त सिद्धांत को समझ कर हबशी जाति को नष्ट अथवा कम से कम मृतप्राय होने से बचा लिया। बुकर टी० वाशिंगटन भी उन्हीं महात्माओं में से एक हैं।

अपने जीवन का लगभग एक तृतीयांश घोर दरिद्रता और विपत्ति में बिताकर अंत में अपनी जाति के लिये इतना विशाल कार्य करके उन्होंने जितनी योग्यता और प्रतिष्ठा सम्पादित की है उससे मालूम होता है कि वे अत्यत दृढनिश्चयी, परिश्रमी, और सयमी हैं और उनमें आत्मनिर्भरता तथा विवेचना शक्ति चरम सीमा तक पहुची हुई है। इसके अतिरिक्त उनके साधु चरित और पवित्र हृदय होने का भी हमारे सामने बहुत अच्छा प्रमाण है। वे अपनी जाति को शिक्षित, सभ्य, सम्पन्न और उन्नत तो अवश्य बनाना चाहते हैं पर अन्य अनेक सभ्य और सम्पन्न जातियों की भांति कृत्रिम और दूषित उपायों से नहीं। उनका दृढ-विश्वास है और बहुत ठीक है कि आधुनिक शिक्षा प्रणाली से होने वाले लाभों की अपेक्षा उससे होने वाली हानियों की संख्या भी कम नहीं है। शारीरिक परिश्रम करने वाले लोग जितने अधिक परिश्रमी, सरल, परोपकारी धार्मिक और जगत् का वास्तविक कल्याण करने वाले होते हैं उतने केवल मानसिक परिश्रम करने वाले नहीं। यदि सच पूछिए तो ससार की सारी झंझटें और कठिनाइयां केवल मानसिक परिश्रम करने वाले लोगों की बढ़ाई हुई ही हैं। यही कारण है कि वर्त्तमान जगत् आगे की अपेक्षा

सम्पन्न और बुद्धिमान् तो अवश्य अधिक है, पर सुखी बहुत ही कम है।

वाशिंगटन की शिक्षा-प्रणाली सभी देशों के लिये और विशेषतः भारतवर्ष के लिये बहुत ही उपयोगी और आवश्यक है। उसमें ज्ञान और विद्या-दान के विचार के साथ साथ परोपकार और परमार्थ का भाव भी कूट कूट कर भरा है। यही कारण है कि उनके विद्यालय से निकले हुए लोग विद्या, बुद्धि, देश तथा समाज की सेवा, पवित्र आचरण आदि सभी बातों में संसार के सामने सर्वोत्तम आदर्श उपस्थित करते हैं। अन्य देशों के शिक्षितों की भांति उनमें किसी प्रकार के बुरे भावों या विचारों का लेश मात्र भी नहीं होता। प्रायः सभी विचारवान् इससे सहमत होंगे कि जनरल आर्मस्ट्रांग और प्रो० वाशिंगटन की शिक्षाप्रणाली भारत सरीखे कृषि प्रधान देश के लिये सर्वथैव उपयुक्त और आवश्यक है। भारत के प्रत्येक प्रान्त में कम से कम एक एक वाशिंगटन और एक एक टस्केजी-विद्यालय की जरूरत है।

एक बात और है। वाशिंगटन की सामाजिक नीति भारतवासियों और विशेषतः मुसलमानों के लिये बहुत अनुकरणीय है। जिस प्रकार वाशिंगटन के कथनानुसार हबशियों और अमेरिकनों के परस्पर एक दूसरे से सुहृद्भाव रखने में ही दोनों का कल्याण है उसी प्रकार यहां के हिंदुओं और मुसलमानों के विषय में भी कहा जा सकता है। पर

इस कार्य्य के लिये सबसे अधिक शुद्ध हृदय और अपने लक्ष पर दृढतापूर्वक ध्यान रखकर कार्य्य करने की आवश्यकता है, खाली ज़बानी बातें करने की नहीं।

वाशिंगटन के चरित्र से एक और सबसे अच्छी शिक्षा, जिसे हम ग्रहण कर सकते हैं, यह मिलती है कि जो मनुष्य सच्चे हृदय से और परोपकार दृष्टि से किसी महत्त्वपूर्ण कार्य्य के साधन में निरंतर परिश्रम करता रहता है उसकी सफलता में तनिक भी संदेह नहीं रह जाता। कभी न कभी उसका अभीष्ट अवश्य सिद्ध होता है। हमारे देश भाइयों के लिये यह बात विशेष ध्यान देने योग्य है।

अंत में यह निवेदन कर देना आवश्यक मालूम होता है कि यह पुस्तक स्वय महात्मा बुकर टी० वाशिंगटन के लिखे हुए "Up from Slavery नामक आत्मचरित के आधार पर लिखी गई है और यदि इसके लिखने में मेरी ओर से किसी प्रकार की त्रुटि या भूल हो गई हो तो विज्ञ पाठक उसके लिये मुझे क्षमा करें।

विनीत

रामचन्द्र वर्म्मा

सूची ।

उपोद्घात ।

दासत्व-प्रथा का संक्षिप्त परिचय ।

"दासत्व यदि पाप नहीं है तो और कोई बात पाप नहीं हो सकती ।"—अब्राहाम लिंकन ।

सत्रहवीं शताब्दी के आरम्भ में युरोप के भिन्न भिन्न भागों से लोग आकर अमेरिका में बसने लगे। उस समय अमेरिका बिलकुल जंगली प्रदेश था, इसलिये जंगल साफ करने तथा दूसरे कामों के लिये उन्हें मजदूरों की बड़ी आवश्यकता प्रतीत होने लगी । अमेरिका में जमीन की कमी न थी इसलिये युरोपियन लोग वहां के जमींदार बन गए। पर उन्हें मजदूर कोई भी न मिलता था । उन लोगों की यह आवश्यकता पूरी करके धन कमाने के लिये पुर्तगाली लोगों ने अफ्रिका के हबशियों को जहाजों पर लाकर अमेरिका में उन्हें गुलामों की भांति बेचना आरंभ किया। आगे चलकर धीरे धीरे यह व्यापार अंग्रेजों के हाथ आगया । हजारों निरपराधी मनुष्य भेड़ बकरियों की तरह प्रति वर्ष बिकने लगे। नवीन देश, अमेरिका, में भावी विपत्ति का बीज उसी समय बोया गया।

इसी बीच में सन् १७६५ से अंग्रेजों और अमेरिकन उपनिवेश वालों में कुछ करों के संबंध में झगड़ा आरंभ हुआ और दोनों पक्षों में भयंकर युद्ध होने के लक्षण दिखाई देने लगे। एडमंड बर्क और लार्ड चैटम (विलियम पिट) ने यह युद्ध रोकने के लिये अनेक चेष्टाएं कीं, पर उन सब का कुछ भी फल न हुआ और अंत में युद्ध हुआ ही। आठ दस बरस के अंदर ही अंदर, सन् १७७५ में युद्ध आरंभ होगया। दूसरे वर्ष फिलाडेलफिया की कांग्रेस ने स्वतंत्रता का घोषणापत्र (The declaration of independence) प्रकाशित किया। इसके उपरांत दोनों पक्षों में सात आठ वर्षों तक घोर युद्ध होने के बाद सन् १७८३ में वरसेलेस की संधि (Treaty of Versailles) के अनुसार अमेरिका के तेरह राज्यों में स्वतंत्रता स्थापित हुई।

इस प्रकार अनेक आपत्तियां सहकर, धन व्यय करा और रक्त बहा कर अमेरिकन लोगों ने निश्चय कर दिया कि "मनुष्य-मात्र ईश्वर की दृष्टि में समान रूप से स्वतंत्र है", और संसार का बड़ा भारी अंदोलन ठंडा कर दिया। पर इस संबंध में उन लोगों का एक दोष रह गया। मनुष्य की स्वतंत्रता वाला सिद्धांत वे लोग केवल गोरे चमड़े वालों के लिये मानते थे। हवशियों की गणना वे मनुष्यों में न करते थे और न उन्हें स्वतंत्रता ही देते थे। अधिकांश अमेरिकन यही समझते थे कि हबशी उनकी संपत्ति (Property) हैं और

सम्पत्ति की भांति ही वे उनका नियोग भी करते थे। कहते हैं कि अमेरिका के पहले प्रेसिडेंट जार्ज वाशिंगटन के पास भी कुछ गुलाम थे।

अब अंग्रेजों को दासत्व प्रथा का अन्याय स्पष्ट रूप से दिखाई देने लगा और वे इस पाप से मुक्त होने का उद्योग करने लगे। दासों का व्यापार रानी एलिज़बेथ के शासन काल में आरंभ हुआ था और तृतीय जार्ज के शासन काल के आरंभ में यह बहुत अधिक बढ़ गया था। कहा जाता कि इस बीच में प्रति वर्ष पचास हजार हबशी अंगरेज़ी जहाजों पर दास बनाकर सवार कराए जाते थे। धीरे धीरे लोगों के कानों तक ये बातें पहुंचने लगीं कि अफ्रिका में हबशी पकड़े जाते हैं उन्हें बकरियों और भेड़ों की तरह जहाजों में भरकर उनके साथ घोर अन्याय किया जाता है और अटलांटिक महासागर से लेजाकर उन्हें वेस्ट-इंडीज और अमेरिका में बेचा जाता है।

इस दासत्व प्रथा को रोकने के लिये विलियम विलवरफोर्स नामक एक अंग्रेज सज्जन ने बहुत परिश्रम किया था। सन् १७८८ में उन्होंने यह विषय पारलामेंट के सामने भी उपस्थित किया था पर दासों का व्यापार करने वालों के विरोध के कारण उनका यह प्रस्ताव स्वीकृत न हो सका। तो भी विल-वरफोर्स निराश न हुए और बराबर उसी उद्योग में लगे रहे। कुछ समय के उपरांत सन् १८०६ में मि० फाक्स नामक एक

सज्जन के प्रस्ताव करने पर दासों का व्यापार तो बंद होगया, पर अंगरेजी राज्य में आठ लाख गुलाम बाकी रह गए। अंत में सन् १८३३ में पारलामेंट में एक नियम बना और उसके अनुसार दासों को स्वतंत्रता मिली और मि० विलबरफोर्स का प्रयत्न सफल होगया। इस काम के लिये उन्होंने लगातार, पैंतालीस वर्षों तक बहुत उद्योग किया था और अंत में गुलामों की स्वतंत्रता का नियम स्वीकृत होजाने पर, अथवा यों कहिए कि अपने जीवन का महत्त्वपूर्ण उद्देश्य पूरा करके, तीन दिन बाद, ७५ वर्ष की अवस्था में मि० विलबरफोर्स परलोक सिधारे! अंगरेजी राज्य में दासत्व प्रथा बंद करने का अधिकांश यश इन्हीं को है।

अब हम अमेरिका के गुलामों के इतिहास की ओर ध्यान देते हैं। पहले पहल टामस पेन नामक एक उदार महात्मा ने ८ मार्च सन् १७७५ को दासत्व प्रथा के विरुद्ध अपना निबंध प्रकाशित किया। इसके महीने, सवा महीने बाद, अर्थात् १२ अप्रैल सन् १७७५ को दासत्व प्रथा रोकने का उद्योग करनेवाली पहली सभा अमेरिका में स्थापित हुई। टामस पेन तथा अन्य अनेक सज्जनों के उद्योग से २ नवंबर सन् १७७६ ई० को पेनसिलवेनिया नामक राज्य में दासत्व प्रथा बंद करने का नियम पास हुआ। उस समय उस राज्य में कोई छः हजार गुलाम थे। इसके उपरांत सन् १८८३ में अमेरिका को स्वतंत्रता मिलने पर, जार्ज वाशिंगटन, टामस

जेफरसन और अलेकजेंडर हैमिलटन आदि सज्जनों ने अमेरिका की जो स्वतंत्र शासनपद्धति निश्चित की थी, उसकी प्रधान बातें ये थीं कि सब मनुष्य समान और स्वतंत्र हैं, सबके अधिकार समान हैं और कोई मनुष्य दूसरे का अधिकार नहीं छीन सकता । पर तो भी अमेरिका में जब तक दासत्व प्रथा रही तब तक ये सिद्धांत पूर्णतया कार्य्यरूप में परिणत नहीं हुए थे । उत्तर ओर के राज्यों ने* दासत्व प्रथा को अन्याय समझ कर अपने गुलामों को छोड़ दिया, पर दक्षिण प्रांत के राज्यों ने अपने गुलामों को नहीं छोड़ा । इसके सिवा दक्षिण के राजा यह भी कहते थे कि यदि हमारे गुलाम हमारे पास न रहने दिए जांयगे तो हम लोग यूनियन (संयुक्त) राज्य में भी सम्मिलित न होंगे । यह समय बहुत नाज़ुक था और देश में एकता की बहुत अधिक आवश्यकता थी । इसलिये दक्षिण के राज्यों से गुलाम छोड़ देने के लिये अधिक आग्रह न किया जा सकता था । उत्तर प्रांत के राज्यों ने समझ लिया कि कुछ वर्षों बाद दासत्व प्रथा का अन्याय देखकर दक्षिण के राज्य स्वयं ही उसे बंद कर देंगे और इसी लिये उन्होंने उस समय इस विषय पर अधिक जोर भी न दिया । उत्तर प्रांत के राज्यों में जाड़ा अधिक पड़ता था इस

*अमेरिका के नकशे पर इलिनाइस राज्य के बीच एक आड़ी रेखा खींच कर इसके दो भाग कर लेने पर इस रेखा के ऊपर या उत्तर भाग में दासत्व प्रथा नहीं थी पर नीचे या दक्षिण भाग में थी । उत्तर प्रांत के लोग दासत्व प्रथा बंद करना चाहते थे पर दक्षिण प्रांत के लोगों का मत इसके विरुद्ध था ।

कारण खेती बारी आदि कामों के लिये उन्हें हबशियों की अपेक्षा अधिक योग्य मजदूरों की आवश्यकता थी, और इसी लिये उन्हें हबशियों की अधिक परवाह न थी। लेकिन दक्षिण प्रांत के राज्यों की दशा बिलकुल इसके विपरीत थी। वहां गरमी अधिक पड़ती थी और बिना गुलामों की सहायता के खेती आदि का काम भली भांति न हो सकता था। गरमी के दिनों में गुलाम लोग खेतों में एक ओवरसियर की अधीनता में सिरतोड़ परिश्रम करते थे और गोरे जमींदार घरों में पड़े चैन करते थे। इसीलिये वे लोग दासत्व प्रथा बंद करना नहीं चाहते थे। सन् १८०५ में डोमिंगो प्रांत के गुलामों को बहुत अधिक कष्ट हुआ था। उस समय टामस पेन ने प्रेसिडेंट जेफरसन के पास प्रार्थना की भांति कुछ पत्र भेजे थे, पर उनका कोई विशेष फल नहीं हुआ। सन् १८०६ में टामस पेन का देहांत हो गया। उनकी अंत्येष्टिक्रिया के समय अपनी जाति की ओर से कृतज्ञता प्रकट करने के लिये दो हबशी भी उपस्थित थे।

यह एक ईश्वरीय नियम है कि सत्य कभी दबाया नहीं जा सकता और अंत में उसकी जय ही होती है। दासत्व प्रथा बंद करने का उद्योग करनेवाले टामस पेन जब मर गए, तो उसी वर्ष यह प्रथा बंद करनेवाले एक महात्मा अब्राहाम लिंकन का जन्म हुआ। लिंकन का जन्म एक बहुत ही दरिद्र के घर में हुआ था। जब अब्राहाम बड़े और होशियार हुए

तो उनकी योग्यता देखकर ओफट नामक एक व्यापारी ने उन्हें अपना सहकारी बनाकर स्प्रिंगफील्ड से अपने पास न्यू आरलियन्स में बुलवा लिया । न्यू आरलियन्स पहुँच कर अब्राहम ने दासत्व प्रथा के भयंकर अन्याय देखे । वहां दासों की बिक्री के लिये एक बड़ा बाजार लगा करता था । अब्राहम ने पहले पहल अपनी आँखों से यहीं देखा कि झुंड के झुंड गुलाम बेड़ियां पहना कर पंक्ति में खड़े किए जाते हैं और जब तक उनकी पीठ से रक्त की धारा न बहने लगे तब तक उन पर कोड़ों की मार पड़ती है। और देखने वालों पर तो इस भयंकर दृश्य का कुछ भी प्रभाव न पड़ा पर अब्राहम का अंतःकरण इस वेदना से चकनाचूर हो गया । उस समय या उसके बाद तो उन्होंने इस संबंध में किसी से कुछ भी नहीं कहा पर अपने मन में वे इस विषय पर विचार अवश्य करने लगे । उस समय उनके हृदय में दासत्व प्रथा के संबंध में जो कांटा चुभा वह उस प्रथा के समूल नष्ट हो जाने से पहले नहीं निकला । दासत्व प्रथा बंद करने का उन्होंने दृढ़ संकल्प कर लिया और ईश्वर की कृपा से यह संकल्प पूरा भी हो गया ।

सन् १८३० के लगभग विलियम लॉइड गैरिसन नामक एक धनवान सज्जन ने लिबरेटर (Liberator) नामक एक समाचार पत्र निकालना आरंभ किया । उसका उद्देश्य सर्व साधारण पर दासत्व प्रथा के अन्याय प्रगट करना था । एक

दिन कुछ दुष्टों ने सेंट-लुइस नगर के "लिवरेटर" के दफ़्तर में घुस कर गैरिसन तथा कुछ नौकरों को बहुत पीटा और उनमें से कुछ को मार भी डाला।

दासत्व-प्रथा के संबंध में इस प्रकार के अथवा इससे भी अधिक भयंकर कृत्य देख और सुनकर एच. बी. स्टो नामक एक अमेरिकन विदुषी बहुत अधिक दुःखी हुई थी। पहले तो वह कुछ दिनों तक यही समझ कर चुप रही कि ज्यों ज्यों लोगों में सुधार और ज्ञान का प्रचार होता जायगा त्यों त्यों यह अन्याय भी कम हो जायगा, पर जब सन् १८५० में भागे हुए गुलामों को पुनः पकड़वा मंगाने के लिये नियम बनने का उद्योग होने लगा, क्रिस्तान कहलानेवाले तथा अन्य धार्म्मिक लोग भी उपदेश देने लगे कि स्वामी के अन्याय और अत्यचार से डर कर भागे हुए गुलामों के पकड़ने में सहायता देना प्रत्येक नागरिक का कर्त्तव्य है, और उत्तर प्रांत के राज्यों के बड़े बड़े दयालु और शिष्ट लोग भी सभाएं करके गुलामों को पकड़ने के लिये क्रिस्तानी धर्म्मशास्त्रों का मत संग्रह करने लगे, तो उस विदुषी को बहुत आश्चर्य्य और दुःख हुआ। अब वह चुपचाप न रह सकी। लोगों को दासत्व-प्रथा संबंधी अन्यायों का वास्तविक स्वरूप दिखलाने के लिये उसने Uncle Tom's cabin (अंकिल टामस केबिन) नामक एक बहुत उत्तम पुस्तक लिखी। गुलामों को बागों में दिन भर किस प्रकार जी तोड़ कर परिश्रम करना पड़ता था, जरा सी भूल हो

जाने पर ओवरसियर लोग उन्हें किस निर्दयता से चाबुके लगा कर उनसे पुनः काम कराते थे, यदि यह ओवरसियर भी हबशी ही होता तो वह भी "जात का वैरी जात" के न्यायानुसार दूसरे हबशी को कितना अधिक दुःख देता था, रात को भरपेट भोजन न देकर गुलाम लोग किस प्रकार एक छोटी कोठरी में ठूंस दिये जाते थे, धन के लालच से पति पत्नी भाई-बहन और माता-पुत्र को अलग अलग मालिकों के हाथ बेच कर उनकी कैसी दुर्दशा की जाती थी, युवा दासियों का अनेक प्रकार से सतीत्व नष्ट करके उनका जीवन किस प्रकार नष्ट किया जाता था असह्य कष्ट से डर कर भागे हुए गुलामों के पीछे इनाम के लालच से किस प्रकार शिकारी कुत्ते और दुष्ट लोग छोड़े जाते थे हाथों और पैरों में हथकडिया और बेडिया डाल कर उन्हें बाजार में बेचने के लिये ले जाने के समय किस निर्दयता से मारा जाता था और पादरी लोग इस प्रकार के अन्यायों का बाइबिल के आधार पर किस तरह समर्थन करते थे, इत्यादि, इत्यादि अनेक हृदयविदारक और रोमाञ्चकारी दृश्यों का पूरा पूरा वर्णन बडी ही उत्तमता से इस पुस्तक में किया गया है। इस पुस्तक ने अमेरिकन लोगों में खूब उत्तेजना फैला दी और दासत्व प्रथा के विरुद्ध बहुत सा लोकमत तैयार कर लिया। जिन लोगों को दासत्व-प्रथा के अन्यायों और उसके वास्तविक स्वरूप का पूरा ज्ञान प्राप्त करना हो, वे लोग यह पुस्तक अवश्य पढ़ें।

इस प्रकार आंदोलन होने पर दो प्रबल पक्ष तैयार हो गए। एक कहता था कि दासों को स्वतंत्रता दी जाय और दूसरा कहता था कि उनकी वर्त्तमान स्थिति ही ठीक और सुखदायक है, इसलिये उन्हें स्वतंत्रता न दी जाय। इन दोनों पक्षों में बहुत से झगड़े हुए। सन् १८५६ के बाद अमेरिका की दशा और भी नाज़ुक हो चली। उस समय देश को भावी आपत्ति से बचाने में समर्थ एक महापुरुष प्रेसिडेंट चुना गया, वह महापुरुष अब्राहाम लिंकन था।

अमेरिकन लोगों को अपने पहले किए हुए पापों का प्रायश्चित्त करना बहुत आवश्यक था। सन् १८६० में दासों को स्वतंत्रता देने के लिये तथा और कारणों से दक्षिण और उत्तर के राज्यों में युद्ध (Civil War) छिड़ गया जो चार पांच वर्षों तक जारी रहा। इस झगड़े को बिना युद्ध के किए ही निपटाने और अमेरिका को दो टुकड़े होने से बचाने के लिये महात्मा लिंकन ने जी जान लड़ा कर परिश्रम किया पर यह झगड़ा बिना युद्ध के तै होता दिखाई न देता था। सन् १८६१ में प्रेसिडेंट लिंकन ने सेना के लिये पांच लाख स्वय-सेवक मांगे*। दक्षिण के राज्यों ने विद्रोह का झंडा खड़ा कर दिया। अन्त में सन् १८६२ में दासत्व-प्रथा बंद करने

*अमेरिका में स्थायी सेना (Standing Army) नहीं रहती। जब आवश्यकता पड़ने पर प्रेसिडेंट स्वयं सेवक मांगते हैं और उस समय जो लोग युद्ध करने में समर्थ होते हैं। व अपने देश के झंडे के नीचे भरती हो जाते हैं।

का नियम पास हुआ। पहले तो विद्रोहियों की कुछ जीत हुई और वे राजधानी, वाशिंगटन नगर, पर आक्रमण करने का विचार करने लगे। लिंकन ने अधिक सेना सग्रह करके विद्रोह दमन करने का यत्न किया। ग्रांट नामक एक होशियार सेनापति मिलने पर युद्ध का रंग पलटा और विद्रोहियों का बल कम होने लगा। सितंबर सन् १८६२ में प्रेसिडेंट लिंकन ने घोषणा की कि १ जनवरी सन् १८६३ से दासत्व-प्रथा बंद कर दी जायगी। उसी वर्ष, ३ दिसंबर को उन्होंने यह भी घोषणा की कि जो विद्रोही हथियार रख देंगे और शांति पूर्वक रह कर देश की रक्षा करने का वचन देंगे उन्हें क्षमा किया जायगा। १ जनवरी १८६३ को एक घोषणा पत्र द्वारा दासत्व-प्रथा का अंत किया गया। उस समय तक युद्ध जारी था पर विद्रोहियों का बल बहुत घट गया था। उसी समय लिंकन का सभापतिकाल भी पूरा हो गया। मार्च सन् १८६५ में लिंकन पुनः प्रेसिडेंट चुने गए। ६ अप्रैल (सन् १८६३) को विद्रोही सेना का जनरल ली प्रेसिडेंट की शरण में आया और विद्रोह का अंत हो गया। युद्ध में दोनों पक्षों के लाखों आदमी काम आए, असंख्य धन नष्ट हुआ और अंत में दासत्व-प्रथा भी बंद हो गई। कोई तीस चालीस लाख मनुष्यों को स्वतंत्रता मिली। सब लोग महात्मा लिंकन का यश गाने लगे। स्वतंत्र होने वाले हबशी तो उन्हें प्रत्यक्ष ईश्वर मानने लगे।

देश पर आया हुआ संकट दूर कर के और अनेक महत्त्व के कार्य्य करके प्रेसिडेंट लिंकन दोनों पक्षों में मेल कराने का प्रयत्न कर रहे थे। उसी अवसर पर १४ अप्रैल के दिन किसी दुष्ट ने वाशिंगटन के फोर्ड थियेटर में गोली से इन्हें मार डाला। इस प्रकार इस काम में महात्मा लिंकन का भी बलिदान हो गया।

आत्मोद्धार।

१—जन्म और प्रारंभिक अवस्था।

बुकर वाशिंगटन का जन्म वर्जीनिया प्रांत (अमेरिका) के फ्रांकलिन परगने के किसी बाग में एक हवशी गुलाम के घर हुआ था। जन्म-स्थान या तिथि का कोई ठीक पता नहीं मिलता, केवल इतना कहा जा सकता है कि जन्म का सन् १८५८ या ५९ होगा। उनके जीवन का आरंभ बहुत ही निराश और दुःखपूर्ण दशा में हुआ था। अपने स्वामी के बाग में उनकी माता जेन अपने ही पुत्रों और एक कन्या के साथ एक छोटी सी कोठरी में रहा करती थी। जेन को उसके बाल बच्चों सहित एक अमेरिकन जमींदार ने मोल ले लिया था। उसका पति एक गोरा था, पर वाशिंगटन के जन्म के समय वह उससे सबंध छोड़ चुका था। वह पास ही के एक गांव में रहा करता था। पर उसने वाशिंगटन या उसके भाई, बहन की शिक्षा दीक्षा का कभी कोई प्रबंध नहीं किया। कदाचित् इससे पहले ही वह सिविल-वार में मारा जा चुका था।

जेन जिस कमरे में अपने बच्चों सहित रहती थी, वह रसोई घर था, और उसीके सुपुर्द भोजन बनाने का काम भी

था। उस कोठरी की जमीन मट्टी की थी, और उसमें एक छोटा सा दरवाजा था। उस कोठरी में सब लोग बड़े दुःख से अपने दिन विताते थे। वहां गरमी के दिनों में कड़ी धूप और जाड़े में ठंढी हवा के झकोरों के कारण सब को बहुत अधिक कष्ट होता था। जेन अपने बालकों सहित गुलामों की तरह उसी रसोई घर में अपना जीवन विताती थी। बहुत तड़के उठकर उसे काम में लग जाना पड़ता था और बहुत रात बीते तक भी उसे काम से छुट्टी न मिलती थी। इसलिये उसे दिन भर अपने बालकों की खबर लेने का अवकाश न मिलता था। जब तक अमेरिका में दासत्व-प्रथा रही तब तक उन लोगों को कभी सोने के लिये बिछौना नहीं मिला। सब लोग उसी जमीन पर फटे पुराने चीथडे बिछाकर सोया करते थे।

बाल्यावस्था में वाशिंगटन कभी खेल कूद का नाम भी न जानते थे, इसलिये नहीं कि उनकी रुचि खेल कूद की ओर थी ही नहीं, बल्कि इसलिये कि वे एक दास-जाति के बालक थे, और जब से उन्हें कुछ कुछ ज्ञान हुआ तब से उन्हें अपना अधिकांश समय परिश्रम पूर्वक अपने स्वामी का काम करने में ही विताना पड़ता था, उन्हें घर में झाडू देना पड़ता था, खेत में काम करने वालों के लिये पानी ले आना पड़ता था और सप्ताह में एक दिन मिल में जाकर अनाज पिसवाना पड़ता था। मिल में जाने से वे बहुत घबराया करते थे। जिस

मिल में अनाज पीसा जाता था, वह उनके बाग से तीन मील दूर थी। अनाज से भरा, भारी बोरा घोड़े पर लाद कर वे मिल में ले जाते और वहां से पिसवा लाते थे। घोड़े पर दोनों ओर अनाज का बोझ बराबर न होने के कारण प्राय वे उसपर से बोरे सहित भूमि पर गिर पड़ते थे और जब तक कोई पथिक आकर पुन वह बोरा घोड़े पर लाद न देता तब तक वे उसी स्थान पर बैठे बैठे रोया करते थे। इसी कारण से उन्हें मिल में पहुचने में बहुत विलंब हो जाता था और अनाज पिसवा कर घर लौटने में प्राय बहुत रात बीत जाती थी। मिल और बाग के बीच में एक बड़ा जगल पड़ता था और उस मार्ग से बहुत ही कम लोग आते जाते थे। इस के अतिरिक्त वाशिंगटन ने यह भी सुन रक्खा था कि सेना से भागे हुए बहुत से सैनिक इसी जगल में छिप रहते हैं और किसी अकेले दुकेले हब्शी बालक को पाकर वे उसका कान काट लेते हैं। सब से बड़ी बात यह थी कि विलंब से घर पहुचने पर चाबुक से उनकी खबर ली जाती थी।

दासावस्था में वाशिंगटन को किसी प्रकार की स्कूल की शिक्षा न मिली थी। उनके मालिक की कन्या पढ़ने के लिये एक स्कूल में जाया करती थी और वे प्राय उसका बस्ता लेकर पहुचाने के लिये उसके साथ जाया करते थे। बहुत से बालकों और बालिकाओं को पढ़ते लिखते देख कर उनके चित्त पर बहुत अच्छा प्रभाव पड़ा था और उसी

समय से वे स्कूल में बैठ कर पढ़ने को स्वर्ग सुख समझने लगे थे।

उन्हीं दिनों दासों को मुक्त करने के लिये अमेरिका में खूब आंदोलन हो रहा था। एक दिन प्रातःकाल के समय जेन ने अपने बालकों सहित घुटने टेक कर ईश्वर से प्रार्थना की थी—"हे ईश्वर! लिंकन और उनकी सेना विजयी हो और वह दिन भी आवे जब कि मैं अपने बालकों सहित मुक्त होऊं।" उस समय वाशिंगटन की अवस्था बहुत थोड़ी थी और वे उस प्रार्थना का पूरा पूरा अर्थ न समझ सके थे। पर इसमें संदेह नहीं कि जब दासों को मुक्त करने के लिये बहुत अधिक आंदोलन होने लगा तो दक्षिण अमेरिका के गुलामों का ध्यान भी उस ओर गया। 'सिविल वार' से पहले और उसके आरम्भ होने पर वाशिंगटन अपनी माता तथा दूसरे गुलामों से प्रायः उसका समाचार सुना करते थे। इससे मालूम होता है कि उस समय उन लोगों को अपनी दशा का बहुत कुछ ज्ञान हो गया था।

वाशिंगटन जिस बाग में रहते थे, वह यद्यपि शहर और रेल स्टेशन से बहुत दूर था, पर तो भी वहां के गुलामों को युद्ध छिड़ने और लिंकन के सभापति होने के संबंध में बहुत सी बातें मालूम थीं। जिस समय उत्तर और दक्षिण अमेरिका में युद्ध आरम्भ हुआ उस समय उस बाग के सभी गुलाम भली भांति जानते थे कि इस युद्ध के अनेक कारणों में से

उनके मुक्त होने का प्रश्न ही मुख्य है। उन दिनों समस्त देश के गुलाम यही मनाते थे कि उत्तर अमेरिका की सेना की जीत हो। प्राय बड़े बड़े युद्धों का परिणाम गोरों की अपेक्षा गुलामों को पहले मालूम हो जाया करता था। जो गुलाम अपने मालिक की डाक लेने के लिये डाक घर जाया करते थे, वे वहीं से सब समाचार सुन आते और तुरत अपने स्वजातियों को सुना देते थे। इस प्रकार सब समाचार गोरों की अपेक्षा गुलामों को पहले मिल जाया करते थे।

उन दिनों गुलामों के भोजन का कभी कोई ठीक प्रबंध न होता था। वाशिंगटन और उनके घर वालों को कभी केवल थोड़ी सी रोटी, कभी केवल मांस कभी केवल दूध और कभी केवल आलू ही मिला करता था। कार्य्य की अधिकता के कारण उन लोगों को कभी एक साथ बैठकर ईश्वराराधन या भोजन करने का अवकाश न मिलता था। भोजन के लिये उन लोगों के पास कोई पात्र भी न होता था, सब को हाथ पर भोजन करना पड़ता था। कुछ बड़े होने पर वाशिंगटन को भोजन के समय अपने मालिक के घर जाकर पंखे से टेबुल पर की मक्खियां हाकनी पड़ती थीं। यहा वे प्राय युद्ध और गुलामों की मुक्ति के सबंध में लोगों की बात चीत सुना करते थे। एक दिन उन्हों ने गृहस्वामिनी को जिंजर-केक नामक पकाम खाते देखा। उस समय उन्होंने निश्चय किया कि मैं भी जिस दिन स्वतन्त्र होकर इसी प्रकार जिंजर-केक खाऊंगा, उस दिन अपने आपको धन्य समझूंगा।

जब युद्ध होते बहुत दिन हो गए तो अधिकांश गोरों को अन्न के लिये बहुत कठिनता होने लगी। गुलाम लोग केवल बाजरे आदि मोटे अन्न की रोटी और मांस खाते थे और ये चीजें बाग में ही अधिकता से होती थीं। पर गोरों का काम बिना चीनी, चाय और कहवे के न चलता था। ये चीज़ें गांव में नहीं होती थीं और युद्ध के कारण उनका बाहर से आना भी बहुत कठिन हो गया था। इस लिये गुलामों की अपेक्षा गोरों को बहुत कष्ट होने लगा। उन दिनों गुलामों के प्रति गोरों का द्वेप बहुत बढ़ गया था। उनके अधिकांश संबंधी युद्ध में मारे जाते थे और उन पर अनेक प्रकार की विपत्तियां आती थीं। एक बार वाशिंगटन के मालिकों में से एक युवक मारा गया और दो बहुत अधिक घायल होकर घर लौटे। वाशिंगटन के मालिक औरों की अपेक्षा कुछ अधिक दयालु और सज्जन थे, इसलिये उनके सभी गुलामों की उनके साथ बहुत सहानुभूति थी। सब ने मिल कर अपने दोनों घायल मालिकों की संबंधियों से बढ़ कर सेवा शुश्रूषा की और उनके प्रति बहुत सहानुभूति दिखलाई। घर के पुरुष जब युद्ध में जाते तो गुलाम उनके घर, बार और स्त्री बच्चों की बड़ी सावधानी से रक्षा करते थे। यद्यपि बहुत से गोरे अपने गुलामों के साथ बहुत ही अनुचित व्यवहार करते थे, पर तो भी गुलाम उनके साथ कभी किसी प्रकार का विश्वासघात न करते थे। यद्यपि गुलामों के साथ गोरे द्वेष रखते थे, पर तो भी गुलाम सदा स्वामिभक्त बने रहते

थे। कभी कभी तो यहां तक हुआ कि युद्ध आरम्भ होने पर गुलाम अपने पुराने मालिकों के अनाथ बाल बच्चों तक का पालन करते थे। अनेक अवसरों पर उन लोगों ने अपने मालिकों को कष्ट से बचाने के लिये चन्दा करके बहुत सा धन संग्रह किया था और अनेक प्रकार से उनकी सहायता की थी। एक बार एक मालिक के मर जाने पर उसके लड़के को मदिरा पीने का दुर्व्यसन लग गया और इसी के पीछे उसने अपनी सारी संपत्ति नष्ट कर दी थी। उसकी दरिद्रावस्था में बहुत दिनों तक उसके गुलाम अपने पास से उसके भोजन आदि का प्रबन्ध करते रहे थे और कभी उसे कष्ट न होने देते थे।

दासत्व प्रथा उठने से दो तीन वर्ष पूर्व एक हबशी ने अपने स्वामी से इस शर्त पर मुक्ति पाई थी कि वह कुछ निश्चित धन प्रति वर्ष कई किस्तों में अपने स्वामी को देकर अपना मूल्य पूरा कर देगा। स्वामी ने भी यह बात स्वीकार कर उसे मुक्त कर दिया और वह ओहियो राज्य में जहां अधिक मज़दूरी मिलती थी चला गया। जिस समय देश से दासत्व प्रथा उठा दी गई उस समय वह अपने स्वामी का तीन सौ डालर का देनदार था। यद्यपि नियमानुसार अब उसे अपने मालिक का ऋण चुकाने की कोई आवश्यकता न थी पर तौ भी उस हबशी ने स्वयं अपने स्वामी के पास जाकर वह धन ब्याज सहित उसे लौटा दिया। उसने एक बार वाशिंगटन से ओहियो राज्य में मिलने पर कहा था 'यद्यपि नियमानुसार अब मैं उसका

देनदार नहीं हूं पर तौ भी मैंने अपने स्वामी को वचन दिया है, और मैं अपने वचन से कभी फिर नहीं सकता" अर्थात विना अपने स्वामी का ऋण चुकाए उसने अपनी स्वतंत्रता का उपयोग नहीं किया। हमारे जो भारतवासी भाई ऋण चुकाने से बचने के लिये ३ वर्ष वाली मुद्दत विना देना चाहते हैं उन्हें इस उदाहरण से शिक्षा ग्रहण करनी चाहिए।

वाशिंगटन ज्यों ज्यों बड़े होते गए त्यों त्यों वे समझते गए कि यद्यपि हवशियों से निर्दयता का व्यवहार होता है पर तब भी दासत्व प्रथा का फल गोरों और कालों को समान रूप से ही मिल रहा है। सब लोग परिश्रम करने को बहुत ही तुच्छ और अवनति का लक्षण समझते थे। गोरे और काले दोनों ही जहां तक हो सकता था, काम करने से जी चुराते थे। हवशियों को तो विवश होकर काम धंधा करना ही पड़ता था पर गोरे एक दम निरुद्यमी और आलसी हो गए थे। वाशिंगटन के मालिक के कई लड़के और लड़कियां थीं पर उनमें से कोई भी किसी प्रकार के शिल्प या व्यापार के योग्य न था। लड़कियां न तो कुछ लिखती पढ़ती थीं, न भोजन आदि बनाना या गृहस्थी के और काम करना जानती थीं। सब कार्य्य अशिक्षित गुलामों पर ही छोड़ दिए जाते थे, इस लिये गृहस्थी की बहुत ही दुर्दशा होती थी। यद्यपि यहां आवश्यक चीज़ों की कमी नहीं थी पर तौ भी अव्यवस्था और कुप्रबंध के कारण गृहस्थी का सुख किसी को न मिलता था। दासत्व-प्रथा उठ

आने पर शिक्षा और स्वामित्व के अधिकार को छोड़ कर शेष सब सभी बातों में गोरे और हबशी दोनों समान ही थे। गोरे लोग किसी प्रकार का व्यापार नहीं कर सकते थे और किसी प्रकार का परिश्रम करने में अपनी मानहानि समझते थे। हां, हबशियों ने भले ही कुछ छोटे मोटे काम सीख लिये थे और परिश्रम करने में उन्हें किसी प्रकार की लज्जा भी न होती थी।

होते होते युद्ध समाप्त हो गया और हबशियों को स्वतंत्रता मिली। सभी छोटे बड़े हबशियों के लिये यह बड़े महत्व का दिन था। सब लोग बड़ी उत्सुकता से उस दिन की प्रतीक्षा कर रहे थे। कई मास पहले से वे सुना करते थे कि अब उन्हें स्वतंत्रता मिलेगी। डाक और तारों का ताना सा बँध गया था। समाचार बड़ी शीघ्रता से एक गांव से दूसरे गांव तक पहुंचाए जाते थे। धनवान गोरों ने उत्तरीय अमेरिका की सेना के आक्रमण के भय से चांदी आदि के बहुमूल्य पदार्थ घरों में से निकाल कर जंगलों में गाड़ रक्खे थे और उनपर विश्वासपात्र दासों का पहरा नियुक्त कर दिया था। वे लोग भी उत्तरीय अमेरिका की सेना के सिपाहियों का इन सब चीज़ों को ढूंढ़कर, रसद और कपड़े लत्ते आदि से पूरी सहायता देते थे। गुलाम लोग अपनी अपनी कोठरियों में रात रात भर स्वतंत्रता के गीत गाया करते थे। ज्यों ज्यों वह स्मरणीय दिन निकट आने लगा त्यों त्यों ऐसे गानों की

अधिकता होने लगी। उनके अधिकांश गानों में प्रायः स्वतंत्रता का ही उल्लेख होता था। इससे पहले भी वे लोग वही गीत गाया करते थे, पर उस समय उन्हें यह मालूम होता था कि मानों इन गीतों का इस संसार से नहीं बल्कि केवल परलोक से ही संबंध है। पर अब धीरे धीरे उन्हें मालूम होने लगा कि उन गीतों में की स्वतंत्रता इसी संसार और इसी शरीर की स्वतंत्रता है। उस स्मरणीय दिन से पहले वाली रात को सब गुलामों से कह दिया गया था कि कल प्रातःकाल मालिकों के घरों में कोई विलक्षण चमत्कार होगा। उस रात को किसी को भी निद्रा न आई। दूसरे दिन प्रातःकाल ही सब छोटे बड़े हबशी अपने अपने मालिकों के घर बुलाए गए। जेन भी अपने पुत्रों और कन्या को साथ लेकर अपने मालिक के घर गई। उस समय घर के सब लोग कुछ चिंतित दिखाई पड़ते थे, पर उनकी चिंता में खिन्नता ही अधिक थी, द्वेष नहीं था। उस समय वाशिंगटन के मन में यही धारणा हुई थी कि वे लोग अपने दासों के प्रेम और ममत्व के कारण ही अधिक चिंतित थे। उस दिन प्रातःकाल एक विदेशी सज्जन ने जो कदाचित् संयुक्त राज्य का कोई कर्म्मचारी था, एक छोटी सी वक्तृता दी और दासत्व-प्रथा के उठा देने का घोषणापत्र पढ़ सुनाया। तदुपरांत यह कहा गया कि अब सब छोटे बड़े हबशी स्वतंत्र हैं और जहां चाहें वहां जा सकते हैं। जेन की माता ने अपने पास खड़े हुए बालकों का चुंबन किया, उस समय उसकी

आंखों से प्रेमाश्रु बह रहे थे। उसने अपने बालकों को सब बातों का अर्थ भली भांति समझा दिया और कहा कि हम सब लोग बहुत दिनों से ईश्वर से यह दिन दिखलाने की प्रार्थना कर रहे थे और मुझे यह आशा नहीं थी कि अपने जीवन में यह दिन देखूंगी।

थोड़ी देर तक सब लोगों को बहुत आनंद हुआ और वे नाचते कूदते रहे। पर अपने पुराने मालिकों पर उन्हें कुछ दया भी आती थी, इसलिये उनका यह आनंद अधिक समय तक न रहा। अपनी अपनी झोपड़ियों में आने पर उन्हें अनेक प्रकार की चिंताओं ने आ घेरा। अब उन्हें सब से अधिक अपने और अपने बाल बच्चों के भरण पोषण की चिंता हुई। उनकी दशा ठीक एक ऐसे बालक के समान हो गई जिसे बिलकुल असहाय बना कर, घर से बाहर किसी जंगल में छोड़ दिया गया हो। जिस प्रश्न पर अंगरेज लोग कई शताब्दियों से विचार कर रहे थे, वह प्रश्न थोड़ी ही देर में मानों हबशियों पर छोड़ दिया गया। यह प्रश्न गृहस्थी, जीविका और शिक्षा आदि का था। ऐसी दशा में यदि थोड़ी ही देर में हबशियों की झोपड़ियों में नाच गाना बंद होकर उदासीनता छा गई तो इसमें कोई आश्चर्य्य की बात नहीं है। उस समय बहुत से लोगों को यह स्वतंत्रता अपने अनुमान से कहीं अधिक भारी मालूम होने लगी। उनमें से बहुत से लोग सत्तर अस्सी वर्ष की अवस्था तक पहुंच चुके थे और अपने जीवन का अधिकांश

समाप्त कर चुके थे। यद्यपि उनके लिये रहने के स्थान की कमी न थी पर तौ भी विदेश और विदेशियों में जीविका का प्रबंध करना उनके लिये कठिन था, अपने पुराने स्वामियों और उनके बाल बच्चों के प्रति उनकी विलक्षण निष्ठा थी। कुछ लोगों ने अपने मालिकों के साथ पचास साठ वर्ष बिताए थे, और इस लिये उन्हें छोड़ कर उनसे अलग होना कुछ सहज काम न था। धीरे धीरे बूढ़े गुलाम एक एक करके अपने अपने मालिकों के घर यह पूछने के लिये जाने लगे कि अब हम लोग भविष्य में क्या करें?

२—बाल्यावस्था।

स्वतंत्रता प्राप्त करने पर समस्त दक्षिण अमेरिका के गुलामों ने एकमत होकर अपने संबंध में दो मुख्य बातें निश्चित कीं। एक तो यह कि सब लोगों को अपना अपना नाम बदल लेना चाहिए और दूसरे यह कि अपनी स्वतंत्रता के चिह्न-स्वरूप, यदि अधिक दिनों के लिये नहीं तो, कम से कम एक सप्ताह के लिये अपना निवास-स्थान अवश्य बदल देना चाहिए। उस समय तक गुलाम लोग अपने अपने मलिकों के उपनाम पर ही अपने नाम रखते थे, पर अब उन सभों ने तुरंत अपने अपने नाम बदल डाले। स्वतंत्रता का यह मानों पहला चिह्न था। जिस समय दासत्व-प्रथा प्रचलित थी उस समय लोग गुलामों को खान अथवा सुलन कहकर पुकारा करते थे। यदि उसके

स्वामी का नाम हेचर या इसी प्रकार और कुछ होता तो लोग उसे कभी कभी जान हेचर या हेचर्स जान पुकारा करते थे। पर जब उन लोगों में यह विचार उत्पन्न हुआ कि एक स्वतंत्र मनुष्य के लिये जान हेचर या हेचर्स जान आदि नाम उपयुक्त नहीं हैं तो उन्होंने अपना नाम बदल कर जान एस० लिंकन जान एस० शर्मन आदि रख लिया। गुलामों के उपनाम के पहले एस० शब्द निरर्थक ही था और हबशियों ने उसे अपनी पदवी की भाति अपने नामों के साथ लगा लिया था।

ऊपर कहे अनुसार बहुत से हबशियों ने स्वतंत्रता का उपभोग करने के लिये थोड़े दिनों के लिये अपना पुराना निवास-स्थान छोड़ दिया। कुछ दिनों तक बाहर रह कर बहुत से गुलाम अपने पुराने निवास-स्थान पर फिर लौट आए और अपने पहले के मालिकों से कुछ नई शर्तें करके पुन उन्हीं के पास रहने लगे। वाशिंगटन के बड़े भाई का बाप और वाशिंगटन का सौतेला बाप एक दूसरे मालिक का गुलाम था। वह वाशिंगटन और उसकी माता के यहां बहुत ही कम आता था। जिस समय युद्ध हो रहा था उस समय वह उत्तर अमेरिका के पश्चिमी वर्जीनिया नामक प्रदेश में चला गया और वहीं के एक नये राज्य में बस गया। दासत्व प्रथा का अंत हो जाने पर उसने वाशिंगटन की माता को अपने पास बुलवा भेजा था। उस समय वर्जीनिया और पश्चिमी वर्जीनिया के बीच का पहाड़ी रास्ता बहुत ही दुर्गम और

कठिन था। जेन को अपने बाल बच्चों सहित सैकड़ों मील पैदल चलना पड़ा था। इससे पहले उन लोगों को कभी अपने निवास स्थान से अधिक दूर न जाना पड़ा था, इसलिये यह लंबा प्रवास उन लोगों को बहुत महत्त्व का मालूम पड़ा। अपने पुराने मालिकों और परिचितों को छोड़ते समय भी उन्हें बहुत दुःख हुआ था। बहुत दूर विदेश में रहकर भी उन लोगों ने अपने पुराने मालिकों के साथ बराबर पत्र व्यवहार रक्खा था।

मार्ग में अनेक प्रकार के कष्ट सहते हुए ये लोग माल्डन नामक गाँव में पहुंचे। उन दिनों उस प्रांत में नमक की बहुत सी खानें थीं। वाशिंगटन का सौतेला बाप भी नमक की एक भट्ठी में काम करता था। उसने पहले से ही अपनी स्त्री और बाल बच्चों के लिये एक छोटी सी कोठरी ले रक्खी थी। यह कोठरी भी एक गंदे और निकृष्ट स्थान में थी। उसके आस पास बहुत से हबशियों और ग़रीब गोरों की झोपड़ियां थीं। उन के पड़ोसी प्रायः मदिरा पीकर लड़ाइयां झगड़े तथा अनेक प्रकार के अनाचार आदि किया करते थे। उस गांव के प्रायः सभी लोगों का किसी न किसी रूप में नमक की खानों से संबंध था। वाशिंगटन तथा उनके बड़े भाई जान दोनों को उनके पिता ने नमक की भट्ठी में किसी काम पर लगा दिया। वाशिंगटन को वहाँ नित्य प्रातः काल चार बजे से अपने काम में लग जाना पड़ता था।

उसी स्थान पर वाशिंगटन ने पहले पहल लिखना पढ़ना सीखा। प्रत्येक नमक भरने वाले को अपने पीपे पर एक निश्चित अंक लिखना पड़ता था। वाशिंगटन के सौतेले पिता का अंक १८ था। नित्य काम बंद होने के समय एक कर्म्मचारी आकर उनके सब पीपों पर १८ का अंक लिख जाता था। यहीं वाशिंगटन ने १८ का अंक पहचानना सीखा। १८ के सिवा व न तो और कोई अंक लिख ही सकते थे और न पहचान ही सकते थ। उसी समय से वाशिंगटन की पढ़ने लिखने की इच्छा बहुत अधिक बढ़ी वे चाहते थे कि अधिक नहीं तो कम स कम पुस्तकें और समाचार पत्र पढ़ने की योग्यता उनमें अवश्य आ जाय। एक दिन उन्होंने अपनी माता से किसी प्रकार एक पुस्तक ला देने की भी प्रार्थना की। तदनुसार उसने उन्हें स्पेलिंग-बुक नामक एक पुस्तक ला दी जिसमें केवल A, B, C, D, (आ० बी० सी० डी०) आदि अर्थ रहित शब्द थे। पुस्तक तो मिल गई पर कोई पढ़ाने वाला उन्हें दिखाई न दिया। वहां रहने वाले कालों में से कोई पढ़ना लिखना न जानता था और गोरों के पास जाने में वे बहुत घबराते थे। इसलिये उन्होंने बड़ी कठिनता से किसी न किसी प्रकार कुछ सप्ताहों में वह स्वयं ही पढ़ डाली। पढ़ने में उन्हें थोड़ी सी सहायता अपनी माता से अवश्य मिला करती थी। यद्यपि उनकी माता स्वयं कुछ पढ़ी लिखी न थी पर तो भी वह इतना अवश्य चाहती थी कि उसके बालक खूब

पढ़ लिखकर अच्छे विद्वान हों। इसी बीच में ओहियो राज्य से एक पढ़ा लिखा हबशी लड़का उन में आ गया। जब माल्डन के निवासियों को यह बात मालूम हुई तो वे नित्य संध्या समय उसके पास एक समाचार पत्र लेकर जाने और उसमें दिया हुआ सब वृत्तांत उससे सुनने लगे। उस समय वहां पुरुषों, स्त्रियों और बालकों की खूब भीड़ हुआ करती थी। वाशिंगटन की पढ़ने लिखने की इच्छा अब और भी बढ़ गई और वे उस बालक के बराबर होने की इच्छा करने लगे।

इसी अवसर पर मोल्डन के निवासियों ने अपने गांव में हबशी बालकों के लिये एक छोटी पाठशाला खोलने का विचार किया। वर्जीनिया के उस भाग में हबशी बालकों के लिये खुलने वाली यह पहली ही पाठशाला थी, इस लिये चारों ओर खूब अंदोलन हुआ। पर सब में बडी कठिनता वहां शिक्षक की थी। पहले समाचार पत्र पढ़कर सुनानेवाले उक्त बालक को शिक्षक बनाने का विचार हुआ पर उसकी अवस्था बहुत ही कम थी, इसलिये यह विचार छोड़ देना पड़ा। उसी अवसर पर उस गांव में एक और शिक्षित हबशी आ गया, वह पहले कुछ दिनों तक सेना में काम कर चुका था। इस लिये उस पाठशाला का पहला अध्यापक वही नियत हुआ, गांव के सब लोगों ने उस शिक्षक को प्रति मास कुछ निश्चित धन और एक एक दिन भोजन देना स्वीकार किया।

इससे उस शिक्षक को भी बहुत सुभीता हुआ। शिक्षक पारी पारी से लोगों के घर जाकर पढ़ाता और उस दिन वहीं भोजन करता था। वाशिंगटन अपने यहां की पारी के दिनों की बड़ी उत्सुकता से प्रतीक्षा किया करते थे।

किसी जाति या समाज के सब लोगों का मिल कर शिक्षा की ओर ध्यान देना ही उसकी उन्नति में मूल सहायक होता है। माल्डन के हबशियों ने शिक्षा के प्रचार में जितना उत्साह दिखलाया था उसका ठीक ठीक अनुमान वेही लोग कर सकते हैं जो उस समय वहां उपस्थित थे। वाशिंगटन अपने भाई सहित नित्य पाठशाला में जाकर पढ़ने लगे। युवकों और अधिक अवस्था वालों को भी उस समय पाठशाला में जाकर पढ़ने में किसी प्रकार का सकोच न होता था। शिक्षा का चाव लोगों के मन में इतना अधिक बढ़ा कि लोग रात को भी पाठशाला में जाकर पढ़ने लगे। बड़े बूढ़े लोग भी यही चाहते थे कि वे मरने से पूर्व बाइबिल पढ़ने के योग्य हो जाय। पुरुषों के सिवा बड़ी बड़ी स्त्रियां भी पढ़ने के लिये पाठशाला में जाने लगीं। इसके अतिरिक्त एक और पाठशाला भी स्थापित हुई जो केवल रविवार को खुलती थी। ये तीनों पाठशालाएं विद्यार्थियों से खूब भरी हुई होती थीं, और उनमें स्थान के अभाव के कारण बहुत से विद्यार्थियों को यों ही लौट जाना पड़ता था।

लेकिन इतना होने पर भी वाशिंगटन की शिक्षा प्राप्त करने की इच्छा पूरी न हो सकी। उसका सौतेला बाप यह नहीं चाहता था कि वह भट्ठी का काम छोड़कर पढ़ने के लिये पाठशाला में जाय। इससे उनकी सब आशाओं पर पानी फिर गया। सवेरे और संध्या समय लोगों को पाठशाला जाते और वहां से आते देख उनका मन और भी उद्विग्न होता था। लेकिन उनकी विद्या-अध्ययन की इच्छा बहुत ही प्रबल थी इसलिये उन्होंने किसी न किसी प्रकार लिखने पढ़ने का दृढ़ संकल्प कर लिया। स्पेलिंग बुक के पाठ वे जल्दी जल्दी याद करने लगे। इस काम में उनकी माता की भी बहुत सहानुभूति और सहायता थी, इसलिये थोड़े ही दिनों में उन्होंने रात के समय शिक्षक से पढ़ने का प्रबंध कर लिया। उनकी रात की पढ़ाई और बालकों की दिन की पढ़ाई की अपेक्षा कहीं अच्छी होने लगी। अपने निज के अनुभव के कारण उन्हें रात्रि-पाठशाला की उपयोगिता पर अधिक विश्वास हो गया और इसी लिये आगे चलकर उन्होंने हैंपटन और टस्केजी में रात्रि-पाठशाला से ही अधिक संबंध रक्खा। पर उस समय लड़कपन बुद्धि के कारण वे दिन की पाठशाला में जाना चाहते थे, और इसके लिये जहां तक हो सका वे बराबर उद्योग करते गए और अंत में उन्हें कुछ महीनों के लिये दिन की पाठशाला में जाने की आज्ञा भी मिल ही गई। वे बहुत तड़के उठ कर भट्ठी में जाकर नौ बजे तक काम करते

और दिन भर पाठशाला में पढ़ कर संध्या को दो घंटे काम करने के लिये फिर भट्ठी में लौट आते।

पाठशाला, भट्ठी से कुछ दूर थी और नौ बजे खुलती थी। इस लिये जब वे काम से छुट्टी पाकर वहां पहुंचते तो उस समय तक दूसरे बालकों का बहुत सा पाठ हो जाया करता था। यह कठिनता दूर करने के लिये उन्होंने एक ऐसा उपाय किया था, जिसके लिये बहुत से लोग उन्हें दोषी ठहरा सकते हैं। वे नित्य प्रात काल आफिस की घडी को आध घंटा तेज कर देते थे। यद्यपि उसी घडी के अनुसार भट्ठी के सैंकडों आदमियों को आध घंटा पहले छुट्टी हो जाती थी, पर विद्या प्रेमी वाशिंगटन ठीक समय पर पाठशाला में पहुंच जाते थे। बालक वाशिंगटन इस कार्रवाई से किसी को कुछ हानि नहीं पहुंचाना चाहते थे। केवल ठीक समय पाठशाला में पहुंचना ही उनका मुख्य उद्देश्य था। उनकी निष्ठा सत्य पर बहुत अधिक है इसी लिये उन्होंने आत्म-चरित में इस घटना का स्पष्ट उल्लेख कर दिया है। जब भट्ठी के मनेजर को मालूम हुआ कि घडी रोज आध घंटे तेज हो जाती है तो उसने उसे एक बक्स में रखकर उस पर ताला लगा दिया।

पाठशाला में और लडके तो टोपी पहन कर जाते थे पर वाशिंगटन के पास कोई टोपी ही न थी। उस समय तक वे यह भी न जानते थे कि टोपी पहनने की भी कोई आवश्यकता हुआ करती है। उन्होंने अपनी माता से बाजार से

कोई पुरानी टोपी खरीद कर ला देने के लिये कहा, पर धनाभाव के कारण वह उनकी यह इच्छा पूरी न कर सकी। इसलिये विवश होकर उसने एक साधारण कपड़े को काट कर उसकी एक टोपी बना दी और वाशिंगटन ने बड़े अभिमान से अपने जीवन में पहली बार वह टोपी पहनी। पर उस टोपी से उन्हें जो शिक्षा मिली उसे वे आज तक नहीं भूले, और सदा समय पड़ने पर वे दूसरों को यही शिक्षा देते रहे हैं। टोपी खरीदने के लिये उनकी माता के पास धन नहीं था और उसके लिये किसी से उधार मांगना उसने उचित न समझा। उस समय जो बालक बाजार की बनी बढ़िया टोपी पहनते थे और वाशिंगटन की टोपी की हँसी उडाते थे, उनमें से बहुत से लोग वाशिंगटन के देखते ही देखते जेल चले गए और बहुत से इतने दरिद्र होगए कि उनमें किसी प्रकार की टोपी खरीदने की सामर्थ्य ही न रह गई।

बाल्यावस्था में वाशिंगटन को लोग बुकर कहा करते थे। जब पाठशाला में हाजरी के समय उन्होंने दूसरे बालकों के दो दो नाम सुने तो उन्हें भी अपना दोहरा नाम रखने की आवश्यकता मालूम हुई। जब रजिस्टर में लिखने के समय शिक्षक ने उनका नाम पूछा तो उन्होंने बड़े शांत भाव से कह दिया—'बुकर वाशिंगटन'। यद्यपि इस नाम की कल्पना इन्होंने स्वयं ही उसी समय की थी, पर उन्हें ऐसा मालूम

होता था कि मानो आरंभ से ही उनका यही नाम रक्खा गया है। कुछ समय के उपरांत उन्हें मालूम हुआ कि उनकी माता ने उनका नाम 'बुकर टेलिफेरो रक्खा था, इसलिये उन्होंने फिर से अपना नाम 'बुकर टेलिफेरो वाशिंगटन रक्खा।

दिन में पाठशाला जाने के लिये उन्हें बहुत ही थोडा समय मिलता था और वे ठीक समय पर पहुंच भी न सकते थे, इसलिये कुछ ही दिनों में उनका दिन के समय पाठशाला जाना बंद हो गया और वे फिर दिन भर भट्ठी में काम करने लगे। कभी कभी उन्हें रात को पढ़ाने के लिये कोई शिक्षक मिल जाता और वे उसी से थोडा बहुत पढ़ लेते। पर यदि अभाग्यवश वह शिक्षक उन्हीं के समान कम पढ़ा लिखा होता तो वे बहुत दुःखित होते। कभी कभी उन्हें अपना पाठ सुनाने के लिये रात के समय कई कई मील पैदल आना पडता था। यद्यपि उनके दिन बड़ी ही निराशा और बुरी अवस्था में बीतते थे, पर तो भी युवावस्था में सदा उनका एक दृढ़ निश्चय और उद्देश्य बना रहा और वह निश्चय या उद्देश्य शिक्षा प्राप्त करना था।

नमक की भट्ठी में कुछ दिनों तक काम करने के बाद उन्हें कोयले की खान में काम मिला। इस काम से वे बहुत घबराया करते थे। कोयले की खान में काम करने से सारा शरीर बिलकुल काला हो जाता था और दिन भर काम करने के बाद संध्या समय उनके लिये नहाना बहुत कठिन

होता था। दूसरा कारण उनके घबराने का यह था कि खान के मुहाने से काम करने के स्थान तक आने के लिये उन्हें एक मील घोर अंधकार में चलना पड़ता था। खान के अंदर बहुत सी शाखाएं थीं इसलिये वे प्रायः अपना मार्ग भूल जाया करते थे। यदि रास्ते में कभी उनके हाथ की बत्ती बुझ जाती और उनके पास दियासलाई न होती तो उन्हें घंटों भटकना पड़ता। इसके अतिरिक्त कोयले की खान में और भी अनेक प्रकार की विपत्तियों की संभावना थी। उस समय बहुत ही छोटी अवस्था के बालकों से खानों में काम लिया जाता था पर उनके पढ़ाने लिखाने का कुछ भी प्रबंध न होता था। सबसे बड़ा दोष इसमें यह था कि खान में काम करनेवालों की शारीरिक और मानसिक अवस्था बहुत बिगड़ जाती थी और बड़े होने पर वे लोग किसी दूसरे काम के योग्य न रह जाते थे।

बाल्यावस्था में वाशिंगटन के मन में प्रायः इस प्रकार के विचार उठते थे कि यदि उनका जन्म किसी उच्च कुल के गोरे अमेरिकन के घर में हुआ होता तो उन्हें कांग्रेस के सभासद, गवर्नर, बिशप, या प्रेसिडेंट होने में किसी प्रकार की कठिनता न होती और वे बड़े सुख से रह कर उन्नति कर सकते। पर वास्तव में उनके ये विचार ठीक न थे। यदि उनका जन्म इन्हीं विचारों के अनुसार किसी उच्च कुल के गोरे के घर हुआ होता तो बहुत संभव था कि वे अपनी

कुलीनता के घमंड में ही रह जाते और अपना वर्त्तमान उन्नत अवस्था तक न पहुंच सकते। ज्यों ज्यों उनकी अवस्था बढ़ती गई त्यों त्यों उनके ये विचार बदलते गए और अंत में उन्होंने यही निश्चय किया कि यदि मेरा जन्म किसी उच्च कुल में नहीं हुआ तो कम से कम अपने बाहु बल से मुझे कोई ऐसा सुकृत्य अवश्य करना चाहिए कि जिसके कारण मेरे वंशजों को मेरा कुछ अभिमान हो। उनका सिद्धांत है कि किसी के यश का मूल्य निश्चित करने के लिये यह न देखना चाहिए कि वह किस उच्च पद तक पहुंच गया है, बल्कि यह देखना चाहिए कि उस पद का यश प्राप्त करने में उसे कितनी अड़चनें और कठिनाइयाँ झेलनी पड़ी हैं। कठिनाइयाँ झेलने से मनुष्य में सब प्रकार की शक्ति, आत्म विश्वास और योग्यता की वृद्धि होती है। लेकिन जो लोग उच्च कुल या जाति के कारण बिना किसी प्रकार की कठिनता का सामना किए ही बड़ा पद पा जाते हैं, उन्हें उक्त गुणों से वंचित रहना पड़ता है। जो लोग अपनी योग्यता का ध्यान न रख कर केवल उच्च जातियों या कुल में उत्पन्न होने के कारण बड़े बड़े अधिकार मांगते हैं, उनकी दशा पर वाशिंगटन को बहुत दुःख होता है और दया आती है, क्योंकि यह एक निश्चित सिद्धांत है कि केवल उच्च कुल में उत्पन्न होने के कारण कोई मनुष्य उन्नति नहीं कर सकता, और यदि किसी मनुष्य में वास्तविक योग्यता हो तो वह नीच जाति में उत्पन्न

होने के कारण ही कभी पीछे नहीं रह सकता। योग्यता अथवा श्रेष्ठता,—चाहे किसी वर्ण या जाति के मनुष्य में हो, अंत में अवश्य यश और विजय प्राप्त कराती है। प्रत्येक मनुष्य और जाति को इस सिद्धांत पर दृढ़ विश्वास रख कर अपनी योग्यता बढ़ाने का उद्योग करना चाहिए।

पश्चिम वर्जीनिया में पहुंचने पर वाशिंगटन की माता ने बहुत दरिद्र होने पर भी एक अनाथ बालक को अपने यहां रख लिया था। उसका नाम जेम्स० बी० वाशिंगटन रक्खा गया था।

३—शिक्षा के लिये उद्योग।

एक दिन कोयले की खान में काम करते समय वाशिंगटन ने दो बेलदारों से सुना कि वर्जीनिया में किसी स्थान पर हबशियों के लिये एक बड़ी पाठशाला खुलनेवाली है. वहां साधारण शिक्षा के अतिरिक्त योग्य दरिद्र बालकों को शिल्प आदि की शिक्षा दी जायगी और उनसे कुछ काम लेकर, व्यय निर्वाह के लिये उन्हें कुछ वृत्ति भी दी जायगी। उस विद्यालय का नाम था—हैंपटन नार्मल ऐंड एग्रीकलचरल इंस्टीट्यूट। इसका वर्णन सुन कर वाशिंगटन को उसमें प्रविष्ट होने के लिये बहुत उत्सुकता होने लगी, उन्हें ऐसा अनुमान होने लगा कि संसार में सब में अधिक महत्व का स्थान यही विद्यालय होगा और उसके सामने स्वर्गसुख भी भी कोई

गणना न होगी, यद्यपि उस समय उन्हें यह नहीं मालूम था कि यह विद्यालय कहां और कितनी दूर है पर तौ भी उन्होंने किसी न किसी प्रकार वहां पहुचने का दृढ़ सकल्प कर लिया। अब उन्हें दिन रात हैंपटन के उसी विद्यालय में पहुचने की चिंता रहने लगी।

इस घटना के कई महीने बाद वाशिंगटन ने सुना कि खान और भट्ठी के मालिक जनरल लेविस रफनर के मकान में कोई जगह खाली हुई है। जनरल रफनर की स्त्री का नाम वायोला रफनर था और वह उत्तर अमेरिका के वरमाट नामक स्थान में रहती थी। वायोला रफनर के विषय में यह प्रसिद्ध था कि वह अपने नौकरों के साथ बहुत कठोर व्यव हार करती है और कोई नौकर दो तीन महीने से अधिक उसके पास नहीं ठहर सकता। वाशिंगटन ने खान का काम छोड़ कर कुछ दिनों तक वायोला रफनर के यहा काम करना निश्चय किया और अपनी माता से प्रार्थना करके उसकी सिफारिश से पांच डालर मासिक पर उन्होंने उस पद पर अपनी नियुक्ति कराली। लेकिन श्रीमती रफनर के कठोर व्य वहार की बातें सुन कर वाशिंगटन इतने भयभीत हो गए थे कि जब पहले पहल वे उसके सामने गए तो थरथर काँपने लगे थे। पर कुछ सप्ताह काम करने के बाद वे उनके स्वभाव से भली भांति परिचित हो गए। उन्होंने समझ लिया कि घर की सब चीज़ें स्वच्छ रखने सब कार्य्य जल्दी और

नियमित रूप से करने तथा सब व्यवहारों में प्रामाणिक और स्पष्ट रहने से ही स्वामिनी प्रसन्न रहती हैं, और यदि सब काम होशियारी से किए जांय तो वे कभी कठोर व्यवहार नहीं करतीं।

वाशिंगटन ने प्रायः डेढ़ वर्ष तक वहां काम किया। इस बीच में उन्होंने नियमित रूप से और स्वच्छतापूर्वक सब कार्य्य करने की अच्छी शिक्षा प्राप्त करली, घर और वहां की सब चीज़ें वे सदा बहुत स्वच्छ रखते थे और कभी किसी चीज़ पर मैल जमने या दाग पड़ने न देते थे। इसी लिये वायोला रफनर उनसे बहुत अच्छा व्यवहार करने लगी और वे भी उसे अपना दयालु मित्र समझने लगे। उनकी रुचि पढ़ने लिखने की ओर अधिक देख कर, जाड़े के दिनों में वायोला उन्हें प्रायः पाठशाला जाने के लिये एक घंटे की छुट्टी दे दिया करती थी। पढ़ने लिखने के लिये अधिक समय उन्हें प्रायः रात को ही मिला करता था। इस काम में स्वामिनी उन्हें प्रायः सहायता और उत्तेजना दिया करती थी। वहीं उन्होंने पहले पहल कुछ छोटी मोटी पुस्तकें संग्रह करके अपने छोटे से पुस्तकालय का आरंभ किया।

यद्यपि वायोला रफनर के यहां वे बहुत सुख से रहते थे, पर तो भी हैंपटन जाने की उनकी इच्छा ज्यों की त्यों बनी रही। उस समय तक उन्हें इस बात की कुछ भी कल्पना न थी कि हैंपटन किस ओर है और वहां जाने में कितना

व्यय लगेगा। सन् १८५२ की वर्षा ऋतु में उन्होंने इंग्लैंड जाना चाहा, पर उनकी माता के सिवा और कोई भी उनके इस विचार से सहमत न हुआ। उन्होंने अपनी योग्यता से बढ़ कर साहस किया था इसलिये उनकी माता को कुछ दु:ख भी हुआ। तौभी किसी न किसी प्रकार उन्होंने उनसे इंग्लैंड जाने की आज्ञा ले ही ली। इस कार्य्य के लिये उन्होंने पहले से ही कुछ धन सग्रह कर रक्खा था, पर उनके सौतेले बाप तथा अन्य कुटुंबियों ने वह धन खर्च कर डाला और उसमें से केवल थोड़े से डालर बच रहे। कपड़े आदि मोल लेने और मार्ग के व्यय के लिये उनके पास यथेष्ट धन नहीं था। उनके भाई जान ने यथाशक्ति उन्हें सहायता दी, पर उसकी सहायता का कुछ अधिक उपयोग न हो सका, क्योंकि उसे स्थान में अधिक वेतन न मिलता था और जो कुछ मिलता भी था उसका अधिकांश गृहस्थी में ही लग जाता था। हां, वहां के बहुत से वृद्ध हबशियों ने उनके साथ उस अवसर पर बहुत सहानुभूति दिखलाई थी और उन्हें अच्छा उत्साह दिलाया था उनमें से किसी ने उन्हें निक्ल (ढाई आने का सिक्का), किसी ने चौथाई डालर और किसी ने दस्ती रूमाल दिए थे।

अंत में निश्चित तिथि को उन्होंने इंग्लैंड की यात्रा की। उस समय अचानक उनकी माता बहुत बीमार हो गई थी और उसके बचने की कोई आशा नहीं थी। इस कारण दोनों

के लिये यह वियोग बहुत ही दुस्सह हुआ। तो भी उनकी माता ने बहुत धैर्यपूर्वक अपने आपको सँभाला और प्रसन्नता से उन्हें जाने की आज्ञा दी। माल्डन से हैंपटन प्रायः पांच सौ मील दूर था। मार्ग में रेल बहुत थोड़ी दूर तक गई थी। घर से निकलने के कुछ ही घंटे बाद उन्हें किसी प्रकार मालूम हुआ कि उनके पास मार्ग व्यय के लिये यथेष्ट धन नहीं है। पर तो भी वे ईश्वर पर विश्वास रख कर आगे बढ़े। एक दिन संध्या के समय उनकी घोड़ा गाडी एक छोटी सरांय में पहुंची, उस गाड़ी में वाशिंगटन के अतिरिक्त शेष सभी यात्री गोरे थे। जब उस सरांय में सब यात्रियों के ठहरने और भोजन आदि की व्यवस्था हो गई तो वाशिंगटन भी वहां के प्रबंधकर्त्ता के पास गए। यद्यपि उस समय उनके पास एक पैसा भी नहीं था पर तो भी उन्हें आशा थी कि वह किसी न किसी प्रकार सरांयवाले को प्रसन्न करके उससे सरांय में ठहरने की आज्ञा ले लेंगे। लेकिन सरांयवाले ने केवल उनके हबशी होने के कारण ही उन्हें सरांय में स्थान देना अस्वीकार किया। उसी दिन उन्हें पहले पहल मालूम हुआ कि गोरे और काले चमड़े में इतना अधिक भेद है। यद्यपि वह प्रदेश पहाड़ी था और वहां सरदी बहुत अधिक पड़ती थी तो भी उन्होंने किसी प्रकार वह रात बिता ही दी। उस समय वे हैंपटन जाने के लिये इतने व्यग्र हो रहे थे कि उन्हें इस अपमानपूर्ण व्यवहार पर विचार करने को अवसर ही न मिला। लेकिन यह घटना वाशिंगटन कभी नहीं भूले!

बहुत सा मार्ग पैदल चल कर और अनेक प्रकार की कठिनाइयां सह कर बहुत दिनों बाद वे रिचमंड नामक नगर में पहुंचे। यहां से हैंपटन ८२ मील रह गया था। रिचमंड में वे आधी रात के समय, दिन भर के थके मांदे और भूखे प्यासे पहुंचे थे। उस दिन से पहले उन्होंने कभी कोई बड़ा नगर नहीं देखा था, इसलिये उन्हें बहुत दुर्दशा भोगनी पड़ी। रिचमंड पहुंचने के समय उनके पास एक पैसा भी न था। न तो उस नगर में उनका कोई परिचित ही था और न वे वहां की गलियां और सड़कें ही जानते थे। रहने की जगह पाने के लिये उन्होंने कई आदमियों से प्रार्थना की, पर सभों ने उनसे किराया मांगा और किराया देने के लिये उनके पास एक पैसा भी न था। इस पर वे कुछ कर्त्तव्य निश्चय न कर सके और इधर उधर गलियों में घूमने लगे। गलियों और सड़कों पर उन्हें बहुत सी दूकानें दिखाई दीं जिन पर भोजन आदि के अच्छे अच्छे पदार्थ सजाए हुए रक्खे थे। पर पास में पैसा न होने के कारण वे कुछ भी न ले सके और वह रात उन्होंने बिना कुछ खाये पीये ही बिता दी।

आधी रात के समय बहुत दूर तक इधर उधर घूमने पर वे बहुत अधिक थक गए और उनमें चलने या खड़े रहने की शक्ति न रह गई। उस समय की अपनी दशा का वर्णन करते हुए वाशिंगटन लिखते हैं—' मैं थक गया, भूखा रहा, सब कुछ हुआ, पर मैं निराश जरा भी न हुआ '। वह रात, उन्होंने

सड़क के बगल में एक पटरी पर सोकर बिताई। कई दिनों से उन्हें भरपेट अन्न नहीं मिला था, इसलिये दूसरे दिन जब वे सोकर उठे तो उन्हें बहुत अधिक भूख लगी। कोई काम ढूंढने के अभिप्राय से वे इधर उधर घूमने लगे। थोड़ी देर बाद उन्हें पास ही एक जहाज दिखाई पड़ा जिस पर से लोहा उतर रहा था। उन्होंने तुरंत जहाज के कप्तान के पास जाकर उसे अपनी दशा सुनाई और काम पाने की प्रार्थना की। कप्तान ने भी कृपा कर उनकी प्रार्थना स्वीकार कर ली और उन्हें काम दे दिया। बहुत देर तक काम करने के बाद उन्हें जलपान के लिये यथेष्ट पैसे मिले। कई दिनों से भूखे होने के कारण बड़ी रुचि से उन्होंने थोड़ा भोजन किया और वे फिर काम में लग गए। उनके काम से प्रसन्न होकर कप्तान ने उन्हें आज्ञा दे दी कि जब तुम्हारी इच्छा हो तब तुम आकर थोड़ा बहुत काम कर दिया करो। इस प्रकार काम पाकर वे बहुत प्रसन्न हुए और कई दिनों तक यहीं काम करते रहे। लेकिन यहां जो कुछ मजदूरी उन्हें मिलती थी, वह सब खाने पीने में ही खर्च हो गई, इसलिये हैंपटन जाने के लिये वे यथेष्ट धन संग्रह न कर सके। इसलिये उन्होंने अपने भोजन का व्यय कम कर दिया और नित्य कुछ पैसे बचाना आरंभ किया। रात के समय वे उसी पटरी पर सोया करते थे, जिस पर पहली रात को सोये थे। कुछ वर्षों बाद जब वे पुनः लौट कर रिचमंड आए तो उस समय कई हजार आदमियों ने

उनका बहुत स्वागत किया था। पर उस अवसर पर भी उनका ध्यान उन लोगों की अपेक्षा अपने पहले सोनेवाले स्थान की ओर अधिक था।

जब वाशिंगटन ने यथेष्ट मार्गव्यय संग्रह कर लिया तो वे जहाज के कप्तान को उनकी कृपा के लिये धन्यवाद देकर हैंपटन की ओर चल पड़े। मार्ग में कोई घटना नहीं हुई और वे सकुशल हैंपटन पहुंच गए। वहां पहुंचने पर उनके पास केवल ५० सेंट (एक रुपया नौ आने) बच रहे थे। उसी छोटी रकम से उन्होंने अपनी शिक्षा प्रारंभ करदी। यद्यपि हैंपटन तक पहुंचने में उन्हें अनेक प्रकार के कष्ट सहने पड़े थे पर जब उन्होंने दूर से हैंपटन विद्यालय के तिमंजले भवन के दर्शन किए तो उनका सारा परिश्रम मानो सफल हो गया। उस भवन को देख कर उनके हृदय पर बहुत ही अच्छा परिणाम हुआ। उन्होंने अनुभव किया कि उससे बढ़ कर सुंदर इमारत उन्होंने पहले कभी न देखी थी। उस इमारत को देखते ही उन के शरीर में मानों नवीन जीवन का संचार हो आया। अब उन्हें जीवन का उद्देश्य भी बिलकुल नवीन मालूम होने लगा। उस समय उन्होंने स्वर्ग-सुख का अनुभव करके मन में दृढ़ निश्चय कर लिया कि भविष्य में वे यथासाध्य जगत के कल्याण और उपकार करने की शक्ति संपादन करने में कभी किसी प्रकार की त्रुटि न करेंगे।

हैंपटन-विद्यालय में पहुंच कर वे सब से पहले वहां की मुख्य अध्यापिका के पास किसी दरजे में भर्ती होने के लिये गए। पर इधर कई दिनों से उन्होंने न तो स्नान ही किया था और न कपड़े ही बदले थे, यहां तक कि भर पेट भोजन भी नहीं किया था, इसलिये उनकी आकृति और उनका वेष देख कर मुख्य अध्यापिका कुछ हिचकी और थोड़ी देर तक चुप चाप कुछ सोचती रही। वाशिंगटन भी उनके हृदय का भाव समझ गए। इसलिये उन्होंने अपनी योग्यता प्रकट करने के लिये अनेक प्रकार के उपाय और उद्योग किए। इसी बीच में और भी कई विद्यार्थी वहां आगए और उन सब को अध्यापिका ने भर्ती कर लिया। वाशिंगटन मन ही मन बहुत दुखी हुए। दुखी होने का मुख्य कारण यह था कि उस समय उन्हें पूर्ण विश्वास था कि यदि उन्हें अपनी योग्यता दिखलाने का अवसर दिया जाय तो वे अध्यापिका को भली भांति संतुष्ट कर देंगे।

इसी प्रकार कई घंटे बीत जाने पर वहां की मुख्य अध्यापिका ने वाशिंगटन से कहा–"इस कमरे को झाड़ू देकर अच्छी तरह साफ कर दो।" वाशिंगटन का मनोरथ पूर्ण हुआ और उन्हें अपनी योग्यता दिखलाने का अवसर मिला। श्रीमती रफनर के यहां रह कर उन्होंने इस काम की बहुत अच्छी शिक्षा पाई थी। तुरंत जाकर उन्होंने उस कमरे में तीन बार झाड़ू दिया, कुरसी, मेज़, दीवार आदि को खूब साफ किया, चीज़ें क्रम से उठाकर उनके नीचे की धूल साफ की और

मारे कमरे को बहुत स्वच्छ कर दिया। वह भली भांति समझते थे कि उनका सारा भविष्य इसी काम को उत्तमतापूर्वक करने पर ही निर्भर है। कमरे को अच्छी तरह साफ करके उन्हों ने जाकर अध्यापिका को सूचना दी। उनके साथ आकर अध्यापिका ने कमरे को चारों ओर से भली भांति देखा और रुमाल से कुरसी, टेबुल आदि रगड़ कर देखे। जब उसे निश्चय होगया कि किसी चीज़ पर जरा भी धूल नहीं है तो उसने बहुत शांत होकर कहा—'मैं समझती हूं कि तुम इस विद्यालय में भर्ती होने के योग्य हो।"

यह सुनते ही वाशिंगटन ने अपने आप को बहुत ही भाग्यवान और धन्य समझा। कोठरी में झाड़ू देना ही, उनकी कालिज की प्रवेश परीक्षा थी। यद्यपि इसके बाद वे अनेक परीक्षाओं में उत्तीर्ण हुए पर इस परीक्षा को उन्हों ने सदा सर्वोत्तम समझा। विद्यालय में प्रविष्ट होने के लिये जैसी कठिनता का सामना वाशिंगटन को करना पड़ा था, उसकी समता और देशों के विद्यालयों में बहुत ही कम मिलेगी। पर हेंपटन के प्रविष्ट होने वाले विद्यार्थियों को प्रविष्ट होने के समय प्रायः ऐसी ही परीक्षाएं देनी पड़ती थीं। इस प्रकार की परीक्षाओं से यह मालूम हो जाता था कि विद्यार्थी में कितनी योग्यता है और विद्याभ्यास के लिये उसका उत्साह कहां तक बढ़ा हुआ है। फल यह होता था कि केवल बहुत अधिक योग्य और विद्याप्रेमी बालक ही हेंपटन के विद्यालय

में प्रविष्ट हो सकते थे। और वाशिंगटन वहां के योग्यतम विद्यार्थियों में से एक थे।

कोठरी में अच्छी तरह झाड़ू देने ही मानों वाशिंगटन की विद्या-प्राप्ति का मार्ग खोल दिया। मुख्य अध्यापिका मिस मेरी एफ० म्याकी ने उन्हें द्वाररक्षक (Janitor) का पद दिया और उन्होंने बड़ी प्रसन्नता से वह पद स्वीकार किया। यद्यपि वह काम बहुत कठिन और परिश्रम का था पर तौ भी वाशिंगटन ने उसे नहीं छोड़ा, क्योंकि उस पद पर काम करने से उन्हें जो वृत्ति मिलती थी उससे उनके भोजनादि का बहुत कुछ व्यय निकल आता था। बहुत सी कोठरियों पर देख रेख करने के सिवा उन्हें रात को भी कई घंटे तक काम करना पड़ता था और आग सुलगाने तथा अपना पाठ याद करने के लिये उन्हें प्रातः काल चार ही बजे उठना पड़ता था। हेंपटन में रहने के समय तथा उसके बाद अन्यत्र जाने पर भी वाशिंगटन को मुख्य अध्यापिका मिस म्याकी से सब कार्यों में बहुत सहायता मिली और वे उनकी मित्र हो गईं। उन्हींकी सम्मति और उत्तेजना से वे सब काम किया करते थे।

हेंपटन के सब दृश्यों और घटनाओं की अपेक्षा, वाशिंगटन के हृदय पर सब से अधिक उत्तम प्रभाव स्वर्गीय महात्मा जनरल एस० सी० आर्मस्ट्रांग के सहवास का पड़ा था। यद्यपि उसके बाद वाशिंगटन की भेंट युरोप तथा अमेरिका के अनेक बड़े बड़े विद्वानों और सज्जनों से हुई थी,

पर जनरल आर्मस्ट्राग सदृश योग्य, सदाचारी और सज्जन उन्हें और कोई न मिला था। कोयले की खान से निकलते ही, एकाएक जनरल आर्मस्ट्राग के सहवास का अवसर पाने को उन्होंने अपना परम सौभाग्य समझा। पहले पहल जब ये जनरल महाशय के पास गए तो उन्हें ऐसा अनुमान हुआ कि जनरल के अग में कोई लौकिक और दैवी अश है। हैंपटन पहुचने के बाद ये जनरल के मृत्युकाल तक उनके साथ ही रहे। इस बीच में जनरल के लिये उनके हृदय में दिन पर दिन आदर और पूज्यभाव सदा बढ़ता ही गया। जनरल की योग्यता का वर्णन करते हुए उन्होंने कहा है—"यदि हैंपटन विद्यालय के सब भवन, वर्ग, शिक्षक तथा कला कौशल आदि का अस्तित्व मिटाकर वहा के सब विद्यार्थियों को केवल जनरल आर्मस्ट्राग के सहवास का सुयोग दिया जाय, तो केवल इस सहवास या सत्समागम के प्रभाव से ही उन विद्यार्थियों को सर्वोत्तम शिक्षा मिल सकती है। मैं ज्यों ज्यों बड़ा होता जाता हू त्यों त्यों मुझे दृढ़ विश्वास होता जाता है कि सत्पुरुषों के समागम से मिलने वाली शिक्षा के सामने पुस्तकों और बहुमूल्य उपकरणों से मिलने वाली शिक्षा का मूल्य कुछ भी नहीं है। मैं समझता हू कि यदि सदा पुस्तकों का अभ्यास करने के बदले हमारे विद्यालय और कालेजों में मनुष्यों और वस्तुओं का अभ्यास करना सिखलाया जाता तो बहुत अच्छा होता।"

जनरल आर्मस्ट्रांग ने अपने जीवन के अंतिम छः मास टस्केजी में, वाशिंगटन के घर में व्यतीत किए थे। उस समय पक्षाघात से पिड़ित होने के कारण अपने शरीर और वाणी पर उनका बहुत ही कम अधिकार रह गया था। उस कठिन रुग्नावस्था में भी वे अपने ऊपर लिए काम को पूरा करने का दिन रात प्रयत्न किया करते थे। उनके समान, काम के पीछे शरीर को भूल जाने वाले लोग, बहुत ही कम मिलेंगे। स्वार्थ का उन्हें कभी विचार तक न होता था। दक्षिण अफ्रिका के किसी विद्यालय आदि की सहायता करते समय उन्हें ठीक उतना ही आनंद होता था जितना अपने स्थापित किए हुए हैंपटन-विद्यालय की उन्नति करते समय होता था। यद्यपि 'सिविल वार' में वे दक्षिण के गोरों के विरुद्ध लड़े थे, तथापि उसके बाद उन्होंने उन गोरों को कभी एक भी दुर्वाच्य नहीं कहा। यही नहीं, बल्कि वे सदा उन गोरों की भलाई के उपाय सोचा करते थे।

हैंपटन-विद्यालय के विद्यार्थियों की जनरल पर जो श्रद्धा थी, उसका वर्णन करना बहुत ही कठिन है। इसमें संदेह नहीं कि विद्यार्थी लोग उन्हें ईश्वरतुल्य मानते थे। जिस काम को वे अपने हाथ में लेते थे, उसमें उन्हें सदा यश मिलता था। वे जिससे जिस बात की प्रार्थना करते थे, वह उसे अवश्य स्वीकार कर लेता था। एक बार वह अलबामा में वाशिंगटन के घर में ठहरे थे। उस समय भी वे

पक्षाघात से पीड़ित थे, इसलिये उन्हें कुरसी पर बैठाकर कुरसी समेत, उठा कर हवा खिलाने के लिये ले जाना पड़ता था। एक बार एक बिलकुल नये विद्यार्थी की सहायता से वाशिंगटन उन्हें हवा खिलाने के लिये बड़े कष्ट और परिश्रम से एक ऊंचे टीले पर ले गए। वहां पहुंच कर उस नए विद्यार्थी ने बड़ी प्रसन्नता से कहा—" मैं इस बात से बहुत अधिक प्रसन्न हूं कि जनरल की मृत्यु से पहले, मुझे इस प्रकार उनकी सेवा करने का सुयोग प्राप्त हुआ है। "

वाशिंगटन जब हैंपटन विद्यालय में पढ़ते थे तब वहां के छात्रावास विद्यार्थियों से इतने अधिक भर गए थे कि नए विद्यार्थियों को स्थान मिलना असंभव हो गया था। इस कठिनता को दूर करने के लिये जनरल ने निश्चय किया कि मैदान में कुछ नए तंबू लगा दिए जाय और उन्हीं में विद्यार्थी रहें। जब पुराने विद्यार्थियों को मालूम हुआ कि जनरल की इच्छा है कि कुछ विद्यार्थी उन तंबुओं में रहें तो उनमें से बहुत से स्वेच्छापूर्वक उन तंबुओं में रहने के लिये तैयार हो गए। वाशिंगटन भी उन्हीं विद्यार्थियों में से एक थे। उन दिनों सरदी बहुत अधिक पड़ती थी और सब विद्यार्थियों ने बड़े कष्ट से उन तंबुओं में दिन बिताए थे। लेकिन उनके इस कष्ट की सूचना जनरल को कभी नहीं मिली। इसका मुख्य कारण यह था कि विद्यार्थियों में कभी आपस में इस संबंध में किसी प्रकार की कहा सुनी नहीं हुई थी। सब विद्यार्थी यही

समझ कर प्रसन्न रहते थे कि वे जनरल को संतुष्ट करने के अतिरिक्त बहुत से विद्यार्थियों को विद्योपार्जन में सहायता दे रहे हैं। प्रायः ऐसा होता था कि सरदी में अधिक तेज़ वायु चलने के कारण विद्यार्थियों के खेमें उड़ जाया करते थे और उन लोगों को कुड़कुड़ाते जाड़े में बैठे रात बितानी पड़ती थी। सवेरा होते ही जनरल उन लोगों के पास आते और उनके उत्तेजक और प्रेमपूर्ण वाक्य सुनकर विद्यार्थी अपनी सारी उदासीनता सारा कष्ट भूल जाते थे।

हैंपटन-विद्यालय जनरल सरीखे सैकड़ों स्वार्थत्यागी महानुभाव शिक्षकों से भरा हुआ था। उस विद्यालय में काम करने वाले अध्यापकों और अध्यापिकाओं से बढ़ कर उच्च, उदात्त और स्वार्थत्यागी स्त्रियों और पुरुषों का मिलना प्राय: असम्भव ही है। ऐसे आदर्श विद्यालय में रहकर वाशिंगटन ने अनेक नवीन बातें सीखीं। वे मानो एक बिलकुल नए संसार में आ गए थे। नियमित समय पर भोजन करना, रुमाल और तौलिए का व्यवहार करना, बुरुश से दाँत साफ करना आदि सभी बातें उनके लिये एक दम नई थीं। यहीं उन्हें स्नान की उपयोगिता और उससे होने वाले लाभों का ज्ञान हुआ। स्नान के संबंध में वे कहते हैं—"इससे केवल शरीर ही नीरोग नहीं रहता, बल्कि मनुष्य में सद्गुणों की वृद्धि भी होती है।" जब कभी उनके कमरे में कोई अतिथि आ जाता था और वहां वह स्नान न कर सकते, तो किसी

जगल में चले जाते और वहां रहते हुए झरने में स्नान कर लेते थे। जहां तक हो सकता था, वे स्वयं नित्य स्नान करते और दूसरों को भी वैसा ही करने का उपदेश देते थे।

हैंपटन में भोजन के लिये प्रति मास उनके दस डालर खर्च होते थे। इसमें से कुछ अंश तो वे नगद दे देते थे और कुछ के बदले में वहां का काम कर दिया करते थे। हैम्पटन पहुंचे के समय उनके पास केवल ५० सेंट ही बच गए थे, कुछ समय के उपरांत उनके भाई जान ने उन्हें कई डालर भेजे थे। पर उतने धन से उनके भोजन का काम न चल सकता था, इसलिये उन्हें विद्यालय का काम करने के लिये विवश होना पड़ा था। अपना काम वे इतनी उत्तमता से करते थे कि जिसमें विद्यालय के अधिकारियों को सदा उनकी आवश्यकता बनी रहा करे। उनकी शिक्षा का वार्षिक व्यय ७० डालर था और इतनी रकम देने में वे नितांत असमर्थ थे। यदि भोजन और शिक्षा का पूरा व्यय उन्हें नगद देना पड़ता तो वे कभी उस विद्यालय में न ठहर सकते। इसलिये जनरल आर्मस्ट्रांग कृपा कर उनकी शिक्षा का व्यय बेडफोर्ड के मि० मार्गन नामक एक सज्जन से दिलवा दिया करते थे। इस कार्य्य के लिये वाशिंगटन सदा मि० मार्गन के बहुत अनुगृहीत रहे और प्राय: अब भी उनसे मिला करते हैं।

हेंपटन पहुंचने के थोड़े ही दिनों बाद वाशिंगटन को पुस्तकों और कपड़ों की आवश्यकता मालूम होने लगी। पुस्तकें तो वे प्रायः औरों से मांग कर अपना काम चला लेते थे, पर कपड़ों के लिये उन्हें बहुत कठिनता होती थी। पीछे से दयालु शिक्षकों की कृपा से उनकी यह अड़चन भी दूर हो गई और उन्हें कुछ साधारण कपड़े मिल गए। हेंपटन विद्यालय के सब विद्यार्थियों की अवस्था तो चालीस वर्ष से भी ऊपर थी। उनका सारा समय प्रायः पढ़ने और काम करने में ही व्यतीत होता था। संसार की गति देखकर उन लोगों को भली भांति मालूम हो गया था कि प्रत्येक मनुष्य को शिक्षा प्राप्त करने की बहुत बड़ी आवश्यकता है। उनमें से बहुत से विद्यार्थी वाशिंगटन की भांति बहुत ही दरिद्र थे और उनके पास बहुत ही आवश्यक पदार्थ भी न थे। इसके अतिरिक्त कुछ लोग ऐसे भी थे जिन्हें अपने वृद्ध माता-पिता अथवा स्त्री बच्चों के भरण पोषण की भी चिंता लगी रहती थी। पर उन सब ने दृढ़तापूर्वक एक महत्त्वपूर्ण संकल्प किया हुआ था, और वह संकल्प अपने आपको स्वजाति की उन्नति करने के योग्य बनाना था। अपने आपकी चिंता उनमें से किसी को भी न थी। विद्यालय के अधिकारी और शिक्षक भी देवता-तुल्य ही थे। वे दिन रात विद्यार्थियों के लिये कठिन परिश्रम करते थे। अनेक प्रकार विद्यार्थियों की सहायता करने में ही उन्हें प्रसन्नता होती थी। 'मिथिरा वार'

उपरान्त उत्तर अमेरिका के गोरे शिक्षकों ने हबशियों की शिक्षा के संबंध में जो काम किया था, वह निस्सन्देह इतिहास में स्वर्णाक्षरों में लिखने योग्य है।

४—दूसरों की सहायता।

हैंपटन में एक वर्ष रहने के बाद वाशिंगटन को एक और कठिनता का सामना करना पड़ा। विद्यालय में छुट्टी हुई, सब विद्यार्थी घर गए, पर धनाभाव के कारण वाशिंगटन वहाँ न जा सके। उस समय छुट्टी के दिनों में बहुतही कम विद्यार्थियों को विद्यालय में रहने की आज्ञा मिलती थी। वाशिंगटन के पास एक पुराना कोट था, उसी को बेच कर उन्होंने कहीं बाहर जाना निश्चय किया। इसके अतिरिक्त लड़कपन और अभिमान के कारण उन्होंने अपनी यह दुर्दशा किसी विद्यार्थी से न कही। गुप्त रूप से उन्होंने एक हबशी को वह कोट मोल लेने पर राजी किया। निश्चित समय पर वह कोट देखने के लिये आया। उसके पूछने पर उन्होंने उसका मूल्य तीन डालर बतलाया। इसपर उसने बड़ी चतुरता से कहा—"मैं यह कोट ले लेता हूं और अभी तुम्हें पांच सेंट (ढाई आने) देता हूं। बाकी और रुपया मिलने पर दूंगा।" उस समय उन्हें जो निराशा हुई होगी उसका अनुमान सहज ही में हो सकता है। विवश होकर उन्होंने काम के लिये बाहर जाने की आशा छोड़ दी। शीघ्र

हीं सब विद्यार्थी और शिक्षक अपने अपने घर चले गए और वाशिंगटन बहुत दुखी होकर वहीं रह गए।

कई दिनों तक इधर उधर घूमने और अनेक प्रयत्न करने पर अंत में उन्हें एक भोजन बनाने वाले की दूकान पर कुछ काम मिल गया। पर वहां उन्हें वेतन बहुत ही कम मिलता था और भोजन आदि के व्यय के बाद उनके पास बहुत ही कम धन बच रहता था। रात के समय वे कुछ पढ़ लिया करते थे और दिन भर काम करते थे। पहले वर्ष की समाप्ति पर, विद्यालय छोड़ने के समय, वे विद्यालय के सोलह डालर के देनदार थे। इसलिये वे चाहते थे कि गरमियों में काम करके वे अपना यह ऋण चुका दें। इसलिये उन्होंने अपना व्यय बहुत ही कम कर दिया। वे बहुत ही कम कपड़े पहनते और उन्हें स्वयं ही धोते थे। पर इतना सब कुछ करने पर भी छुट्टी समाप्त होगई और वे सोलह डालर संग्रह न कर सके। अंतिम सप्ताह में भोजन वाले की दूकान पर, एक टेबुल के नीचे एक दिन उन्हें दस डालर का एक नोट पड़ा हुआ मिला। उसे बड़ी प्रसन्नता से उठाकर वे अपने मालिक के पास ले गए। उसने वह नोट चुपचाप अपने पास रख लिया, इससे वाशिंगटन और भी अधिक दुखी होगए। पर निराशा उन्हें उस समय भी नहीं हुई। वे कहते हैं—"मैं यह स्वीकार नहीं करता कि मैं ,, होगया। क्योंकि अपने पिछले जीवन को देखते हुए,

मैंने जो कुछ कार्य्य करना निश्चित किया था, उसके संबंध में मुझे यह स्मरण नहीं आता कि मैं कभी निराश हुआ हूं। मैंने प्रत्येक कार्य्य यही समझ कर आरम्भ किया है कि उसमें मुझे अवश्य यश मिलेगा।" अस्तु, भविष्य में आनेवाली कठिनता का सामना करने के लिये वे तैयार हो गए। सप्ताह के अंत में वे विद्यालय के खजांची जनरल जे० एफ० बी० मार्शल के पास गए और उन्होंने उन्हें अपनी सारी दशा कह सुनाई। उन्होंने कह दिया-"तुम फिर विद्यालय में प्रविष्ट हो जाओ। जब तुम्हें रुपया मिले, तब तुम यह ऋण चुका देना। मुझे तुम पर विश्वास है।" इस प्रकार दूसरे वर्ष भी वे द्वार रक्षक का काम करते रहे।

हैंपटन विद्यालय में रह कर वाशिंगटन ने जितनी बातें सीखी थीं पुस्तकों से मिली हुई शिक्षा उनका एक अंश मात्र थी। दूसरे वर्ष उनके हृदय पर जिस विषय का सब से अच्छा और अधिक प्रभाव पड़ा, वह शिक्षकों का स्वार्थत्याग था। उस समय उनके लिये यह समझना बहुत ही कठिन था कि परोपकार के लिये कष्ट उठाने में लोगों को इतना सुख क्यों मिलता है। पर दूसरे वर्ष की समाप्ति पर वे भली भांति समझ गए थे कि जो लोग दूसरों के लिये कष्ट उठाते हैं, वेही सबसे अधिक सुखी रहते हैं। तब से वे सदा इस सिद्धांत पर विशेष ध्यान रखते हैं। उसी दूसरे वर्ष, मिस लार्ड नामक एक शिक्षिका की कृपा से उन्होंने

वाइबिल को ध्यानपूर्वक पढा और उसका महत्त्व समझा। तब से वे उसे केवल धार्म्मिक ग्रथ ही नहीं समझते, बल्कि साहित्य की दृष्टि से भी वे उसे बहुत मूल्यवान मानते और नित्य प्रात काल उसका थोडा बहुत पाठ किया करते हैं।

वक्तृत्वकला की शिक्षा भी वाशिंगटन को पहले पहल मिस लार्ड से ही मिली थी। जब मिस ने उनकी रुचि इस ओर देखी तो उन्हें शब्दों का ठीक उच्चारण करना और आवश्यकतानुसार शब्दों और वाक्यों पर जोर देना सिखलाया। बाल्यावस्था से ही ससार का कुछ वास्तविक कल्याण करने की उनकी उत्कट इच्छा थी, और इस सबध में वे ससार को कुछ उपदेश भी दिया चाहते थे। इसके अतिरिक्त वे यह भी समझते थे कि केवल निरुपयोगी व्याख्यान सदा व्यर्थ होते ह और उनसे किसी का सतोप नहीं होता। इन सब कारणों से वक्ता बनने की उनकी प्रबल इच्छा थी, जो मिस लार्ड की सहायता से भली भांति पूरी हो गई। हेंपटन में कई ऐसी सभाए थीं जिनमें बालक और युवक मिलकर वाद विवाद और वक्तृत्वकला का अभ्यास किया करते थे। उन सभाओं के अधिवेशन प्रति शनिवार को हुआ करते थे और वाशिंगटन उनमें से एक में सदा नियमपूर्वक जाया करते थे। इसके अतिरिक्त उन्होंने स्वय भी एक ऐसी ही सभा स्थापित की थी। हेंपटन विद्यालय में जिन

सध्या को भोजनोपरांत, पाठ आरंभ होने से पहले विद्यार्थियों को २० मिनट का अवकाश मिला करता था। यह समय सब लोग प्रायः गप्पें लड़ाने में बिता दिया करते थे। वाशिंगटन ने अपने बीस सहपाठियों की सहायता से एक समिति संगठित की जिसमें सब लोग वाद विवाद करने और वक्तृता देने का अभ्यास करने लगे।

दूसरे वर्ष की समाप्ति पर उनकी माता और उनके भाई ने उन्हें कुछ रुपए भेजे और कुछ रुपए एक शिक्षक ने दिए। छुट्टी होने पर उन रुपयों से वे अपने घर माल्डन गए। जिस समय वे घर पहुँचे उस समय मज़दूरों की हड़ताल के कारण माल्डन की खानें और नमक की भट्टियां बंद पड़ी हुई थीं। मजदूरों का यह एक नियम सा था कि दो तीन महीने काम करके जब वे कुछ धन संग्रह कर लेते थे तो हड़ताल कर देते थे और जब वह धन खर्च करने के सिवा कुछ ऋण भी ले चुकते थे, तो किसी दूसरी नई खान में जाकर काम करने लग जाते थे। मजदूरों की यह मूर्खता और दुर्दशा देखकर वाशिंगटन बहुत दुःखी हुए थे। दो वर्ष तक घर से बाहर रह कर उन्होंने जो उन्नति की थी उसे देखकर उनके घर के तथा और लोग बहुत प्रसन्न हुए। उनकी जाति के कई बूढ़ों ने भी बहुत प्रसन्नता और सहानुभूति प्रकट की। नित्य कोई न कोई हबशी उन्हें अपने घर बुला कर भोजन कराता और उनके प्रवास तथा अध्ययन का हाल सुनता। इसके अति-

रिक्त गिरजा तथा रविवार की पाठशाला में भी उन्हें छोटी मोटी वक्तृता देनी पड़ती थी। उस समय उनकी इच्छा थी कि उन्हें किसी प्रकार का काम मिल जाय, पर हड़ताल के कारण सब काम बंद पड़े थे। हैंपटन लौटने तथा वहां पहुंच कर शिक्षा आरंभ करने के लिये उन्हें रुपयों की बहुत आवश्यकता थी, पर बहुत चेष्टा करने पर भी एक मास तक उन्हें कोई काम न मिला। मास की समाप्ति पर एक दिन काम ढूंढ़ने के लिये वे अपने निवास-स्थान से बहुत दूर चले गए। पर वहां भी उन्हें कोई काम न मिला और रात होने पर वे घर की ओर लौटे। जब उनका घर एक मील रह गया तो वे बहुत थक गए और चलने में बिलकुल असमर्थ हो गए। बाकी रात वहीं बिताने के लिये वे पास के एक टूटे फूटे मकान में गए। प्रातःकाल प्रायः तीन बजे उनके भाई जान ने आकर उन्हें जगाया और माता की मृत्यु का शोकजनक समाचार सुनाया। वाशिंगटन उस समय अत्यंत दुःखी हुए। यद्यपि उनकी माता कई वर्षों से अस्वस्थ थीं, पर पहले दिन घर से चलते समय उन्हें स्वप्न में भी इस बात की आशंका न थी कि उनके लौटने से पहले ही उनका शरीरांत हो जायगा। इसके अतिरिक्त उनके अंत काल में उनके समीप रहने की इनकी उत्कट इच्छा थी। हैंपटन में तो वे प्रायः यही सोचा करते थे कि यदि ईश्वर उन्हें समर्थ करे तो वे अपनी माता के सुखपूर्वक रहने का प्रबंध कर दें।

उनकी माता सदा यही चाहती थी कि किसी प्रकार मेरे पुत्र पढ़ लिखकर योग्य बनें और संसार में प्रतिष्ठापूर्वक उन्नति करें। पर माता और पुत्र दोनों की इच्छाएं मन ही मन में रह गई और माता का देहांत हो गया। माता के मरते ही उनकी गृहस्थी भी बिगड़ गई। उनकी बहन अमंडा निपट बालिका थी, इस लिये घर के लोगों के भोजन का भी कोई प्रबंध नहीं होता था। तात्पर्य यह कि वाशिंगटन ने वे दिन बड़ी ही कठिनता और कष्ट से बिताए। उस अवसर पर श्रीमती रफनर अनेक प्रकार से उनकी बहुत सहायता किया करती थीं। उन्होंने उन्हें अपने यहां एक काम पर भी लगा दिया था जिससे उन्होंने हैंपटन लौटने के लिये यथेष्ट धन संग्रह कर लिया।

बीच में एक बार धनाभाव के कारण वे इतने चिंतित हो गए थे कि उन्होंने हैंपटन लौटने का विचार छोड़ देना चाहा। जाड़े के लिये उनके पास कपड़े भी न थे, पर अपने भाई जान की सहायता से उन्हें कुछ कपड़े मिल गए। पर काम मिल जाने पर जब उन्होंने हैंपटन लौटने के लिये यथेष्ट धन संग्रह कर लिया तो उन्हें बहुत प्रसन्नता हुई। उन्हें दृढ़ निश्चय था कि विद्यालय में पहुंचने पर उन्हें फिर पुराना पद मिल जायगा और तब वे किसी न किसी प्रकार अपना निर्वाह कर ही लेंगे। विद्यालय खुलने से तीन सप्ताह पूर्व ही उन्हें वहां की प्रधान अध्यापिका मिस मैकी का एक

पत्र मिला जिसमें उन्हें विद्यालय-भवन की सफाई आदि के लिये दो सप्ताह पूर्व ही हैंपटन बुलाया गया था। इस लिये वे तुरंत हैंपटन पहुंचे। वहां दो सप्ताह तक मिस म्यकी के साथ रहकर उन्होंने एक बहुत ही अच्छी शिक्षा प्राप्त की। यद्यपि मिस म्यकी का जन्म एक बहुत ही उच्च और प्रतिष्ठित कुल में हुआ था, तथापि दो सप्ताह तक वे बराबर वाशिंगटन के साथ साथ झाड़ू देती, खिड़कियों और किवाड़ियों की धूल झाड़ती, विद्यार्थियों के विछौने ठीक करती तथा इसी प्रकार के और अनेक छोटे छोटे कार्य्य करती रहीं। प्रति वर्ष, विद्यालय खुलने से पहले मिस म्यकी को यह काम करना पड़ता था, और उस वर्ष वाशिंगटन ने भी उन्हें सहायता दी थी। उस समय वाशिंगटन यह न समझ सके कि हबशियों की उन्नति के उद्देश्य से मिस म्यकी सरीखी प्रतिष्ठित और शिक्षित स्त्री को इतने छोटे छोटे काम करने में क्यों आनंद आता है, लेकिन तब से उन्हें हबशियों का कोई ऐसा विद्यालय भला नहीं मालूम होता जिसमें विद्यार्थियों को परिश्रम का महत्त्व न बतलाया जाता हो।

हैंपटन में अंतिम वर्ष में वाशिंगटन का जितना समय काम करने से बचता था, वह सब पढ़ने लिखने में बीतता था। उन्होंने दृढ़ निश्चय कर लिया था कि वह परीक्षा में इतने अधिक नंबर पावेंगे जिसमें उनका नाम आनर-रोल (Honour Roll) में प्रकाशित हो, और अंत में इस उद्योग में

उन्हें सफलता भी हुई। सन् १८७५ के जून मास में उनका हैंपटन का शिक्षाक्रम समाप्त हो गया। तीन वर्षों में उन्हें जो बड़े बड़े लाभ हुए उनमें से दो लाभ मुख्य थे। एक तो जनरल आर्मस्ट्रांग सरीखे अद्वितीय उदार और परोपकारी महात्मा का सहवास और दूसरे उन्हें इस बात का ज्ञान हो गया कि शिक्षा से मनुष्य की कहाँ तक उन्नति हो सकती है। इससे पूर्व और बहुत से लोगों की भांति वाशिंगटन यही समझते थे कि शिक्षा प्राप्त करने पर मनुष्य को किसी प्रकार के शारीरिक श्रम करने की आवश्यकता नहीं रह जाती और जीवन सुख से बीत जाता है। हैंपटन में रह कर उन्होंने केवल यही नहीं सीखा कि परिश्रम करने में किसी प्रकार की अप्रतिष्ठा नहीं है बल्कि उन्होंने परिश्रम से प्रेम करना भी सीखा। उन्हें भली भांति मालूम हो गया कि परिश्रम करने से केवल आर्थिक लाभ ही नहीं होता बल्कि मनुष्य में आत्मविश्वास और स्वतंत्रता की वृद्धि होती है और वह संसार में कुछ वास्तविक कार्य्य करने के योग्य हो जाता है। वहीं रह कर उन्होंने परोपकार का महत्त्व भी जाना और उन्हें इस सिद्धांत का पूरा ज्ञान हो गया कि जो लोग दूसरों को योग्य और सुखी बनाने के लिये यथासाध्य परिश्रम करते हैं, वेही सब से अधिक भाग्यवान् और सुखी होते हैं।

विद्यालय छोड़ने के समय वाशिंगटन के पास कुछ भी नगद न था। अपने कई सहपाठियों के साथ उन्होंने कनेक्टिकट के

एक होटल में जो गरमी के दिनों के लिये खुलने वाला था, अपने लिये भोजन कराने वाले खिदमतगार का काम ठीक कर लिया और कुछ रुपए उधार लेकर वे वहां पहुंचे। पर उन्हें खिदमतगारी का काम बिलकुल न आता था। जब पहले पहल चार पांच धनवानों के भोजन का प्रबंध उनके सपुर्द हुआ तो उनकी अयोग्यता देखकर उन धनवानों ने इतना फटकारा कि विवश होकर उन्हें बिना उन धनवानों को भोजन कराए ही वहां से भाग जाना पड़ा। परिणाम यह हुआ कि वे उस पद से हटा दिए गए और उन्हें केवल रिकाबियाँ ले आने और ले जाने का काम दिया गया। पर पीछे कुछ ही सप्ताहों में भोजन कराने का काम उन्होंने सीख लिया और अपना पहला पद पा लिया। अपने शेष जीवन में वे कई बार उस होटल में उतर चुके हैं।

गरमी बीत जाने पर होटल बंद हो गया और वे अपने घर माल्डन चले गए। वहां उन्हें पाठशाला में शिक्षक का स्थान मिल गया। यहीं से मानों उनके सुखपूर्ण जीवन का आरंभ हुआ। वे पहले ही से समझते थे कि केवल पुस्तकों की शिक्षा उनके विद्यार्थियों के लिये यथेष्ट न होगी। वे नित्य प्रातःकाल आठ बजे अपना काम आरंभ करके रात को दस बजे समाप्त करते थे और साधारण शिक्षाओं के अतिरिक्त विद्यार्थियों को कंघी करना और अपने हाथ पैर तथा कपड़े आदि स्वच्छ रखना भी सिखलाते थे। स्नान तथा दांत साफ करने

की शिक्षा की ओर वे अधिक ध्यान दिया करते थे। बहुत से ऐसे पुरुषों और स्त्रियों के लिये जिन्हें दिन के समय काम करने के कारण बहुत ही थोड़ा अवकाश मिलता था उन्हें एक रात्रि-पाठशाला भी खोलनी पड़ी। उसके खुलते ही बहुसंख्यक विद्यार्थी उसमें आने लगे। ५०-६० वर्ष तक के पुरुषों और स्त्रियों का शिक्षा-प्राप्ति के लिये उद्योग करने का दृश्य बड़ा ही करुणोत्पादक होता था।

इन दो पाठशालाओं के अतिरिक्त वाशिंगटन ने एक पुस्तकालय तथा एक विवाद सभा की भी स्थापना की थी। रविवार को प्रातःकाल वे अपने गांव से तीन मील दूर एक विद्यालय में पढ़ाने जाते थे और वहां से लौट कर तीसरे पहर अपने गांव की पाठशाला में पढ़ाते थे। ये दोनों पाठशालाएं केवल रविवार को ही खुलती थीं। इसके अतिरिक्त जिन विद्यार्थियों को वे हैंपटन विद्यालय में भेजने योग्य समझते थे उन्हें वे विशेष रूप से अलग भी शिक्षा दिया करते थे। वे वेतन या वृत्ति आदि का कुछ भी ध्यान न करते थे और जो विद्या पढ़ने के लिये उनके पास आता था, उसे भली भांति पढ़ाते थे। दूसरों को किसी प्रकार की सहायता देने में उन्हें परम प्रसन्नता होती थी। इन सब कामों के लिये उन्हें सार्वजनिक फंड से जो वेतन मिलता था वह बहुत ही थोड़ा था।

जिस समय वाशिंगटन छात्रावस्था में हैंपटन में रहते थे, उस समय उनके बड़े भाई जान ही खान में मजदूरी करके

गृहस्थी का पालन करते और कभी कभी उन्हें भी कुछ सहायता भेजा करते थे। अपने भाई को शिक्षा दिलाने में लगे रहने के कारण ही वे स्वय कुछ पढ़ लिख न सके थे। अब वाशिंगटन इस उद्देश्य से धन सग्रह करने लगे कि यथावकाश वे अपने भाई जान को भी विद्योपार्जन के लिये हेंपटन भेज सकें। इस उद्देश्य में उन्हें पूरी सफलता हुई और तीन वर्षों में उनके भाई ने भी हेंपटन में पूरी शिक्षा प्राप्त कर ली। आज कल ये महाशय टस्केजी विद्यालय में शिल्प विभाग के सुपरिंटेंडेंट हैं। पीछे से इन दोनों भाइयों ने जेम्स नामक अपने दत्तक भाई को भी शिक्षा प्राप्त करने के लिये हेंपटन भेजा। जेम्स आज कल टस्केजी विद्यालय के पोस्ट मास्टर हैं।

जिस समय वाशिंगटन अपने गाव माल्डन में रहते थे उस समय "कु क्लुक्स क्लान" (Ku Klux Klan) नामक सस्था बहुत जोरों पर थी। कु-क्लुक्स दल में वे गोरे थे जो हबशियों के व्यवहारों को परिमित रखते थे और उन्हें राजनीति के विषयों में सश्लिष्ट होने से रोकते थे। उनकी समता उन पेट्रोलर्स (Patrollers) से की जा सकती है जो 'सिविल वार' से पहले इसी प्रकार हबशियों पर तीव्र दृष्टि रखते थे उन्हें बिना पास के एक स्थान से दूसरे स्थान पर जाने से रोकते थे और विना आज्ञा के और विना किसी एक गोरे की उपस्थिति के हबशियों की सभा समितियां न होने देते थे। इन लोगों की भांति कु-क्लुक्स के सब कार्य्य भी रात ही को होते थे। कु क्लुक्स

अपेक्षाकृत कुछ अधिक निर्दयी भी होते थे। उन लोगों का मुख्य उद्देश्य हबशियों की महत्वाकांक्षाएं नष्ट करना था। कभी कभी वे लोग पाठशालाएं और गिरजे तक जला दिया करते थे और निरपराधियों को बहुत कष्ट दिया करते थे। उनके कारण बहुत से लोगों के प्राण तक जा चुके थे।

युवावस्था के कारण वाशिंगटन के हृदय पर इन अन्यायों का बहुत प्रभाव पड़ा था। एक बार उन्होंने अपने गांव में हबशियों और कु-क्लुक्स में एक छोटा युद्ध होते भी देखा था जिसमें दोनों ओर सौ सौ आदमी थे। उस युद्ध में बहुत से लोग बुरी तरह घायल हुए थे जिनमें श्रीमती रफनर के पति भी थे। जेनरल रफनर हबशियों की ओर थे। उस समय वाशिंगटन को अनुमान हुआ कि अब कदाचित् उस देश में हबशियों को रहना न मिलेगा। तब से अब तक उस देश की अवस्था में बहुत कुछ परिवर्तन हो गया है और अब वहां इस प्रकार के दलों या संस्थाओं का अस्तित्व नहीं है।

५—पुनर्गठनात्मक काल।

अमेरिका के इतिहास में सन् १८६७ से १८७२ तक का समय "पुनर्गठनात्मक (Reconstruction) काल" कहा जा सकता है। * उस काल में हबशियों को सब से अधिक हो

---

*वाशिंगटन ने बाल्यावस्था तथा शिक्षक की दशा में जो समय बिताया था उसका समावेश भी इसी काल के अन्तर्गत है।

गृहस्थी का पालन करते और कभी कभी उन्हें भी कुछ सहायता भेजा करते थे। अपने भाई को शिक्षा दिलाने में लगे रहने के कारण ही वे स्वयं कुछ पढ़ लिख न सके थे। अब वाशिंगटन इस उद्देश्य से धन संग्रह करने लगे कि यथावकाश वे अपने भाई जान को भी विद्योपार्जन के लिये हैंपटन भेज सकें। इस उद्देश्य में उन्हें पूरी सफलता हुई और तीन वर्षों में उनके भाई ने भी हैंपटन में पूरी शिक्षा प्राप्त कर ली। आज कल ये महाशय टस्केजी विद्यालय में शिल्प विभाग के सुपरिंटेंडेंट हैं। पीछे से इन दोनों भाइयों ने जेम्स नामक अपने दत्तक भाई को भी शिक्षा प्राप्त करने के लिये हैंपटन भेजा। जेम्स आज कल टस्केजी विद्यालय के पोस्ट मास्टर हैं।

जिस समय वाशिंगटन अपने गांव माल्डन में रहते थे उस समय "कु क्लुक्स-क्लान" (Ku Klux Klan) नामक संस्था बहुत जोरों पर थी। कु-क्लुक्स दल में वे गोरे थे जो हबशियों के व्यवहारों को परिमित रखते थे और उन्हें राजनीति के विषयों में संश्लिष्ट होने से रोकते थे। उनकी समता उन पेट्रोलर्स (Patrollers) से की जा सकती है जो 'सिविल वार' से पहले इसी प्रकार हबशियों पर तीव्र दृष्टि रखते थे उन्हें बिना पास के एक स्थान से दूसरे स्थान पर जाने से रोकते थे, और बिना आज्ञा के और बिना किसी एक गोरे की उपस्थिति के हबशियों की सभा समितियां न होने देते थे। इन लोगों की भांति कु-क्लुक्स के सब कार्य्य भी रात ही को होते थे। कु क्लुक्स

तथापि वे लोग इन्हीं दोनों कार्य्यों को जीविकानिर्वाह का सुगम उपाय समझते थे। जिन लोगों में हस्ताक्षर करने से कुछ ही अधिक योग्यता होती थी, वे भी शिक्षक बन बैठते थे। उपदेशकों की प्रायः यही दशा थी। उनमें केवल अशिक्षित ही नहीं, बल्कि दुराचारी लोग भी सम्मिलित हो जाते थे। उस समय लोगों की यह धारणा थी कि उपदेशक बनने के लिये लोगों को ईश्वर की ओर से प्रेरणा या आज्ञा होती है। यह आज्ञा या प्रेरणा मनुष्य को प्रायः उसी समय हुआ करती थी जब कि वह गिरजा में बैठा होता था। बैठे बैठे मनुष्य अचानक भूमि पर गिर पड़ता और घंटों के लिये बेहोश सा हो जाता था। उसी समय लोग समझ लेते थे कि उस मनुष्य को उपदेशक बनने की प्रेरणा हुई है। यह विचार उन दिनों इतने अधिक फैले हुए थे कि वाशिंगटन को भी युवावस्था में यह भय लगा रहता था। कि शिक्षा प्राप्त कर लेने पर कहीं उन्हें भी इसी प्रकार की प्रेरणा न हो जाय, पर वह बात नहीं हुई।

शिक्षितों के साथ अशिक्षित उपदेशकों को मिला देने से उनकी संख्या बहुत अधिक बढ़ जाती थी। एक गिरजा के दो सौ आदमियों में से अट्ठारह उपदेशक थे। पर समय के परिवर्त्तन के साथ ही साथ आज कल ये बातें बहुत ही कम हो गई हैं और अब लोगों को उपदेशक बनने की अपेक्षा व्यापारी या शिल्पकार बनने के लिये अधिक प्रेरणाएं हुआ

करती हैं। शिक्षकों की दशा तो अब इनसे और भी अच्छी और संतोषजनक हो गई है।

पुनर्गठनात्मक काल में दक्षिण अमेरिका के हबशी बात बात के लिये ठीक उसी प्रकार संयुक्त-सरकार (Federal Government) का मुंह देखा करते थे जिस प्रकार बालक अपनी माताओं का देखा करते हैं और उनका यह कृत्य कुछ अस्वाभाविक भी नहीं था। सरकार ने उन्हें स्वतंत्रता दी थी और समस्त राष्ट्र दो शताब्दियों तक हबशियों के परिश्रम से बहुत कुछ लाभ उठा चुका था। युवावस्था में और बड़े होने पर बहुत दिनों तक वाशिंगटन की ऐसी धारणा थी कि हबशियों को स्वतंत्र करके राज्यों ने उनकी शिक्षा का जो प्रबंध किया था, उसके अतिरिक्त, लोगों को योग्य नागरिक बनाने के लिये संयुक्त सरकार का शिक्षा संबंधी कोई विशेष प्रयत्न न करना बड़ा भारी पाप है। पर आगे चल कर उनकी यह धारणा बदल गई और उन्होंने समझ लिया कि सरकार ने जो कुछ किया वह बहुत ही ठीक था। युवावस्था में वे यही समझते थे कि सरकार बहुत भूल कर रही है और वर्त्तमान स्थिति अधिक दिनों तक न ठहरेगी। वे समझते थे कि सरकार ने उनकी जाति के संबंध में जो नीति निश्चित की है वह अस्वाभाविक है और उसका मूल ठीक नहीं है। अनेक अवसरों पर उन्हें यह मालूम होता था कि सरकार उनकी अज्ञानता से लाभ उठा कर गोरों को बड़े बड़े पद देती है और उत्तर अमेरिका के कुछ

लोग दक्षिण अमेरिका के गोरों को, हबशियों के अधीन रख-कर, कुछ दंड दिया चाहते हैं। पर वाशिंगटन का अनुमान था कि अंत में इसका दुष्परिणाम हबशियों को ही भोगना पड़ेगा। तिस पर से अभाग्यवश हबशियों का ध्यान शिल्पकला तथा धनोपार्जन की ओर से हट कर राजनैतिक झगड़ों की ओर अधिक लग गया था।

राजनैतिक जीवन के प्रलोभन इतने अधिक थे कि वाशिंगटन बड़ी कठिनता से उनसे बच सके। उन्होंने विचार पूर्वक देखा कि वर्त्तमान पीढ़ी की मानसिक आत्मिक तथा शिल्पसंवर्धिनी शिक्षा की नींव डालने में सहायता देकर ही वे जाति की अधिक वास्तविक सेवा कर सकेंगे। उन्होंने राज कीय कौंसिल के अनेक ऐसे हबशी सभासदों तथा प्रांतीय अधिकारियों को देखा था जो न तो कुछ लिख पढ़ ही सकते थे और न सदाचारी ही थे। एक बार एक नगर की गली में घूमते हुए उन्होंने देखा कि एक दो खंड की बननेवाली ईमारत पर से एक राज चिल्ला कर कह रहा है—"गवर्नर ! जल्दी ईंटा लाओ। 'गवर्नर' जल्दी करो। गवर्नर ! जल्दी करो।' इस पर उन्हें इतना कौतूहल हुआ कि उन्होंने पता लगा कर मालूम कर लिया कि यह "गवर्नर" एक हबशी है जो पहले उस राज्य का लेफ्टिनेंट गवर्नर रह चुका है। लेकिन इससे यह न समझना चाहिए कि उन दिनों के सभी हबशी अधिकारी ही थे। उनमें से बहुत से लोग ऐसे भी

थे, जो विद्या, बुद्धि और सदाचार आदि के लिये आदर्श कहे जा सकते थे। तथापि बहुत से अशिक्षित अधिकारियों के कारण राजकार्य्य में अनेक भयंकर भूलें हो गई थीं, और अब भी बहुत से लोगों का यह अनुमान है कि यदि हबशियों को अपने राजनैतिक अधिकारों का उपयोग करने की स्वतंत्रता दे दी जाय तो पुनः उसी प्रकार की अनेक भूलें हो सकती हैं। पर यह बात ठीक नहीं मालूम होती, क्योंकि गत पैंतीस वर्षों में हबशी कहीं अधिक योग्य और बुद्धिमान् हो गए हैं और सब विषयों को भली भांति समझने लगे हैं। इसके अतिरिक्त सरकार की वर्त्तमान नीति गोरों और हबशियों के लिये समान रूप से उपयोगी है, और यदि उसमें किसी प्रकार का परिवर्त्तन करके किसी पक्ष को कोई विशेष अधिकार दिए जांय अथवा किसी दूसरे मार्ग का अवलंबन किया जाय तो उन दोनों पक्षों के लिये अन्याय होगा और आगे चल कर सब को उसका फल भोगना पड़ेगा।

माल्डन में दो वर्ष तक शिक्षक का काम करके सन् १८७८ के अंत में हमारे चरितनायक वाशिंगटन नगर में चले गए और वहां आठ मास तक विद्याभ्यास करते रहे। वहां की शिक्षा से उन्हें बहुत लाभ हुआ तथा वे अनेक योग्य स्त्रियों और पुरुषों से मिले। जिस विद्यालय में वे प्रविष्ट हुए थे, उसमें विद्यार्थियों को किसी प्रकार की शिल्प संबंधिनी शिक्षा नहीं दी जाती थी। वहां रह कर उन्होंने देखा एक प्रका

विद्यार्थी धनवान होते थे, उनके वस्त्र आदि बहुमूल्य और भड़कीले होते थे और उनमें से कुछ की मानसिक शक्ति भी बहुत प्रबल हुआ करती थी। लेकिन हैंपटन विद्यालय में— जहां कि शिल्प शिक्षा का भी प्रबंध था,—यह एक साधारण नियम था कि विद्यालय सब विद्यार्थियों की शिक्षा का व्यय किसी के द्वारा दिलवाने का उत्तरदायित्व अपने ऊपर ले लेता था और विद्यार्थियों को शिक्षा, भोजन वस्त्र और निवास आदि का कुल व्यय काम करके, अथवा उसका कुछ अंश काम करके और कुछ नगद, चुकाना पड़ता था। पर इस विद्यालय में यह बात नहीं थी विद्यार्थी किसी न किसी प्रकार अपने व्यय का निर्वाह कर लेते थे। हैंपटन विद्यालय के विद्यार्थी अपना व्यय कोई न कोई काम करके निकालने की चेष्टा किया करते थे और उनकी प्रत्येक चेष्टा से उनके चरित्र-गठन में बहुत सहायता मिला करती थी। पर इस विद्यालय के विद्यार्थियों में आत्मनिर्भरता की मात्रा कम थी। उनका ध्यान अधिकतर ऊपरी तड़क भड़क की ओर ही रहता था। तात्पर्य यह कि हैंपटन के विद्यार्थियों को देखते हुए उनकी जड़ अधिक मजबूत नहीं मालूम होती थी। विद्यालय छोड़ने पर उन्हें ग्रीक और लैटिन भाषाओं का तो अवश्य बहुत कुछ ज्ञान होता था पर सांसारिक तथा गार्हस्थ जीवन में वे बिलकुल अनभिज्ञ होते थे। कई वर्षों तक बहुत सुख में रहने के कारण वे दक्षिण अमेरिका के देहातों में, हबशियों

की उन्नति के कार्य्य करने के लिये न जा सकते थे और केवल खिदमतगारी और कुली का काम ही कर सकते थे।

हमारे चरित-नायक जिस समय वाशिंगटन नगर में विद्याभ्यास करते थे, उस समय वह नगर दक्षिण अमेरिका से आए हुए हवशियों से भरा हुआ था, उनमें से अधिकांश लोग तो यही समझ कर आए थे कि वहां चल कर वे सुख से जीवन व्यतीत कर सकेंगे। कुछ लोगों को छोटी मोटी सरकारी नौकरियां मिल गई थीं और कुछ लोग नौकरियां पाने की आशा में थे। कुछ योग्य हवशी वहां की पार्लामेंट या प्रतिनिधि सभा (House of Representatives) में भी थे और एक सज्जन सिनेट के सभ्य हो गए थे। इन सब कारणों से वाशिंगटन में बहुत से हवशी आने लगे। इसके अतिरिक्त वे लोग यह भी समझते थे कि कोलंबिया प्रांत में वे राज नियमों से रक्षित रहेंगे। वाशिंगटन के सार्वजनिक विद्यालय भी और स्थानों के विद्यालयों से कहीं अच्छे थे। वाशिंगटन ने यहां अपने स्वजातियों के जीवन को बहुत सूक्ष्म और विचार की दृष्टि से देखा तो उन्हें मालूम हुआ कि यद्यपि उनमें से बहुत से लोग योग्य नागरिक थे, तो भी अधिकांश की दशा संतोषजनक नहीं थी। उन्होंने अनेक ऐसे हवशियों को यहां देखा था जो सप्ताह में केवल चार डालर कमाते थे और रविवार के दिन दो डालर खर्च करके सैर करने के लिये बग्घियों पर सवार होकर निकलते थे, और पचहत्तर औ

की डालर वेतन पानेवाले सरकारी अफसर भी प्रत्येक मास की समाप्ति पर कर्ज से लद जाते थे। उन्होंने कई ऐसे आदमियों को भी देखा था जो कई मास पहले कांग्रेस के सभासद थे, पर उस समय वे बिलकुल दरिद्र हो रहे थे और उन्हें कोई काम न मिलता था। वे लोग अपनी दशा स्वयं सुधारने की बहुत थोड़ी चेष्टा करते थे और प्रायः उसके लिये सरकार का ही मुंह ताकते थे। उस समय, तथा उसके बाद अब तक कई बार वाशिंगटन ने यह इच्छा की कि किसी ऐंद्रजालिक शक्ति से उनमें से अधिकांश लोगों को वे गाँवों और देहातों में ले जाकर उस प्रकृति माता के सहारे और आसरे पर छोड़ दें जो कभी धोखा नहीं दे सकती और जो समस्त यशस्वी राष्ट्रों और जातियों की उन्नति का मूल स्थान है। यद्यपि इस मूल स्थान से होनेवाला अभ्युदय और उसका मार्ग मंद और कठिन मालूम होता है, तथापि वह वास्तविक और बहुत ठीक है।

वाशिंगटन में उन्होंने आवे ऐसी बालिकाओं को भी देखा जिनकी माताएं कपड़े धोकर अपना जीवन निर्वाह करती थीं। अपनी माताओं से कपड़े धोने की शिक्षा पाकर वे बालिकाएं विद्यालय में प्रविष्ट हुईं और वहां सात आठ वर्षों तक रहीं। विद्यालय से निकलते ही उन्हें बहुमूल्य वस्त्रों, जूते और टोपियों की आवश्यकता पड़ी। उनकी योग्यता की अपेक्षा उनकी आवश्यकताएं कहीं अधिक बढ़ गई थीं। सात आठ वर्ष की

शिक्षा के कारण वे कपड़े धोने में भी असमर्थ हो गई थीं। इन सब बातों का परिणाम यह हुआ कि उनमें से अधिकांश का चरित्र भ्रष्ट हो गया। वाशिंगटन के विचारों के अनुसार यदि उन्हीं बालिकाओं को चरित्र शुद्ध रखने वाली मानसिक शिक्षा के साथ साथ कपड़े धोने या इसी प्रकार के और कामों की शिक्षा दी जाती तो यह कहीं अधिक उत्तम और बुद्धिमत्ता का कार्य्य होता।

—:o:—

६—वर्ण और जातिभेद।

सन् १८७८–७९ में पश्चिम वर्जीनिया में राजधानी को ह्वीलिंग से किसी और मध्यस्थ नगर में उठा ले जाने के लिये बहुत आंदोलन हो रहा था। सरकार की ओर से तीन नगरों के नाम बतलाए गए थे और उनके संबंध में राज्य के नागरिकों की सम्मति मांगी गई थी। उन तीन नगरों में से एक नगर चार्लस्टन भी था जो वाशिंगटन के निवासस्थान माल्डन से केवल पांच मील दूर था। जब वाशिंगटन ने वाशिंगटन विद्यालय की शिक्षा समाप्त कर ली तो चार्लस्टन के गोरे निवासियों की एक समिति ने उन्हें अपने नगर को राजधानी बनाने के उद्योग में सहायता देने के लिये निमंत्रित किया, तदनुसार वाशिंगटन राज्य के भिन्न भिन्न स्थानों में तीन मास तक वक्तृताएं देते फिरे और अंत में उन्हीं के पक्ष की जीत

हुई। राजधानी उठ कर चार्लस्टन चली गई और अब तक वहीं है।

इस उद्योग में वाशिंगटन की बहुत प्रसिद्धि हुई और लोग उन्हें बहुत अच्छा वक्ता समझने लगे। बहुत से लोगों ने उन्हें राजनीति के जीवन में प्रविष्ट कराना चाहा, पर उस समय तक उन्हें यही विश्वास था कि अपनी जाति की वास्तविक सेवा करने के लिये उन्हें इसकी अपेक्षा कोई और अधिक उत्तम मार्ग मिल जायगा और इसी लिये उन्होंने वह प्रस्ताव अस्वीकार कर दिया। उस समय उन्हें दृढ़ विश्वास था कि उनके स्वजातियों को शिक्षा, शिल्प और सम्पत्ति की बहुत अधिक आवश्यकता थी और राजनैतिक झंझटों में फंसने की अपेक्षा इसी आवश्यकता को पूरा करना उन्हें अधिक अभीष्ट था। यद्यपि वे समझते थे कि राजनीति के विषयों में भी उन्हें यथेष्ट कृतकार्य्यता होगी, तथापि वह मार्ग उन्हें स्वार्थ-पूर्ण मालूम हुआ और उन्होंने अपने व्यक्तिगत लाभ के लिये समाजोन्नति-संबंधी कर्तव्य से मुँह मोड़ना अनुचित समझा।

उन दिनों स्कूल और कालिजों से निकले हुए बहुत से युवक राजसभा के सभासद या वकील बनने के लिये चेष्टा करते थे, और बहुत सी स्त्रियां संगीत शिक्षिका बनने का उद्योग करती थीं। पर वाशिंगटन का विचार लोगों को शिक्षा देकर इन कामों के योग्य बनाने की ओर था। दासत्व-काल में हबशियों की अज्ञानता बहुत अधिक बढ़ी हुई थी, और

उस अज्ञानता को दूर करना ही उनका मुख्य अभीष्ट था। राजधानी संबंधी कार्य्य से छुट्टी पाते ही संयोगवश उन्हें जनरल आर्मस्ट्रांग का एक पत्र मिला जिसमें उन्होंने वाशिंगटन को हैंपटन-विद्यालय के पदवी दान के अवसर पर नए ग्रेजुएट विद्यार्थियों के समक्ष एक वक्तृता देने के लिये निमंत्रित किया था। यह कार्य्य बड़े महत्व और सम्मान का था और वाशिंगटन को उसका भार पाने की स्वप्न में भी आशा न थी। उन्होंने अपने लिये "यशस्वी शक्ति" (The force that wins) का विषय निश्चय किया और बहुत सावधानता पूर्वक अपनी वक्तृता तैय्यार की।

छः वर्ष विद्याध्ययन के अभिप्राय से जिस मार्ग से वाशिंगटन को रेल न होने के कारण पैदल चल कर हैंपटन आना पड़ा था उसी मार्ग से इस बार वे बराबर रेल पर गए। इन्हीं पांच छः वर्षों में वाशिंगटन की दशा में आकाश-पताल का अंतर हो गया था। और इस बात से सब लोगों को बहुत अच्छी शिक्षा मिल सकती है। हैंपटन में शिक्षकों और विद्यार्थियों ने उनका बहुत अच्छा स्वागत किया। उन्होंने देखा कि विद्यालय, लोगों की वास्तविक आवश्यकताएं पूरी करने के लिये उत्तरोत्तर उन्नति करता और अधिक उपयोगी बनता जाता है। शिल्प विज्ञान तथा अन्य विषयों की शिक्षा के प्रबंध में बहुत कुछ उन्नति हुई थी। प्रायः शिक्षा तथा अन्य परोपकारी कार्य्यों के लिये लोग सैकड़ों वर्ष के पुराने, अथवा

हजारों मील दूर होने वाले कार्य्यों को ही आदर्श मानते और उनका अनुकरण करते हैं, और अपनी स्थिति या उद्देश्य को भूल कर अपने कार्य्यों को किसी निश्चित सांचे ही में ढालना चाहते हैं। पर हैंपटन-विद्यालय में यह बात नहीं थी, यहा की प्रणाली आदि बिलकुल स्वतंत्र थी और सब कार्य्य जनरल आर्मस्ट्रांग के विचारों के अनुसार और उनकी देख रेख में देश, काल और पात्र का विचार रख कर, किए जाते थे।

पदवी-दान के दिन, वाशिंगटन ने जो भाषण किया उसे सुन कर सब लोग बहुत प्रसन्न और सतुष्ट हुए। शीघ्र ही उन्हें इस बात का एक बहुत अच्छा प्रमाण भी मिल गया। पश्चिम वर्जीनिया पहुचने पर जहा वे पुन अपना शिक्षक का काम किया चाहते थे, उन्हें जनरल आर्मस्ट्रांग का एक और पत्र मिला जिसमें उनसे कुछ तो शिक्षक का काम करने के लिये और कुछ नई शिक्षा के लिये हैंपटन आने की प्रार्थना की गई थी। यह बात सन् १८७९ की ग्रीष्म ऋतु की है। इस से पूर्व वे अपने दो भाइयों तथा दस अन्य योग्य विद्यार्थियों को विद्याध्ययन के लिये हैंपटन भेज चुके थे। वे सब लोग वहां पहुचते ही उच्च कक्षाओं में प्रविष्ट हो गए थे, इस लिये उनकी योग्यता देख कर भी वहां के शिक्षकों ने वाशिंगटन के गुणों का परिचय पा लिया था। उनके भेजे हुए शिष्यों में से एक डाक्टर सेमुएल कर्टिस हैं जो आज कल बोस्टन नगर

के एक प्रतिष्ठित चिकित्सक और वहां के स्कूल बोर्ड के एक समासद हैं।

उन्हीं दिनों जनरल आर्मस्ट्रांग पहले पहल परीक्षास्वरूप अपने विद्यालय में इंडियन लोगों की शिक्षा का प्रबंध कर रहे थे। इंडियनों की योग्यता आदि के संबंध में लोगों को बहुत संदेह था और किसी को यह आशा न होती थी कि वे शिक्षा से कोई लाभ उठा सकेंगे। जनरल आर्मस्ट्रांग इस कार्य्य को अधिक विस्तृत रूप से किया चाहते थे। उन्होंने पश्चिमी राज्यों से एक सौ से अधिक निपट जंगली और बहुत ही अज्ञान मनुष्यों को, जिनमें से अधिकांश युवक ही थे, अपने यहां शिक्षा देने के लिये मँगवा कर रक्खा था। वाशिंगटन को वे उन सब विद्यार्थियों के पालक और निरीक्षक का काम दिया चाहते थे, जिस दशा में कि उन्हें उन विद्यार्थियों के साथ एक ही मकान में रह कर उनके निवास, वस्त्र और चरित्र-व्यवहार आदि की देखरेख करनी पड़ती। उस समय वे अपने पश्चिम वर्जीनिया वाले काम में बहुत मग्न थे और उसे छोड़ने में उन्हें बहुत कष्ट बोध होता था। बड़ी कठिनता से उन्होंने उस कार्य्य से अपना संबंध तोड़ा, क्योंकि जनरल आर्मस्ट्रांग की इच्छित सेवा से वे मुह नहीं मोड़ सकते थे।

हैंपटन पहुंचने पर रहने के लिये वाशिंगटन को एक ऐसा मकान मिला जिसमें प्रायः पचहत्तर इंडियन युवक रहते थे। उस मकान भर में इंडियनों के लिये वे ही एक मात्र विजातीय

थे। पहले तो उन्हें अपनी सफलता में बहुत कुछ संदेह था, क्योंकि इंडियन लोग अपने आप को गोरों से भी अधिक श्रेष्ठ समझते थे। हबशी लोग गुलामी कर चुके थे, पर इंडियन लोग कभी ऐसा करना स्वीकार न कर सकते थे। वास्तव काल में इंडियनों के पास स्वयं बहुत से हबशी दास थे। इसके अतिरिक्त, सर्व साधारण का यह भी विश्वास था कि हैंपटन विद्यालय में इंडियनों को शिक्षित बनाने के उद्योग में सफलता न होगी। वाशिंगटन अपने उत्तरदायित्व को भली भांति समझते थे, इसलिये इन सब बातों से वे बहुत सचेष्ट हो गए और उन्होंने सफलता प्राप्त करने का दृढ़ निश्चय कर लिया। उनके व्यवहारों से इंडियन विद्यार्थी बहुत ही शीघ्र संतुष्ट हो गए और उनका यथेष्ट आदर करने लगे और यथा-साध्य उन्हें सुखी और प्रसन्न रखने की चेष्टा करने लगे।

वाशिंगटन ने अपने अनुभव से जान लिया कि अंगरेजी सीखने की कठिनता को छोड़कर व्यापार सबंधिनी तथा अन्य प्रकार की शिक्षाएं ग्रहण करने में हबशी और इंडियन विद्यार्थियों में बहुत ही थोड़ा अंतर था। उन्हें यह देख कर और भी अधिक प्रसन्नता होती थी कि हबशी विद्यार्थी सदा यथासाध्य सब प्रकार की इंडियनों को सहायता दिया करते हैं। केवल थोड़े से हबशी विद्यार्थी ऐसे थे जो इंडियनों के हैंपटन-विद्यालय में प्रविष्ट होने के विरुद्ध थे, और नहीं तो अधिकांश हबशी सदा उन्हें अपने साथ एक ही कमरे में

रखने, और उन्हें अंगरेजी बोलना सिखाने के लिये उद्यत रहते थे। इंडियनों का जितना अधिक अभिनंदन हेंपटन विद्यालय के हबशी विद्यार्थियों ने किया था, उतना अमेरिका के किसी विद्यालय के गोरे विद्यार्थी नहीं कर सकते थे। इसी लिये वाशिंगटन ने गोरे विद्यार्थियों को कई वार यह समझाना चाहा था कि मनुष्य दूसरों की सहायता जितनी अधिक करता है उतनी ही अधिक वह स्वयं भी उन्नति करता है, और मनुष्य जितनी ही छोटी और असभ्य जाति की सहायता करता है, वह उतना अधिक स्वयं भी उन्नत होता है।

उन दिनों अमेरिका में जाति-भेद की बहुत अधिक प्रबलता थी। एक वार आनरेबुल फ्रेडरिक डगलस नामक एक सज्जन को हबशी होने के कारण रेल में माल लादने की गाड़ी में बैठना पड़ा था। उस अवसर पर एक अंगरेज यात्री ने उनसे कहा था—"मिस्टर डगलस, मुझे इस बात का बहुत दु:ख है कि आप इस प्रकार अपमानित किए गए।" मि० डगलस ने उत्तर दिया—" वे फ्रेडरिक डगलस का अपमान नहीं कर सकते। मुझ में जो आत्मा है, उसे कोई अपमानित नहीं कर सकता। इस प्रकार के व्यवहार से मैं अपमाननित नहीं हुआ हूं, बल्कि वेही लोग अपमानित हुए हैं जिन्होंने मेरे साथ ऐसा व्यवहार किया है।"

कभी कभी रेलवे अधिकारियों को हबशियों और गोरों का भेद करने में बड़ी कठिनता होती थी। एक वार एक हबशी

जिसका रंग प्रायः गोरों के समान ही था, हबशियों की गाड़ी में बैठा हुआ था। रेल-कंडक्टर उसे देख कर बहुत चकराया, क्योंकि यदि वह मनुष्य हबशी था तो वह उसे गोरों की गाड़ी में नहीं भेज सकता था और यदि वह गोरा था तो वह उस से यह पूछ कर कि "क्या आप हबशी हैं ?" उसका अपमान नहीं कर सकता था। इसलिये वह उस यात्री के सर्वांग को बड़े ध्यान से देखने लगा, पर उसका संदेह दूर न हुआ। अंत में उसने उसके पैरों की ओर देखा और थोड़ी देर में निश्चय कर लिया कि वह यात्री हबशी ही है। वाशिंगटन ने भी यह दृश्य अपनी आँखों देखा था, उन्होंने इसलिये अहोभाग्य समझा कि उनकी जाति ने कम से कम अपना एक चिह्न तो बचा रक्खा है। तभी से उन्होंने यह सिद्धांत स्थिर किया कि किसी मनुष्य की सज्जनता की परीक्षा उसी समय करनी चाहिए जब कि वह अपने से अभागी जाति के मनुष्य से किसी प्रकार का व्यवहार कर रहा हो।

लेकिन पुराने ढंग के दक्षिणी गोरे अपने पुराने गुलामों और उनके वंशजों के साथ ऐसा अनुचित व्यवहार नहीं करते थे। जार्ज वाशिंगटन के संबंध में यह प्रसिद्ध है कि एक बार जब एक हबशी ने सड़क पर उन्हें सलाम करने के लिये अपनी टोपी उतारी, तो उन्होंने उत्तर-स्वरूप अपनी टोपी उतार ली। इस पर उनके एक मित्र ने कुछ टीका टिप्पणी की। जार्ज वाशिंगटन ने उसे उत्तर दिया—"क्या तुम यह समझते हो

कि एक दीन अशिक्षित हवशी को मैं अपने से अधिक नम्र बन जाने दूंगा"।

वाशिंगटन ने इसी प्रकार की और भी दो एक घटनाएं देखी थीं। एक बार एक इंडियन विद्यार्थी बीमार पड़ा। नियमानुसार विद्यालय का यह कर्त्तव्य था कि वह किसी प्रकार उस विद्यार्थी को वाशिंगटन नगर में पहुंचा दे और उसे अपने निवास स्थान पश्चिमी जंगलों में पहुंचाने के लिये उस प्रांत के मंत्री के सपुर्द करके उसके लिये एक रसीद ले ले। यह कार्य्य वाशिंगटन के सपुर्द हुआ। उस समय तक वे सांसारिक व्यवहारों से प्रायः अनभिज्ञ ही थे। वे उस विद्यार्थी को साथ लेकर स्टीमर द्वारा वाशिंगटन की ओर चले। मार्ग में स्टीमर पर भोजन का घंटा बजा, जब तक बहुत से यात्री भोजन न कर चुके तब तक वाशिंगटन ठहरे रहे और सब के पीछे अपने साथ उस विद्यार्थी को लेकर भोजन के कमरे में घुसे। वहां के अधिकारी ने नम्रतापूर्वक उनसे कहा कि इंडियन तो यहां भोजन कर सकते हैं पर वे नहीं कर सकते। वाशिंगटन इस बात का कुछ भी अनुमान न कर सके कि वर्ण का भेद किस प्रकार किया जाता है, क्योंकि इंडियन और उनका वर्ण प्रायः एक ही समान था। विद्यालय के अधिकारियों ने उनसे कह दिया था कि वाशिंगटन नगर में वे उस विद्यार्थी-सहित अमुक होटल में ठहरें। पर जब वे उस होटल में पहुंचे तो वहां के क्लर्क ने

उनसे कहा कि यह इंडियन को तो अपने यहां स्थान दे सकता है, पर हबशी को नहीं।

एक बार एक काले आदमी के किसी होटल में ठहरने के कारण वहां के लोगों में इतनी अधिक खलबली मची थी कि मालूम होता था कि लोग उसे विना किसी प्रकार का विचार किए ही बड़ा भारी दंड दे डालेंगे। पर जब अनुसंधान करने पर उन्हें मालूम हुआ कि यह अमेरिकन हबशी नहीं बल्कि मरक्को देश का निवासी है और अंगरेजी केवल शौक से बोलता है तो उनकी सारी व्यग्रता दूर हो गई। तभी से उस बेचारे मनुष्य ने यह भी निश्चय कर लिया कि अब इन प्रांतों में यात्रा करते समय मैं कभी अंगरेजी न बोलूंगा।

हैंपटन में एक वर्ष तक इंडियन विद्यार्थियों के साथ रहने के उपरांत संयोगवश वाशिंगटन को एक और सुअवसर मिल गया जिसके कारण आगे चलकर उन्हें टस्केजी के काम में बहुत सहायता मिली। जनरल आर्मस्ट्रांग ने देखा कि बहुत से हबशी भोजन और पुस्तकों का व्यय न दे सकने के कारण, शिक्षा के लिये बहुत उत्सुक होने पर भी उनके विद्यालय में प्रविष्ट नहीं हो सकते, इसलिये उन्होंने विद्यालय के साथ एक ऐसी रात्रि-पाठशाला खोलने का विचार किया जिसमें केवल बहुत ही होनहार स्त्रियां और पुरुष इस शर्त पर लिए जांय कि वे दिन में दस घंटे काम करें और रात को दो घंटे पढ़ें। उनके काम के बदले में, भोजन के अतिरिक्त उन्हें कुछ नगद

देना भी विचारा गया था। इसके अतिरिक्त यह भी निश्चय हुआ था कि उनके काम की मजदूरी का कुछ अंश विद्यालय के कोश में जमा किया जाय और जब एक या दो वर्ष तक रात्रि-पाठशाला में पढने के बाद वे दिन के विद्यालय में प्रविष्ट हों तो उस जमा किए हुए धन से उनके भोजन आदि का व्यय चलाया जाय। इस प्रकार विद्यालय से होने वाले लाभों के अतिरिक्त उनकी शिक्षा भी आरंभ हो जाती और उन्हें व्यापार या शिल्प आदि का भी ज्ञान हो जाता।

जनरल आर्मस्ट्रांग के कहने पर वाशिंगटन ने उस रात्रि-पाठशाला का भार अपने ऊपर लिया। आरंभ में उसमें केवल बारह पुरुष और स्त्रियां सम्मिलित हुईं। दिन के समय पुरुष विद्यालय की ओर की कल में काम करते थे और स्त्रियां कपडे धोती थीं। यद्यपि ये दोनों ही काम बहुत कठिन थे, तो भी वाशिंगटन उन विद्यार्थियों से जितने अधिक संतुष्ट हुए थे उतने और (किसी) विद्यार्थी से कभी नहीं हुए। उन्हें विद्याध्ययन पर इतना अधिक अनुराग था कि जब तक छुट्टी का घंटा न बजता तब तक वे अपना पाठ नहीं छोडते थे, और प्रायः रात को सोने के समय भी वाशिंगटन से पढाने के लिये आग्रह करते थे। दिन के समय काम में भी वे उतना ही अधिक परिश्रम करते थे। इसी लिये वाशिंगटन ने उनका नाम—"साहसी वर्ग" (The plucky class) रक्खा था, और शीघ्र ही इस नाम का प्रचार समस्त

विद्यालय में होगया। जब कोई विद्यार्थी अधिक समय तक रात्रि पाठशाला में रह कर अपनी उत्कृष्ट योग्यता का परिचय दे चुकता, तो वाशिंगटन उसे उस "वर्ग" का एक प्रशंसा-पत्र देते थे। विद्यार्थी उस प्रशंसापत्र का बहुत अधिक आदर करते थे, और उसके कारण रात्रि-पाठशाला की सर्वप्रियता भी बहुत अधिक बढ़ गई थी। कुछ ही दिनों में उस पाठशाला के विद्यार्थियों की संख्या दूनी हो गई। पाठशाला छोड़ने पर वाशिंगटन ने सदा उन लोगों के कार्यों पर ध्यान रक्खा था। अब वे लोग दक्षिण अमेरिका के भिन्न भिन्न भागों में अच्छे पदों पर और उत्तम दशा में हैं। अब यह पाठशाला हेंपटन-विद्यालय का एक मुख्य और स्थायी अंग है और उसमें तीन चार सौ विद्यार्थी शिक्षा पाते हैं।

७—टस्केजी में प्रारंभिक दिन।

हेंपटन में इंडियनों और रात्रि-पाठशाला का प्रबंध करने के साथ ही साथ वाशिंगटन स्वयं भी विद्याभ्यास करते रहे। मई सन १८८१ में अचानक उन्हें सौभाग्यवश अपने जीवन का मुख्य कार्य्य आरंभ करने का अवसर मिला। एक दिन गिरजा में रात की उपासना होने के बाद जनरल आर्मस्ट्रांग ने जिक्र किया कि टस्केजी नामक एक छोटे कस्बे में हबशियों के लिये एक नार्मल स्कूल खुलनेवाला है और उसके लिये अलबामा के कुछ सज्जनों ने एक आदमी मांगा है। शायद वे लोग समझते थे

कि इस कार्य्य के लिये कोई योग्य हवशी न मिलेगा और इसी लिये वे लोग आशा करते थे कि जनरल इस पद के लिये किसी गोरे की सिफारिश करेंगे। दूसरे दिन जनरल ने वाशिंगटन को अपने कार्य्यालय में बुला कर उनसे पूछा कि क्या आप अलवामा में उस पद के लिये जा सकते हैं। उन्होंने उत्तर दिया कि मैं यथाशक्ति इसके लिये उद्योग करूंगा। इसपर जनरल ने उसी समय उन लोगों को लिख दिया कि यदि वे लोग किसी हवशी को वह पद दिया चाहें तो बुकर वाशिंगटन उसके लिये तैयार हैं। कई दिन बाद, रविवार के दिन सध्या समय जनरल को गिरजा में ही एक तार मिला उस में लिखा था—"बुकर वाशिंगटन हम लोगों के लिये उपयुक्त हैं। उन्हें तुरंत भेज दीजिए।"

इस पर वहां के शिक्षकों और विद्यार्थियों ने बहुत प्रसन्नता प्रकट की और वाशिंगटन को हार्दिक बधाइयां दीं। वे भी तुरंत टस्केजी जाने के लिये तैयार होने लगे। हैंपटन से पहले यह अपने मकान पश्चिम वर्जीनिया गए और कई दिनों तक वहां रह कर टस्केजी पहुंचे। टस्केजी की आबादी प्रायः दो हजार थी जिसमें से आधे हवशी थे। उस प्रांत को लोग दक्षिण का "ब्लैक बेल्ट"* कहते थे। टस्केजी प्रांत में हवशियों की जन-

* दासत्व-काल में "ब्लैक बेल्ट" उस स्थान को कहते थे जहां की भूमि उपजाऊ और मटी करेल होती थी और इसी कारण जहां कृषि कार्य्य के लिये बहुत से हवशी दास रहा करते थे। पर सिविल वार के उपरांत 'ब्लैक बेल्ट' उस स्थान को कहने लगे थे, जहां गोरों की अपेक्षा हवशियों की आबादी अधिक होती थी।

संख्या गोरों से तिगुनी, और उसके आस पास के प्रान्तों में इससे भी कुछ अधिक थी। टस्केजी पहुचने से पहले वाशिंगटन समझते थे कि यहां उन्हें विद्यालय के लिये भवन तथा अन्य आवश्यक उपकरण तैयार मिलेंगे। पर वहां पहुचने पर उनकी सारी आशा व्यर्थ होगई। यहा उन्हें भवन आदि तो कुछ भी न मिला, पर सैकड़ो दरिद्र विद्यार्थियों की भीड़ अवश्य दिखाई दी। टस्केजी विद्यालय के लिये बहुत ही उपयुक्त स्थान था। उसके आस पास हवशियों की बस्ती बहुत थी। दासत्व काल में और उसके उपरात यहा गोरों की शिक्षा का अच्छा प्रबध था। यहा के गोरे अन्य स्थानों के गोरों की अपेक्षा अधिक शिक्षित और सभ्य थे और इस बात से वाशिंगटन को कुछ लाभ भी हुआ। यहां के हवशी निवासी अशिक्षित होने पर भी दुर्व्यसनी नहीं थे। यहा के गोरों और कालों का परस्पर व्यवहार भी अच्छा था। इसके उदाहरण-स्वरूप यहा लोहे के सामान की एक बडी दूकान थी जो एक गोरे और एक हवशी के साझे में थी और गोरे साझीदार के जीवन तक यह साझा बराबर बना रहा।

वाशिंगटन के टस्केजी पहुचने से एक वर्ष पूर्व यहा के निवासियों ने अपने प्रतिनिधियों द्वारा सरकार से प्रार्थना की थी कि वह टस्केजी में एक नार्मल स्कूल खोलने के लिये कुछ रकम दे। इस पर सरकार ने उन्हें प्रति वर्ष दो हज़ार डालर सहायता-स्वरूप देना स्वीकार किया था। वाशिंगटन

को शीघ्र ही यह बात भी मालूम हो गई कि सरकारी सहायता का धन केवल शिक्षकों के वेतन में व्यय किया जा सकता था, पर विद्यालय के लिये स्थान, भवन या अन्य आवश्यक पदार्थ मोल लेने के लिये अब की कोई प्रबंध नहीं हुआ था। जो कार्य उनके समय में उपस्थित था वह अधिक उत्साहजनक न मालूम होता था। हां, वहां के हबशी निवासियों को विद्यालय खुलने की बहुत प्रसन्नता थी और वे लोग यथासाध्य सब प्रकार से उसकी सहायता करने के लिये तैयार थे।

वाशिंगटन को सबसे पहले विद्यालय के लिये स्थान की चिंता हुई। ढूंढ़ने पर उन्हें मेथोडिस्ट चर्च के निकट एक पुराना झोपडा मिला। चर्च और झोपड़ा दोनों ही बहुत बुरी दशा में थे। पहले मास तो उसकी दशा इतनी रही थी कि बालकों के पाठ सुनने के समय जब कभी वर्षा होती तो एक वृद्ध विद्यार्थी खड़ा होकर वाशिंगटन पर छाता लगाता था, और जब कभी उनके भोजन के समय वर्षा होती तो घर की मालकिन उन पर छाता लगाती थी। उन दिनों अलबामा निवासी राजनीति के विषयों की ओर अधिक ध्यान दिया करते थे और चाहते थे कि वाशिंगटन भी उन्हीं के पक्ष में हो जांय क्योंकि इस संबंध में उन्हें विदेशियों पर पूरा विश्वास न था। एक मनुष्य प्रायः वाशिंगटन के पास आया करता था और उनसे कहा करता था—"हम चाहते हैं कि आप भी ठीक हम लोगों की तरह मत (वोट) दिया करें। हम लोग

समाचार पत्र भली भाँति नहीं पढ़ सकने पर तो भी हम लोग सदा इस विषय पर ध्यान रखते हैं कि गोरे लोग किस पक्ष में मत दिया करते हैं, और जब हमें उनका पक्ष मालूम हो जाता है तो हम लोग अपना मत उससे ठीक विरुद्ध देते हैं और तब हम लोग समझ लेते हैं कि हम लोगों ने उचित पक्ष में मत दिया है।" पर अब वहां के हबशियों में ऐसी धारणा बिलकुल नहीं है, अब वे लोग सिद्धांत स्थिर करके और दोनों जातियों के लाभों का ध्यान रखते हुए मत देते हैं।

जून सन् १८८१ में वाशिंगटन टस्केजी पहुंचे थे। पहला मास विद्यालय के लिये स्थान आदि ढूंढ़ने, अलबामा में यात्रा करके वहां के निवासियों की और विशेषतः देहातियों की वास्तविक स्थिति का पता लगाने और लोगों को विद्यालय संबंधी विज्ञप्ति देने में ही बीत गया। इनकी अधिकांश यात्रा एक खच्चर और छकड़ा गाड़ी पर देहातों में ही हुआ करती थी। देहातियों के साथ में ही उनके छोटे झोपड़ों में ये भोजन और विश्राम किया करते थे। उनके खेतों, स्कूलों और गर्चों में ये बिना पहले से कोई सूचना दिए ही पहुंच जाते थे और वहां की वास्तविक दशा का पता लगाया करते थे। बागों और ज़मींदारियों में उन्होंने यह एक नियम सा देखा कि सारा परिवार अपने अनेक संबंधियों और अभ्यागतों के साथ एक ही कमरे में सोता था। नहाने धोने का प्रबंध, सब मकानों में, घर के बाहर आंगन में ही रहता था। साधारणतः

लोग सूअर का मांस और बाजरे की रोटी खाया करते थे। कभी कभी तो वाशिंगटन को केवल बाजरे की रोटी और उबाले हुए मटरों पर ही संतोष करना पड़ता था। यद्यपि देहातों में सब स्थानों पर अच्छे अच्छे फल और तरकारियां हो सकती थीं पर वहां के निवासी अपने आलस्य और मूर्खता के कारण स्वयं कोई चीज़ नहीं बोते थे, और अधिक मूल्य पर बाजार से बाजरा और मांस मोल लेते थे। वे लोग केवल रूई बोना जानते थे और कभी कभी अपने दरवाजे तक भी उसे बो देते थे।

वहां के हबशी शौकीनी में भी बहुत बढ़े चढ़े थे। प्रायः उनकी झोपड़ियों में साठ साठ डालर मूल्य की कपड़ा सीने की कलें और बारह बारह चौदह चौदह डालरों की घड़ियां रक्खी रहा करती थीं। एक बार वाशिंगटन एक मकान में चार और आदमियों के साथ भोजन करने बैठे थे। वहां उस समय भोजन करने का कांटा तो केवल एक ही था, पर सामने एक साठ डालर का बाजा अवश्य रक्खा हुआ था। कपड़ा सीने की कलों का व्यवहार भी बहुत ही कम होता था। घड़ियां बहुत ही कम ठीक चलती थीं। यही नहीं बल्कि दस घरों में से नौ घर तो प्रायः ऐसे ही होते थे, जहां के लोग घड़ी देखना बिलकुल जानते ही न थे। बाजों की भी प्रायः यही दशा थी। किसी बजाने वाले के अभाव के कारण वे भी यों ही पड़े रहा करते थे। सब घरों में प्रातःकाल स्त्रियां उठ कर

दस पंद्रह मिनट में थोड़ा सा मांस उबाल लेती थीं और पुरुष उसी को रास्ते रास्ते खाते हुए खेतों में काम करने के लिये चले जाते थे। स्त्रियां प्रायः उसी बरतन में जल पान किया करती थीं जिसमें वह बनाया जाता था और बालक हाथ में मांस और रोटी लेकर आंगन में खेलते कूदते और खाते थे। जिस ऋतु में मांस मँहगा हो जाता था, उस ऋतु में मांस केवल खेत में काम करने वाले पुरुषों को ही मिलता था, जलपान के उपरांत प्रायः सभी लोग घर की चिंता छोड़ कर रूई के खेत में चले जाते थे। छोटे छोटे बालक जो कुदाल तक उठा सकते थे, काम में लगा दिए जाते थे और बहुत ही छोटे बालक खेत की मीड़ पर बैठा दिए जाते थे। दोपहर और संध्या का भोजन भी प्रातःकाल के भोजन के समान ही हुआ करता था।

शनिवार और रविवार के अतिरिक्त, गृहस्थों के शेष सब दिन प्रायः इसी प्रकार बीतते थे। शनिवार का आधा और कभी कभी सारा दिन लोग प्रायः शहर में आकर सौदा खरीदने में ही बिताते थे। पर यह सौदा इतना साधारण होता था कि यदि एक मनुष्य चाहता तो केवल दस मिनट में खरीद सकता था। घर के सभी लोग गलियों में इधर उधर टहलने, सिगरेट पीने या सुंघनी सूंघने में दिन बिता देते थे। रविवार के दिन लोग प्रायः बड़ी सभाओं में आया करते थे। अधिकांश खेतों की फसलें रेहन होती थीं और खेतिहर ऋण से लदे

रहते थे। स्कूल प्रायः गिरजे या झोपड़ी में ही होते थे और उनके लिये राज्य की ओर से कोई मकान न बना होता था। जाड़े के दिनों में स्कूल के कमरों को गरम रखने का कोई प्रबंध न होता था। अधिकांश शिक्षक बहुत ही निर्धन और प्रायः चरित्रहीन हुआ करते थे। स्कूलों में तीन से पांच मास तक पढ़ाई हुआ करती थी। किसी स्कूल में एक काले बोर्ड के अतिरिक्त और कोई सामान नहीं होता था। कहीं कहीं एक ही पुस्तक से चार पांच विद्यार्थी तक अपना पाठ याद करते थे। गिरजा घरों और पादरियों की भी प्रायः यही दशा थी।

एक बार वाशिंगटन ने साठ बरस के बुड्ढे एक हबशी से उसका हाल पूछा। उसने उत्तर दिया कि वर्जीनिया में मेरा जन्म हुआ था और सन् १८४५ में मैं एलबामा में बेचा गया था। वाशिंगटन ने पूछा—तुम लोग कितने आदमी एक साथ बिके थे? उसने उत्तर दिया—हम लोग पांच थे। मैं, मेरा भाई और तीन खच्चर!

८—अस्तबल और मुर्गीखाने में पाठशाला।

टस्केजी और उनके आस पास के स्थानों की दशा देख कर वाशिंगटन बहुत चिंतित हुए। उस प्रांत के लोगों की दशा सुधारना बहुत ही दुष्कर कार्य्य था। उन्हें शंका होने लगी कि

इतना बड़ा कार्य्य अकेले मुझसे हो सकेगा या नहीं। हां, इस प्रवास में उन्होंने यह बात अवश्य समझ ली थी कि केवल आज कल के ढंग की साधारण शिक्षा से इन हबशियों की कभी उन्नति नहीं हो सकती। उस समय उन्हें जनरल आर्मस्ट्रांग की हैंपटन वाली शिक्षाप्रणाली की उपयोगिता और भी अधिक मालूम होने लगी। उन्होंने भली भांति समझ लिया कि इन हबशियों के बालकों को केवल दो चार घंटे पुस्तकें पढ़ाना, उनका समय व्यर्थ नष्ट करने के समान होगा।

टस्केजी निवासियों से परामर्श करके वाशिंगटन ने ४ जुलाई सन् १८८१ को एक छोटे गिरजा में पाठशाला खोलना निश्चय किया। गोरों और कालों ने इस कार्य्य में अच्छा उत्साह दिखलाया था और सब लोग बड़ी उत्सुकता से विद्यालय खुलने की प्रतीक्षा कर रहे थे। इसके अतिरिक्त वहां कुछ ऐसे गोरे भी थे जो इस कार्य्य से असंतुष्ट थे। उन्हें हबशियों के लिये इसकी उपयोगिता में बहुत कुछ संदेह था और उन्हें आशंका थी कि इस शिक्षा के कारण गोरों और कालों में परस्पर विरोध बढ़ेगा। कुछ लोग यह भी समझते थे कि हबशियों को जितनी अधिक शिक्षा मिलेगी, सरकार की सांपत्तिक अवस्था भी उतनी ही गिर जायगी। उन्हें भय था कि शिक्षित होकर हबशी लोग खेतों में काम करना छोड़ देंगे और उनसे गृहस्थी में सेवा कराना कठिन हो जायगा।

लेकिन जो गोरे इस विद्यालय के पक्ष में थे, वे समझते थे कि हबशी लोग पढ़ लिख कर अच्छे खासे जेंटिलमैन बन जायंगे और केवल अपने चातुर्य और बुद्धिबल से जीवन-निर्वाह कर सकेंगे। उन लोगों के लिये यह समझना बहुत ही कठिन था कि शिक्षा की सहायता से और किस प्रकार के हबशी तैयार हो सकते हैं।

वाशिंगटन को टस्केजी में दो आदमियों से सदा बहुत बड़ी सहायता मिलती रही। एक मिस्टर जी० डब्ल्यू० कैंवल से और दूसरे मिस्टर लेविस एडम्स से। मिस्टर कैंवल यहां के व्यापारी और महाजन हैं और शिक्षा संबंधी कार्य्यों का भी कुछ अनुभव रखते हैं। मि० एडम्स एक कारीगर हैं और उन्होंने दासत्व-काल में जूते और जीन आदि बनाना और टीन के सामान तैयार करना सीखा था। उन्होंने किसी पाठशाला में तो न पढ़ा था, पर तौ भी वे साधारण लिखना पढ़ना जानते हैं। इन लोगों ने पहले से ही वाशिंगटन की शिक्षा-प्रणाली पर विचार करके उनके साथ सहानुभूति प्रकट की और सब कार्य्यों में उन्हें सहायता दी। इन्हीं दोनों सज्जनों ने जनरल आर्मस्ट्रांग से एक शिक्षक मांगा था। जिस समय पाठशाला की आर्थिक दशा बहुत ही खराब थी, उस समय मि० कैंवल से जब प्रार्थना की जाती थी, तब वे कुछ न कुछ धन उसकी सहायता के लिये अवश्य दिया करते थे। इसके अतिरिक्त ये लोग विद्यालय के कार्य्यों में सम्मति आदि के

द्वारा भी बहुत कुछ सहायता दिया करते थे। मि० एडम्स ने दासत्व-काल में शिल्प सीख कर, अपनी मानसिक शक्ति भी बहुत कुछ बढ़ा ली थी। इस समय दक्षिण प्रांत के हबशियों में वे बहुत ही प्रतिष्ठित समझे जाते हैं।

पाठशाला खुलते ही, पहले दिन उसमें तीस विद्यार्थी प्रविष्ट हुए जिनमें आधी स्त्रियां भी थीं। वाशिंगटन केवल उन्हीं विद्यार्थियों को अपनी पाठशाला में लेते थे जिनकी अवस्था पंद्रह वर्ष से अधिक होती थी और जो पहले से कुछ पढ़े लिखे होते थे। यदि यह नियम न होता तो विद्यार्थियों की संख्या और भी बढ़ जाती। अधिकांश विद्यार्थी सार्वजनिक पाठशालाओं के शिक्षक और चालीस वर्ष से अधिक अवस्था के थे। किसी किसी शिक्षक के साथ उसके पुराने विद्यार्थी भी थे जो गुरु की अपेक्षा अधिक योग्यता रखते थे। इन लोगों को इस बात का अभिमान था कि उन्होंने भारी भारी पुस्तकें पढ़ी हैं और बड़े बड़े विषयों की शिक्षा पाई है। उनमें से दो एक लैटिन और ग्रीक भी जानते थे और इस कारण वे अपने को बहुत योग्य समझते थे। इतने विद्यार्थियों में केवल वाशिंगटन ही एक शिक्षक थे।

उन विद्यार्थियों को व्याकरण और गणित के कठिन नियम रटने का बहुत शौक था, पर दैनिक व्यवहारों में उन नियमों का उपयोग करना वे नहीं जानते थे। प्रत्येक विद्यार्थी के नाम के बीच में एक स्वतंत्र शब्द होता था। जब वाशिंगटन

ने एक विद्यार्थी से पूछा कि जान जे० जांस में 'जे०' शब्द का क्या तात्पर्य है तो उसने उत्तर दिया कि यह मेरी पदवी या उपनाम का एक अंश है। बहुत से विद्यार्थी केवल इसी उद्देश्य से पढ़ना चाहते थे कि वे शिक्षक बनकर अधिक धन कमा सकेंगे। पर एक बात अवश्य थी। जब किसी विद्यार्थी को किसी विषय का वास्तविक स्वरूप बतला दिया जाता था तो वह उसे सीखने और ग्रहण करने के लिये बड़ी उत्सुकता दिखलाता था। वाशिंगटन उन्हें पुष्ट और पूर्ण शिक्षा दिया चाहते थे। जिस विषय में पारगत होने का उन्हें अधिक अभिमान होता था, उसी में वे लोग बहुत कच्चे होते थे। नकशे में वे सहारा का रेगिस्तान या चीन की राजधानी तो भली भांति बतला सकते थे पर भोजन की मेज पर वे ठीक स्थान पर छुरी काँटे और मांसरोटी रखना नहीं जानते थे। एक विद्यार्थी घनमूल और व्याज लगा सीखता था। वाशिंगटन को उसे यह समझाने में बड़ी कठि नता हुई थी कि उसके लिये पहले गुणन सीखना अधि बुद्धिमत्ता का कार्य होगा।

पहले मास के अंत में ही विद्यार्थियों की संख्या बढ़ क पचास हो गई। उनमें से कई विद्यार्थी तो यहां केवल दं तीन मास रह कर ही उच्च कक्षा में प्रविष्ट होना और पहर ही वर्ष डिप्लोमा तक पाना चाहते थे। अब तक वाशिंगट अकेले ही शिक्षक का कार्य्य करते थे। पाठशाला खुलने वं

कुछ सप्ताह बाद शिक्षा के काम में उन्हें सहायता देने के लिये मिस ओलीविया डेविडसन नाम की एक कुमारी आई। आगे चल कर वाशिंगटन ने इन्हीं से विवाह किया था। मिस डेविडसन का जन्म-स्थान ओहियो था और उसी राज्य के सार्वजनिक विद्यालय में उनकी प्रारम्भिक शिक्षा हुई थी। बाल्यावस्था में ही उन्होंने सुन रक्खा था कि दक्षिण में शिक्षकों की बहुत आवश्यकता है। इसलिये वे मिसिसिपी राज्य में चली गईं और वहीं अध्यापिका का कार्य्य करने लगीं। वहां उनके एक शिष्य को माता निकली। भय के कारण कोई उसकी सेवा शुश्रूषा न करता था। मिस डेविडसन ने अपनी पाठशाला बंद करके और दिन रात उस रोगी के पास रह कर बड़ी कठिनता से उसे अच्छा किया। एक बार जब वे छुट्टियों में अपने घर पर थीं तो उन्होंने सुना कि मेमफिस राज्य में एक प्रकार का भयंकर ज्वर फैला है। उन्होंने तुरंत वहां के मेयर को तार भेज कर सूचित किया कि मैं दाई का काम करने के लिये तैयार हूं। इसके उपरांत कुछ दिनों तक उन्होंने मेमफिस नगर में अध्यापिका का काम भी किया था।

दक्षिण में रह कर मिस डेविडसन ने भी यही अनुभव प्राप्त किया था कि वहां के लोगों को पुस्तकों के अतिरिक्त कुछ और शिक्षा देने की भी आवश्यकता है। उसी अवसर पर उन्होंने हैंपटन की शिक्षा प्रणाली का हाल सुना औ

बोस्टन नगर की श्रीमती हेमेनवे नाम की एक भद्र महिला की सहायता और कृपा से वे हेंपटन में ग्राजुएट हुईं, और तदुपरांत उन्होंने फरमिंघम के एक राजकीय नार्मल विद्यालय में दो बरस तक अध्यापक का कार्य्य सीखा था। इस विद्यालय में प्रविष्ट होने से पहले किसी ने उनसे कहा कि आप का रंग बहुत साफ है, इसलिये यदि आप विद्यालय में अपने को हबशी न बतलावें, तो आप अधिक अच्छी तरह रह सकेंगी। इसपर उन्होंने उसे स्पष्ट उत्तर दे दिया कि चाहे जो हो, मैं अपनी जाति के संबंध में कभी किसी को धोखा नहीं दे सकती।

फरमिंघम की शिक्षा समाप्त करके मिस साहबा टस्केजी आई थीं। शिक्षा-संबंधी उनके विचार बिलकुल नए और बहुत ही उच्च थे। इसके अतिरिक्त उनका नैतिक चरित्र और निःस्वार्थ भाव भी आदर्श था। टस्केजी विद्यालय की सफलता में सब से अधिक सहायता मिस डेविडसन से ही मिली थी। सबसे पहले वाशिंगटन ने उनसे विद्यालय के भविष्य के संबंध में परामर्श किया। उस समय विद्यार्थी पढ़ने और अपने विचार सुधारने में अच्छी उन्नति कर रहे थे। पर शीघ्र ही उन पर स्थायी प्रभाव डालने के लिये उन्हें किसी और प्रकार की शिक्षा देने की आवश्यकता भी प्रतीत होने लगी। विद्यार्थी प्रायः ऐसे ही थे जिन्हें घर पर कभी अपना शरीर स्वच्छ रखने की शिक्षा भी न मिली थी। विद्यार्थियों

को नहाने धोने, मुंह तथा कपड़े साफ रखने, भोजन करने और अपने कमरे साफ रखने की शिक्षा भी देनी पड़ती थी। इसके अतिरिक्त दोनों शिक्षक अपने विद्यार्थियों को किसी प्रकार का शिल्प सिखलाना और उन्हें परिश्रमी और मितव्ययी भी बनाना चाहते थे, जिसमें विद्यालय छोड़ने पर वे भली भांति अपना जीवन निर्वाह कर सकें।

उन लोगों ने देखा कि उनके अधिकांश विद्यार्थी ऐसे प्रान्तों के निवासी हैं जहां के लोगों का मुख्य आधार खेती बारी ही है। उन प्रदेशों के सौ में से पचासी निवासी कृषि कर्म से ही जीवन निर्वाह करते थे। इसलिये वे उन्हें ऐसी शिक्षा देना चाहते थे कि जिसमें कृषि की ओर से उनकी रुचि हट न जाय, वे गांव छोड़कर शहरों की ओर न भागें और केवल अपने बुद्धिबल से जीवन निर्वाह करने की चेष्टा न करें। वे उन्हें शिक्षा देकर उनमें से अधिकांश को शिक्षक बनाना चाहते थे और उन्हें जमींदारियों में भेज कर सर्व साधारण को यह दिखलाना चाहते थे कि नवीन शक्तियों और विचारों का कृषि कर्म में किस प्रकार उपयोग हो सकता है और उनसे मनुष्य के मानसिक, नैतिक और धार्मिक जीवन पर कैसा अच्छा प्रभाव पड़ सकता है।

इन सब विचारों और आवश्यकताओं ने वाशिंगटन और डेविडसन को बहुत अधिक चिंतित कर दिया। विद्यालय के लिये इन लोगों के पास उस पुराने छोटे गिरजा के अतिरिक्त

और कोई स्थान नहीं था और विद्यार्थियों की संख्या दिन पर दिन बढ़ती जाती थी। नए आने वाले विद्यार्थियों में से अधिकांश का मुख्य उद्देश्य यही होता था कि वे पढ़ लिख कर शारीरिक परिश्रम करने से बच जांय और केवल अपने बुद्धि बल से जीविका उपार्जन करने के योग्य हो जांय। विद्यालय खुलने के तीन मास बाद वाशिंगटन ने सुना कि एक पुराना बाग बिकने वाला है। यह बाग टस्केजी नगर से एक मील की दूरी पर था। वाशिंगटन ने जब जाकर वह बाग देखा तो उन्हें मालूम हुआ कि वह उनकी आवश्यकता और कार्य्य के लिये बहुत ही उपयुक्त है। यद्यपि उसका दाम बहुत ही कम,—केवल पांच सौ डालर था, पर उनके लिये यह रकम भी बहुत भारी थी। उनके पास धन कुछ भी न था। इसके अतिरिक्त उस प्रांत में वे बिलकुल अजनबी थे और किसी से उनका लेन देन या व्यवहार नहीं था। उस बाग के मालिक ने यहां तक स्वीकार कर लिया था कि ढाई सौ डालर उसे तत्काल मिल जांय और शेष ढाई सौ डालर एक वर्ष में चुका दिए जांय। पर कठिनता तो यह थी कि वाशिंगटन ढाई सौ डालर भी न दे सकते थे।

जब रुपयों का कोई प्रबंध न हो सका तो विवश होकर उन्होंने हैम्पटन विद्यालय के कोषाध्यक्ष अपने मित्र जनरल मार्शल को एक पत्र लिखा जिसमें उन्होंने यहां की सारी स्थिति का उल्लेख किया और अपनी जिम्मेदारी पर उनसे ढाई

सो डालर उधार मांगे। उत्तर में, जनरल मार्शल ने उन्हें लिख भेजा कि विद्यालय के रुपए उधार देने का तो मुझे कोई अधिकार नहीं है, हां, मैं अपने पास से यह धन प्रसन्नता पूर्वक दे सकता हूं। पर वाशिंगटन के लिये यह बात बड़ी ही विलक्षण और एक दम नई थी, क्योंकि उस समय तक कभी उनके पास एक सौ डालर भी इकट्ठा नहीं आया था। इसी लिये जनरल मार्शल का ऋण भी उन्हें बहुत भारी मालूम होता था। पर तो भी उन्होंने ईश्वर पर दृढ़ विश्वास रख कर ढाई सौ डालर ऋण ले ही लिया और वह बाग मोल लेकर शीघ्रही उस में अपना विद्यालय खोल दिया। वहां के पुराने रसोई-घर और एक दूसरे कमरे में उन्होंने अपना विद्यालय रक्खा और अस्तबल और मुर्गीखाने की मरम्मत कराके उसे पाठालय (Recitation Room) बनाया।

दो पहर को विद्यालय में छुट्टी हो जाने पर विद्यार्थियों से कमरे आदि साफ करने का काम लिया जाता था। जब विद्यालय के लिये कमरे साफ हो गए तो वाशिंगटन ने एक फसल बोने के योग्य स्थान साफ कराने का विचार किया। विद्यार्थियों ने भी बहुत प्रसन्नतापूर्वक उनके इच्छानुसार सब कार्य्य कर दिए। उन विद्यार्थियों में से बहुत से पुराने अध्यापक और शिक्षक थे, इस कारण उनसे काम लेने के लिये वाशिंगटन को स्वय भी कुदाल और फरसा लेकर काम करना पड़ता था। उन्हें काम करते देख उनके विद्यार्थी और भी अधिक उत्साह

से उन्हें सहायता देने में लग जाते थे। परिश्रम करके अंत में उन लोगों ने बीस एकड़ भूमि साफ कर ही ली और उस में एक फसल भी बो दी।

उधर मिस डेविडसन ऋण चुकाने का उद्योग कर रही थीं। उन्होंने घर घर घूम कर गोरों और हबशी गृहस्थों को नित्य कुछ रोटी, चपाती या मटर आदि देने पर राजी किया और एक विशेष अवसर पर इस प्रकार संग्रह की हुई चीज़ों को बेचने का प्रबंध किया। मिस डेविडसन जिसके पास सहायता मांगने जातीं वह उन्हें कुछ न कुछ अवश्य देता था। इस प्रकार कुछ थोड़ा सा धन संग्रह हो गया। साधारण गृहस्थों के अतिरिक्त, बहुत से बुड्ढे हबशी, जिन्होंने अपने जीवन का अधिकांश दासत्व में बिताया था, अनेक प्रकार से विद्यालय की सहायता करते थे। उनमें से कोई तो नगद धन देता था और कोई ओढ़ने के कपड़े या गन्ने तक भी प्रदान करता था। एक बार बहुत ही मैले कुचैले चीथड़े पहने सत्तर बरस की एक बुढ़िया वाशिंगटन के पास आई और कहने लगी—"मि० वाशिंगटन, ईश्वर जानता है मैंने अपने जीवन के उत्तम दिन दासत्व में ही व्यतीत किए हैं। ईश्वर जानता है, मैं बहुत ही अज्ञानी और निर्धन हूं पर मैं मिस डेविडसन और आपके उद्योग का उद्देश्य अवश्य जानती हूं। मैं जानती हूं कि आप हबशी पुरुषों और स्त्रियों को सुयोग्य बनाने की चेष्टा करते हैं। मेरे पास धन बिलकुल नहीं है

इसलिये मैं चाहती हूं कि मेरे बचाए हुए ये ६ अडे आप ले लें और इन्हें इन बालकों और बालिकाओं की शिक्षा में व्यय करें।"

यद्यपि टस्केजी विद्यालय आरम्भ करने के उपरांत वाशिंगटन ने उसकी सहायता के लिये अब तक बहुत से चंदे और उपहार पाए हैं, पर इस बुढ़िया के इस तुच्छ उपहार से उनका हृदय सब से अधिक गद्गद हुआ है।

६—घोर चिंता के दिन।

एलबामा में रह कर बड़े दिनों में वाशिंगटन को यहां के निवासियों की वास्तविक दशा देखने का और भी अधिक और अच्छा अवसर मिला। बड़े दिन आरम्भ होने से एक दिन पहले ही बालक घर घर घूम कर बड़े दिनों का उपहार मांगते फिरते थे। उस दिन प्रात काल दो बजे से पांच बजे तक के बीच में प्राय पचास बालक विद्यालय में उपहार मांगने के लिये आए थे। दक्षिण अमेरिका के इस प्रांत में यह प्रथा आज तक प्रचलित है।

दासत्व-काल में, समस्त दक्षिणी राज्यों में बड़े दिनों के अवसर पर हबशी दासों को एक सप्ताह की छुट्टी देने का नियम था। उस अवसर पर स्त्रियां और पुरुष प्राय मद्य पीते थे। बड़े दिन से एक दिन पहले सब हबशियों ने काम धंधा छोड़ दिया था और नव-वर्षारम्भ से पहले उनसे कोई

काम लेना बहुत ही कठिन था। जो लोग वर्ष भर में कभी मद्य पान न करते थे, वे भी उस अवसर पर बहुत अधिकता से मद्य पीते थे। लोग मस्त होकर खूब आनद करते थे और खूब शिकार खेलते थे। ऋतु की पवित्रता मानों सब लोग एक दम भूल ही जाते थे।

बड़े दिन की पहली छुट्टियों में वाशिंगटन नगर के बाहर एक बड़ी जमींदारी पर गए। ऐसी पवित्र और प्रिय ऋतु में दरिद्र और अज्ञान मनुष्यों को चैन करने के उद्योग में लगे देख कर उन्हें बहुत दया आती थी। एक स्थान पर उन्हों ने पांच छ ऐसे आदमियों को देखा जिनके पास केवल दस सेंट मूल्य की अदरक की चपातियां थीं। एक परिवार में केवल थोड़े से गन्ने ही थे। एक स्थान पर एक पादरी महाशय अपनी स्त्री सहित बैठे सस्ती ह्विसकी पी रहे थे। एक स्थान पर कुछ लोग बैठे हुए थोड़े से विज्ञापन के कार्डों को बड़े कुतूहल से देख रहे थे। एक परिवार में एक नई पिस्तौल खरीदी गई थी। अधिकांश स्थानों में उत्सव का तो कोई चिह्न दिखाई न देता था हां, लोग काम छोड़ कर केवल इधर उधर व्यर्थ घूमते हुए अवश्य दिखाई देते थे। रात के समय ये लोग प्राय सब प्रकार का जंगली नाच नाचते थे और मद्य पीकर पिस्तौल और छुरे लेकर दंगा फसाद करते थे। उसी अवसर पर वाशिंगटन को एक बूढ़ा हब्शी मिला था जो उस बात के उपदेशकों में से था। उसने बाबा आदम के अनुरोध से वाशिंगटन को स

समझाने की बहुत अधिक चेष्टा की कि परिश्रम पर ईश्वर का शाप है और मनुष्य के लिये परिश्रम करना बड़ा भारी पाप है। इसी कारण यह मनुष्य यथासम्भव बहुत ही कम काम करता था। उस सप्ताह काम करने के पाप से बिलकुल बचे रहने के कारण वह बहुत ही प्रसन्न मालूम होता था।

अपने विद्यालय में वाशिंगटन और डेविडसन ने विद्यार्थियों को बड़े दिन का ठीक अभिप्राय और उपयोग बतलाने की बहुत अधिक चेष्टा की। इस कार्य्य में अब तक उन्हें बहुत कुछ सफलता भी हुई है और उनके विद्यार्थियों ने भी और स्थानों पर जाकर लोगों को उस अवसर का सदुपयोग करना सिखलाया है। अब उस अवसर पर उनके विद्यालय के विद्यार्थी औरों की और विशेषतः दीन दुखियों की सहायता करते हैं। एक बार उनके विद्यार्थियों ने छुट्टी के दिनों में पचहत्तर वर्ष की एक बुढ़िया के लिये एक कोठरी बना दी थी। एक दूसरे अवसर पर रात के समय गिरजा में वाशिंगटन ने कहा था कि एक दीन विद्यार्थी कोट न होने के कारण जाड़े से बहुत कष्ट पा रहा है। दूसरे दिन प्रातःकाल उनके पास दो कोट पहुँच गए।

ऊपर कहा जा चुका है कि विद्यालय के साथ उस प्रान्त के गोरे निवासियों की पहले से ही सहानुभूति थी। वाशिंगटन सदा इस बात का उद्योग करते थे कि उनका विद्यालय सर्वप्रिय हो और लोग उसे पराया न समझें। इसी कारण नई

भूमि खरीदने में भी उन्हें बहुत कुछ सहायता मिली थी। उसके संचालकों का मुख्य उद्देश्य सब प्रकार के लोगों की सेवा और सहायता करना था और इसी लिये सब लोगों की उस पर बहुत प्रीति और श्रद्धा थी। यही कारण है कि केवल टस्केजी और एलबामा ही नहीं बल्कि समस्त दक्षिण में उस विद्यालय के बहुत अधिक गोरे सहायक हैं। अपने सहकारियों को वे सदा यही सम्मति देते हैं कि वे गोरे और काले सब वर्ण के लोगों को अपना पृष्टपोषक और मित्र बना दें।

मोल ली हुई भूमि के संबंध का ऋण चुकाने के लिये कई मास तक लगातार उद्योग होता रहा। पहले तीन मास में जनरल मार्शल का ऋण चुकाने के लिये यथेष्ट धन संग्रह हो गया और उसके उपरांत दो मास में उन्होंने शेष ढाई सौ डालर एकत्र करने के अतिरिक्त सौ एकड़ भूमि और भी प्राप्त कर ली। इतना कार्य करके उसके संचालक बहुत संतुष्ट हो गए। सब से अधिक संतोष की बात यह थी कि इस धन के दाता गोरे और काले दोनों ही थे। धन एकत्र कर चुकने के उपरांत उन लोगों ने खेती बारी बढ़ाने का उद्योग आरंभ किया। इससे दो लाभ संभावित थे। एक तो यह कि विद्यालय के लिये कुछ निश्चित आय हो जाती और दूसरे यह कि विद्यार्थियों को कृषि-कर्म्म की शिक्षा मिलती। टस्केजी विद्यालय के सभी शिल्प आदि, लोगों की वास्तविक आवश्यकताओं का ध्यान रखते हुए, स्वाभाविक और योग्य क्रम से आरंभ हुए

हैं। सब से पहले कृषि का आरम्भ इस लिये हुआ था कि उन लोगों को खाद्य पदार्थों की बहुत आवश्यकता थी। विद्यालय में बहुत से विद्यार्थी ऐसे भी थे जो अपने भोजन आदि का व्यय न दे सकने के कारण एक बार में कुछ ही सप्ताह ठहर सकते थे। इस कारण ऐसे विद्यार्थियों को धनोपार्जन के योग्य बनाने और नौ मास तक विद्यालय में रह कर शिक्षा प्राप्त करने में समर्थ बनाने के लिये, शिल्प विभाग खोलने की आवश्यकता हुई थी।

सब से पहले विद्यालय को जो पशु मिला वह टस्केजी के एक गोरे निवासी का अंधा बुड्ढा घोड़ा था। पर इस समय वहां दो सौ से अधिक घोड़े, खच्चर, गौ और बैल, प्रायः सात सौ सूअर और बहुत सी भेड़ बकरियां हैं। जब भूमि का दाम चुका दिया गया, खेती आरम्भ हो गई और कमरों की मरम्मत हो गई तो विद्यार्थियों की संख्या भी बहुत अधिक बढ़ने लगी और अंत में वहां इतने अधिक विद्यार्थी हो गए कि विद्यालय के लिये एक नया बड़ा भवन बनाने की आवश्यकता पड़ी। बहुत कुछ विचार करके अंत में छ हजार डालर की लागत का एक भवन बनाना निश्चय हुआ। यद्यपि यह कार्य्य बहुत भारी मालूम होता था तथापि वाशिंगटन ने यह बात भली भांति समझ ली थी कि जब तक विद्यार्थियों की रहन सहन पर पूरी दृष्टि न रक्खी जायगी तब तक उन्हें पूरी सफलता प्राप्त न होगी। उस अवसर पर एक ऐसी घटना हो

गई जिससे उन्हें आश्चर्य्य के साथ ही साथ बहुत संतोष भी हुआ था। जब नगर-निवासियों को यह बात मालूम हुई कि विद्यालय के लिये एक नए बड़े भवन के बनाने का विचार हो रहा है तो एक आटे की कल का मालिक एक दक्षिणी गोरा वाशिंगटन के पास आया और उनसे कहने लगा कि यदि आप रुपए हाथ में आने पर मूल्य चुका देने का वादा करें तो मैं आपको, भवन के लिये जितनी लकड़ी अवश्यक हो दे सकता हूं। वाशिंगटन ने उसी समय उससे स्पष्ट कह दिया कि इस समय हमारे पास एक पैसा भी नहीं है। तो भी उस गोरे ने बहुत सी लकड़ी वहां पहुंचा देने की इच्छा प्रकट की। पीछे जब वाशिंगटन के हाथ में कुछ धन आ गया तो उन्हों ने उससे लकड़ी मँगवा ली।

अब फिर मिस डेविडसन आस पास के स्थानों से छोटी छोटी रकमें संग्रह करने लगीं। वहां के हबशी नया भवन बनने की बात सुन कर बहुत प्रसन्न होते थे। एक दिन जब धन संग्रह के लिये सभा हो रही थी तो वहां, बारह मील से चल कर एक बुड्ढा हबशी आया जो अपने साथ बैल गाड़ी पर एक बड़ा सूअर लाया था। भरी सभा में खड़े होकर उसने कहा कि "मेरे पास धन तो बिलकुल नहीं है, पर विद्यालय का भवन बनने के व्यय के लिये मैं यह सूअर लाया हूं। आशा है, मेरे और भाई जिन्हें अपना और अपनी जाति का अभिमान होगा, दूसरी सभा में एक एक

गुज़र लावेंगे।" इसके अतिरिक्त बहुत से लोगों ने कई दिन तक काम करके भवन बनाने में सहायता दी थी।

जब टस्केजी निवासियों से यथासाध्य यथेष्ट सहायता मिल चुकी तो मिस डेविडसन ने विशेष धन संग्रह करने के लिये उत्तर की ओर जाना निश्चय किया। कई सप्ताहों तक वे लोगों से मिलती जुलती और गिरजाओं, पाठशालाओं तथा अन्य संस्थाओं में वक्तृतायें देती रहीं। इस कार्य्य में उन्हें अधिक कठिनता बोध हुई। इस प्रकार यद्यपि विद्यालय की अधिक प्रसिद्धि नहीं हुई तो भी उत्तर प्रांत के लोगों का उन पर बहुत विश्वास जम गया। एक बार मिस डेविडसन एक प्रतिष्ठित महिला के साथ, उत्तर प्रांत में नाव पर कहीं जा रही थीं। उस महिला से भी उन्होंने विद्यालय का ज़िक्र किया था। उत्तर प्रांत-निवासियों में से सब से पहले उसी महिला ने विद्यालय के सहायतार्थ धन प्रदान किया था। मिस डेविडसन की बातों का उस पर इतना अधिक प्रभाव पड़ा था कि उसने नाव पर से उतरने और मिस का साथ छोड़ने से पहले ही उन्हें पचास डालर का एक चेक दे दिया था। विवाह से पहले और उसके उपरांत मिस डेविडसन इसी प्रकार उत्तर प्रांत के निवासियों से मिलती जुलती और धन संग्रह करती रहीं। साथ ही वे टस्केजी विद्यालय में प्रधान अध्यापिका का कार्य्य भी करती रहीं। इसके अतिरिक्त वे टस्केजी में लोगों के घर जाकर पढ़ातीं और रविवार का स्कूल भी चलातीं

रहीं। यद्यपि उनमें शारीरिक बल अधिक नहीं था, तो भी वे अपनी सारी शक्ति विद्यालय की उन्नति में लगा कर बहुत प्रसन्न होती थीं। धन-संग्रह करने के लिये नगर में घर घर घूमने के कारण वे प्रायः इतनी थक जाती थीं कि रात को अपने स्थान पर पहुंच कर उनमें अपने कपड़े तक उतारने की शक्ति न रह जाती थी। एक बार वे बोस्टन में एक महिला से मिली थीं। उस महिला ने पीछे वाशिंगटन से कहा था कि जब मिस डेविडसन मुझ से मिलने के लिये आईं तो उस समय मैं कुछ काम में फँसी थी इसलिये मैंने उन्हें एक कमरे में ठहरने को कहा। जब थोड़ी देर बाद मैं उस कमरे में पहुंची तो मैंने देखा कि बहुत अधिक थक जाने के कारण वे सो गई थीं।

सब से पहले मिस्टर ए० एच० पोर्टर नामक एक सज्जन के नाम पर जिन्होंने विद्यालय को अच्छा धन दिया था, पोर्टर हाल नामक एक भवन बना था। उस भवन के बनने के उपरांत विद्यालय को धन की आवश्यकता बहुत बढ़ गई। एक बार मि० वाशिंगटन ने एक कर्जदार को चार सौ डालर देने का वचन दिया था, पर उस दिन प्रात काल उनके पास एक भी डालर न था। उस दिन दस बजे विद्यालय में जो डाक आई उसमें मिस डेविडसन के भेजे हुए पूरे चार सौ डालर के चेक मिले। यह धन बोस्टन की दो महिलाओं ने भेजा था। इसी प्रकार की और भी अनेक घटनाएं हुईं

थीं। इसके दो वर्ष उपरांत जब कि टस्केजी विद्यालय का कार्य्य बहुत अधिक बढ़ गया और जब कि उसके अधिकारियों को धन की बहुत ही अधिक आवश्यकता थी, तो उन्हीं दोनों महिलाओं ने छः सौ डालर और भेजे थे। इसके उपरांत लगातार चौदह वर्षों तक येही दोनों स्त्रियां बराबर प्रति वर्ष छः सौ डालर विद्यालय के सहायतार्थ भेजती रही थीं।

पहला भवन बन जाने के उपरात जब दूसरा भवन बनना निश्चित होगया तो विद्यार्थियों ने अपना पाठ समाप्त करने के उपरांत नित्य भूमि खोदना आरंभ कर दिया। पर उस समय तक कुछ विद्यार्थियों की यह धारणा नहीं गई थी कि हाथ से काम करना अयोग्य और अनुचित है। उस अवसर पर एक विद्यार्थी ने कहा भी था कि हम लोग यहां पढ़ने के लिये आए हैं, परिश्रम करने के लिये नहीं। पर हां, धीरे धीरे यह धारणा मिटती जाती थी। कुछ सप्ताह तक कठिन परिश्रम करने के उपरांत नीव तैयार होगई और नीव का पत्थर रखने के लिये दिन भी निश्चित हो गया।

दक्षिण के उस भाग में जो किसी समय दासत्व प्रथा का केंद्रस्थल था, बड़ी धूमधाम से उस विद्यालय की नीव रक्खी गई। दासत्व प्रथा को बंद हुए अभी केवल सोलह वर्ष हुए थे। यदि सोलह वर्ष पूर्व कोई मनुष्य हबशियों को पुस्तकों द्वारा शिक्षा देता तो वह राज्य अथवा समाज से

अवश्य भारी दंड पाता। इन सब बातों का ध्यान रखते हुए वसंत ऋतु का वह दिन,—जब कि नीव रखी गई थी—बहुत ही अपूर्व और महत्व पूर्ण मालूम होता था। उस दिन का सा दृश्य संसार के बहुत ही कम नगरों के भाग्य में होगा। उस प्रांत के शिक्षा विभाग के सुपरिंटेंडेंट आनरेबुल वाडी टामसन ने मुख्य वक्तृता दी थी। उस अवसर पर वहां बहुत से शिक्षक, विद्यार्थी, उनके माता-पिता और मित्र, उस प्रांत के गोरे अधिकारी, अनेक हबशी स्त्रियां और पुरुष, तथा अन्य ऐसे प्रतिष्ठित गोरे उपस्थित थे जो कुछ ही वर्ष पूर्व उन हबशियों को अपनी सम्पत्ति समझते थे। दोनों ही जातियों के लोग नीव की कोष शिला के पास अपना कुछ न कुछ स्मृति-चिह्न रखने के लिये बहुत ही उत्सुक दिखाई देते थे।

पर भवन बन चुकने से पूर्व धनाभाव के कारण विद्यालय के सचालकों को अनेक कठिनाइयों का सामना करना पड़ा था। नित्य उनके पास अनेक बिल पहुंचते थे जिनका रुपया न चुका सकने के कारण वे लोग बहुत ही दुखी रहते थे। उनकी कठिनाइयों का ठीक ठीक अनुमान वही मनुष्य कर सकता है जो कभी उनकी सी दशा में पड़ा हो। टस्केजी पहुंचने के उपरांत एक वर्ष के अंदर अनेक रातें ऐसी बीती थीं जो कि वाशिंगटन ने धन की चिंता के कारण बड़े ही कष्ट से जाग जाग कर बिताई थीं। कदाचित् उनके और

उनकी समस्त जाति के लिये यह समय विकट परीक्षा का था। वाशिंगटन समझते थे कि यदि इस कार्य्य में उन्हें सफलता न हुई तो उससे समस्त जाति को भारी हानि पहुंचेगी। वे यह भी जानते थे कि बहुमत उनके विरुद्ध है। यदि यही कार्य्य कोई गोरा करता तो अवश्य ही उसे बहुत कुछ सफलता की आशा होती, पर हबशियों का इस कार्य्य में सफलता प्राप्त कर लेना बड़ा भारी आश्चर्य्य ही था। इन्हीं सब कारणों और विचारों के बोझ ने विद्यालय के सचालकों को बुरी तरह दबा रक्खा था।

इस कष्ट और चिंता के समय वाशिंगटन इसके ... जिस गोरे या हबशी के पास गए उसने यथासाध्य उन्हें कुछ न कुछ सहायता अवश्य दी। बीसियों बार ऐसा हुआ कि सैकड़ों डालर के बिल आए और उनका रुपया चुकाने के लिये वाशिंगटन को नगर के दस पांच गोरों से छोटी छोटी रकमें उधार लेनी पड़ीं। आरम्भ से ही वे सबसे अधिक ... इसी बात का रखते थे कि विद्यालय की प्रतिष्ठा और बात बनी रहे, और अब तक सदा उन्हें इस उद्योग में सफलता होती आई है। इस सबध में एक बार मि० कैंबल से उन्हें बहुत अच्छा उपदेश मिला था। उन्होंने पितृवत् स्नेह से कहा था—"वाशिंगटन! तुम सदा इस बात का ध्यान रखना कि जिस मनुष्य की बात बनी रहती है उसे पूंजी की कभी कमी नहीं होती!" वाशिंगटन ने इसी उपदेश को

अपना मूल मंत्र बना लिया और सदा उसी के अनुसार कार्य्य किया। यह मि० कैंबल वही थे जिन्होंने जनरल आर्मस्ट्रांग पर जोर देकर वाशिंगटन को बुलवाया था।

एक बार धन की बहुत अधिक आवश्यकता आ पड़ने और उसका कोई प्रबंध न होने पर वाशिंगटन ने अपनी सारी दशा जनरल आर्मस्ट्रांग को लिख भेजी थी। उन्होंने अपना सारा बचाया हुआ धन तुरत उनके पास भेज दिया। इसी प्रकार जनरल महाशय ने और भी अनेक बार विद्यालय की सहायता की थी। पर इन बातों को वाशिंगटन ने आत्म चरित लिखने से पूर्व कभी किसी पर प्रकट नहीं किया था।

विद्यालय के प्रथम वर्ष की समाप्ति पर सन् १८८२ की ग्रीष्म ऋतु में वाशिंगटन का विवाह हेंपटन विद्यालय की ग्राजुएट मिस फ़ेनी एन० स्मिथ से हुआ था। तभी से वे स्वतंत्र मकान लेकर रहने लगे। उस समय विद्यालय में चार शिक्षक होगए थे जो उन्हीं के साथ उनके मकान में रहते थे। उनकी स्त्री ने भी विद्यालय की उन्नति में बहुत कुछ सहायता दी थी। पर अभाग्यवश मई सन् १८८४ में श्रीमती वाशिंगटन का देहांत होगया और वह विद्यालय को पूर्ण उन्नत और पुष्ट दशा में न देख सकीं। इससे पूर्व पोर्शिया एम० वाशिंगटन नाम की एक कन्या भी उन्हें हुई थी।

१०—अत्यंत कठिन कार्य्य।

टस्केजी विद्यालय का आरम्भ करने के समय ही वाशिंगटन का दृढ़ विचार था कि विद्यार्थियों को खेती और गृहस्थी के कामों के अतिरिक्त मकान बनाने के काम की भी शिक्षा दी जाय। इसमें उनके कई उद्देश्य थे। एक तो वे विद्यार्थियों को नये और बढ़िया ढंग के मकान बनाने की शिक्षा दिया चाहते थे और दूसरे उनकी इस शिक्षा से विद्यालय का भवन बहुत सुंदर बनवा कर लाभ उठाया चाहते थे। इन सब से अधिक मुख्य उद्देश्य उनका यह था कि विद्यार्थियों को परिश्रम की उपयुक्तता और महत्ता मालूम हो जाय और उन्हें उसमें मिलने वाले आनंद का अनुभव हो जाय। इसके अतिरिक्त वे उन्हें पुराने ढंग की शिक्षा न देकर यह सिखलाया चाहते थे कि वायु, जल, वाष्प, विद्युत् आदि नैसर्गिक शक्तियों से मनुष्य अपने परिश्रम में किस प्रकार सहायता ले सकता है।

पहले पहल जब वाशिंगटन ने विद्यार्थियों से विद्यालय भवन बनवाने का विचार किया तो बहुत से लोगों ने उनका विरोध किया। पर वे इस विरोध की परवा न करके अपने विचार पर दृढ़तापूर्वक अड़े रहे। अपने विचार का विरोध करने वालों से उन्होंने कह दिया कि यद्यपि उनका पहला भवन उतना सुंदर और सर्वांगपूर्ण नहीं बनेगा जितना कि बाहरी अनुभवी कारीगरों के हाथ से बनता तथापि विद्या

र्थियों के हाथ से भवन बनवाने में उन्हें सभ्यता और आत्म-निर्भरता की जो शिक्षा मिलेगी उससे विद्यालय की सुंदरता और सर्वांगपूर्णता वाली त्रुटि पूरी हो जायगी। इसके अतिरिक्त और भी अनेक लोगों से, जिन्हें उनके इस विचार की उपयुक्तता में संदेह था, उन्होंने कहा था कि उनके अधिकांश विद्यार्थी दरिद्र और खेतिहर हैं और यदि उन्हें एकाएक बहुत बढ़िया इमारतों में रक्खा जायगा तो वे बहुत प्रसन्न होंगे। पर इस प्रकार उनसे काम लेने से वे अपने लिये स्वयं ही अच्छे अच्छे भवन बनाना सीख जायंगे और आगे चल कर इस विद्या में अधिक उन्नति कर सकेंगे। वे समझते थे कि संभव है कि इसमें उन्हीं की भूल हो, पर तो भी उन्हें दृढ़ विश्वास था कि इन भूलों से उन्हें आगे चल कर बहुत कुछ शिक्षा मिलेगी।

टस्केजी-विद्यालय को स्थापित हुए बीस वर्ष से अधिक हो गए और इस बीच में सदा विद्यार्थियों से ही इमारतें बनवाई गई हैं। इस समय विद्यालय में छोटे बड़े सब मिला कर चालीस भवन हैं जिनमें से चार के अतिरिक्त शेष सब विद्यार्थियों के बनाए हुए हैं। इस समय दक्षिण में सैकड़ों ऐसे आदमी हैं जिन्होंने यहीं भवन बनने के समय शिल्पकला की शिक्षा पाई थी। उन्हीं लोगों ने आगे चल कर और विद्यार्थियों को वह शिक्षा दी और अब वहां के शिक्षक और विद्यार्थी वास्तुविद्या में इतने निपुण हो गए हैं कि वे त्रि

वेद्यालय क्षेत्र से बाहर गए और बिना किसी बाहरी कारीगर की सहायता लिये ही सब आकार और प्रकार की इमारतों के नक्शे बना कर, उन्हें तैयार कर सकते और उनमें बिजली के प्रकाश आदि तक का प्रबंध कर सकते हैं। यही कारण है कि विद्यार्थियों का अपने विद्यालय के साथ बहुत कुछ ममत्व हो जाता है। अनेक अवसरों पर जब कि किसी नए विद्यार्थी ने विद्यालय की दीवारों पर पेंसिल या चाकू से निशान करके उन्हें खराब करना चाहा है, तो किसी पुराने विद्यार्थी ने उसे ऐसा करने से रोकते हुए कहा है—"ऐसा मत करो। यह हमारी इमारत है। मैंने इसके बनाने में सहायता की है।"

विद्यालय के प्रारंभिक काल में उसके संचालकों को ईंटें बनाने के काम में बड़ी कठिनाई झेलनी पड़ी थी। जब उनका खेती बारी का काम भली भांति चल निकला तो उन्होंने ईंटें बनाने का कार्य्य आरंभ किया। उन्हें निज की इमारतों के लिये ही ईंटों की बहुत आवश्यकता हुआ करती थी। इसके अतिरिक्त एक और कारण से उन्हें ईंटों का कारखाना खोलना पड़ा था। उस प्रांत में ईंटों का कोई भट्ठा नहीं था इस लिये साधारणतः नगर में भी ईंटों की बहुत मांग थी, यद्यपि न तो उनके पास धन था और न उन्हें इस कार्य्य का कोई अनुभव था, पर तो भी उसमें उन्हें अच्छी सफलता हुई। ईंटें बनाने का काम गंदा और कठिन होता है इसलिये पहले पहल विद्यार्थियों से यह काम लेना बहुत कठिन था। जब

उन्हें ईंटें बनाने के काम में लगाया गया तो वे बहुत घबराए और उन्होंने शारीरिक परिश्रम से बहुत घृणा दिखलाई। बात यह थी इस काम में उन्हें घटों तक घुटने घुटने भर मट्टी और कीचड़ में खड़े रहना पड़ता था, इसलिये उनमें से अनेक विद्यार्थी ऐसे भी निकल आए जो इसी कार्य्य से घबरा कर विद्यौलय ही छोड़ कर भाग गए। कई जगहें देख भाल कर अंत में एक स्थान पर मट्टी के लिये गड्ढा खोदा गया। वाशिंगटन पहले समझते थे कि ईंटें बनाने का काम बहुत सरल है, पर उस अवसर पर अनुभव से उन्हें मालूम हो गया कि यह कार्य्य, विशेषतः ईंटें पकाना बहुत ही कठिन है। बड़े परिश्रम से उन्होंने पचीस हजार ईंटें तैयार करके भट्ठे में पकाने के लिये रक्खीं। पहली बार उन्हें सफलता नहीं हुई और उन्होंने दोबारा भट्ठा चढ़ाया। पर दूसरी बार भी वे कृतकार्य्य नहीं हुए। इससे विद्यार्थी भी हतोत्साह हो गए और पुनः उस कार्य्य में तत्पर न होते थे। तीसरी बार हैंपटन में इस विषय की शिक्षा पाए हुए अनेक अध्यापकों ने बड़े परिश्रम और उद्योग से फिर भट्ठा चढ़ाया। भट्ठा फूकने के लिये एक सप्ताह का समय आवश्यक होता था। जब सप्ताह बीत चला और लोगों को यह आशा हुई कि शीघ्र ही बहुत ईंटें तैयार मिल जांयगी तो एक दिन आधी रात के समय पिजावा गिर गया और उनके सारे परिश्रम पर पानी फिर गया।

अब वाशिंगटन के पास चौथी बार भट्ठा चढ़ाने के लिये धन भी बिलकुल न बचा, अधिकांश शिक्षकों ने भी उन्हें यह विचार परित्याग कर देने की सम्मति दी। उसी अवसर पर उन्हें अपनी एक पुरानी घड़ी का ध्यान आया। उस घड़ी को लेकर वे निकट ही के मांटगोमरी नामक एक नगर में गए और वहां एक दूकानदार के पास उसे रेहन रख कर पंद्रह डालर लाए। इस बार उनकी ईंटें भी भली भांति पक गईं। पीछे जब उनके पास धन आया तब तक उस घड़ी के रेहन की मियाद बीत गई और वे उसे छुड़ा न सके। पर उस घड़ी के निकल जाने का उन्हें कभी कोई दुःख नहीं हुआ। आज कल टस्केजी विद्यालय के शिल्प-विभाग में ईंटों का भट्ठा एक मुख्य अंश है और उसमें प्रति वर्ष अधिकता से बढ़िया ईंटें तैयार होती हैं। इसके अतिरिक्त वहां के अनेक विद्यार्थी भिन्न भिन्न स्थानों में सफलतापूर्वक ईंटें बनाने का काम करते हैं।

ईंटों के काम से वाशिंगटन ने गोरों और हबशियों के सम्ब[illegible] विषय में एक नई बात सीखी। उनके विद्यालय की बनी [illegible]टें बहुत बढ़िया होती थीं इसलिये नगर के अनेक गोरे उनके पास ईंटें खरीदने के लिये आने लगे। इसके अतिरिक्त अनेक गोरे यह भी समझने लगे कि हबशियों की शिक्षा व्यर्थ नहीं हुई बल्कि उलटे उससे समाज के वैभव और सुख की वृद्धि हो रही है। जब दोनों जातियों में क्रय विक्रय और लेन

वाशिंगटन ने लोगों के इस प्रकार के विरोध पर कुछ भी ध्यान न दिया और उद्देश्य की सफलता के लिये वे भिन्न भिन्न राज्यों में घूम कर बालकों के अभिभावकों को औद्योगिक शिक्षा की महत्ता और उपयोगिता समझाने लगे। इसके अतिरिक्त वे विद्यार्थियों से भी बराबर इस संबंध में बातें किया करते थे। यद्यपि आरंभ में औद्योगिक शिक्षा सर्वप्रिय नहीं हुई तौ भी विद्यार्थियों की संख्या दिन पर दिन यहां तक बढ़ती गई कि दूसरे वर्ष के मध्य में ही अलबामा के भिन्न भिन्न भागों तथा दूसरे राज्यों से आए हुए विद्यार्थी प्रायः डेढ़ सौ हो गए।

सन् १८८२ की ग्रीष्म ऋतु में अपने साथ मिस डेविडसन को लेकर नए भवन के लिये धन संग्रह करने के अभिप्राय से वाशिंगटन उत्तर की ओर गए। रास्ते में वे न्यूयार्क नगर में अपने एक पुराने पादरी मित्र से सिफारशी चिट्ठी लेने के लिये ठहरे, जो मित्र ने उन्हें केवल चिट्ठी देना ही अस्वीकार नहीं किया बल्कि उन्हें चुपचाप घर लौट जाने की सम्मति दी, क्योंकि उसे दृढ़ विश्वास था कि उत्तर में उन्हें अपने मार्ग-व्यय से अधिक धन न मिलेगा। वाशिंगटन ने उसे धन्यवाद देकर अपना रास्ता लिया। यहां से चल कर वे नार्थेम्पटन नगर में पहुंचे। उन्हें स्वप्न में भी यह आशा न थी कि कोई होटल वाला उन्हें अपने यहां ठहरा लेगा। इस लिये आधा दिन वे केवल किसी हबशी को खोजने के लिये

इधर उधर घूमते रहे, जिसके यहां वे ठहर और भोजन कर सकते। पर पीछे उन्हें यह जान कर बहुत आश्चर्य हुआ कि यदि वे चाहते तो किसी होटल में ठहर सकते थे।

इस उत्तर-यात्रा में उन्हें बहुत सा धन मिला था, और इसी लिये नई इमारत बनकर तैयार होने से पहले एक दिन उन्हें पोर्टर हाल के गिरजा में ईश्वर को धन्यवाद देने और उपासना तथा प्रार्थना करने के लिये विशेष दिन निश्चित करना पड़ा। उस अवसर पर उपदेश देने के लिये भी उन्हें बेडफोर्ड नामक एक बहुत ही सुयोग्य अंगरेज पादरी मिल गए। यद्यपि गोरों में तो अभीष्ट सिद्धि हो जाने पर इस प्रकार ईश्वर को धन्यवाद देने के लिये उत्सव करने की प्रथा अवश्य थी, पर हबशियों के लिये यह बिलकुल ही नई बात थी। इसलिये उस दिन वहां का दृश्य भी बहुत ही अपूर्व था।

मि० बेडफोर्ड ने विद्यालय का ट्रस्टी होना भी स्वीकार कर लिया और तब से अब तक वे उसी हैसियत में विद्यालय की सहायता कर रहे हैं। उन्हें दिन रात विद्यालय की उन्नति की चिंता लगी रहती है और वे उसकी सेवा और सहायता करके बहुत ही प्रसन्न होते हैं। ऐसे अवसरों पर जब कि और लोग कोई काम करने से हिचकते या पीछे हटते हैं, मि० बेडफोर्ड बड़ी ही प्रसन्नता से आगे बढ़ कर वह कार्य्य कर डालते हैं। वाशिंगटन के हृदय में भी उनके लिये बहुत कुछ श्रद्धा और भक्ति है।

वाशिंगटन ने लोगों के इस प्रकार के विरोध पर कुछ भी ध्यान न दिया और उद्देश्य की सफलता के लिये वे भिन्न भिन्न राज्यों में घूम कर बालकों के अभिभावकों को औद्योगिक शिक्षा की महत्ता और उपयोगिता समझाने लगे। इसके अतिरिक्त वे विद्यार्थियों से भी बराबर इस संबंध में बातें किया करते थे। यद्यपि आरंभ में औद्योगिक शिक्षा सर्वप्रिय नहीं हुई तो भी विद्यार्थियों की संख्या दिन पर दिन यहां तक बढ़ती गई कि दूसरे वर्ष के मध्य में ही अलबामा के भिन्न भिन्न भागों तथा दूसरे राज्यों से आए हुए विद्यार्थी प्रायः डेढ़ सौ हो गए।

सन् १८८२ की ग्रीष्म ऋतु में अपने साथ मिस डेविडसन को लेकर नए भवन के लिये धन संग्रह करने के अभिप्राय से वाशिंगटन उत्तर की ओर गए। रास्ते में वे न्यूयार्क नगर में अपने एक पुराने पादरी मित्र से सिफारशी चिट्ठी लेने के लिये ठहरे। उस मित्र ने उन्हें केवल चिट्ठी देना ही अस्वीकार नहीं किया बल्कि उन्हें चुपचाप घर लौट जाने की सम्मति दी, क्योंकि उसे दृढ़ विश्वास था कि उत्तर में उन्हें अपने मार्ग व्यय से अधिक धन न मिलेगा। वाशिंगटन ने उसे धन्यवाद देकर अपना रास्ता लिया। वहां से चल कर वे नार्थेम्पटन नगर में पहुंचे। उन्हें स्वप्न में भी यह आशा न थी कि कोई होटल वाला उन्हें अपने यहां ठहरा लेगा। इस लिये आधा दिन वे केवल किसी हबशी को खोजने के लिये

लिये तैयार हो गए। पर बिना मट्टी के तेलवाले चूल्हों और रिकाबियों आदि के भोजन पकाना और खाना बहुत ही कठिन था। इस लिये विवश होकर उन्हें पुराने ढंग के चूल्हों से काम लेना पड़ा। बढ़इयों के काम की कुछ बेंचें वहां पड़ी हुई थीं, उन्हीं से टेबुलों का काम लिया गया और किसी प्रकार यह कठिनता भी दूर हुई।

आरंभ में रसोई घर का प्रबंध भी बहुत गड़बड़ रहता था। न तो भोजन के पदार्थ ही ठीक बनते थे और न भोजन का कोई निश्चित समय था। एक दिन प्रातःकाल वाशिंगटन ने भोजनागार के द्वार पर खड़े होकर सुना कि भीतर कुछ विद्यार्थी शिकायत कर रहे हैं। उनकी यह शिकायत भी ठीक ही था क्योंकि उन्हें जलपान बिलकुल न मिला था। जलपान न मिलने के कारण एक लड़की ने आकर कूएं से पानी खींचना और पीना चाहा, पर वहां रस्सी भी टूटी हुई थी। वहां से लौट कर उसने बहुत ही निराश होकर कहा—"इस विद्यालय में तो पीने के लिये पानी भी नहीं मिलता।" उसके इस कथन से वाशिंगटन के हृदय को बहुत चोट पहुंची थी।

एक बार विद्यालय के ट्रस्टी मि० वर्डफोर्ड निरीक्षण के लिये आए थे। उन्हें भोजनागार के ऊपर सोने के लिये स्थान दिया गया। एक दिन बहुत तड़के दो विद्यार्थियों में झगड़ा होने के कारण उनकी नींद खुल गई। झगड़ा इस बात का था कि उस दिन दोनों में से कहवे का प्याला कौन ले। अंत

विषय में कोई अनुचित या अयोग्य बात नहीं कही। उस अवसर पर वाशिंगटन ने उनके व्यवहार से बहुत अच्छी शिक्षा ग्रहण की। उन्होंने समझ लिया कि महात्मा लोग परस्पर सदा प्रेम बढ़ाने का ही उद्योग करते हैं, और इसके विरुद्ध आचरण करने वाले केवल क्षुद्र ही होते हैं। उन्होंने यह भी सिद्धांत निकाला कि जो मनुष्य दुर्बलों की सहायता करता है वह स्वयं सबल होता है और जो अभागों को दबाता है वह स्वयं निर्बल होता है। तभी से उन्होंने निश्चय कर लिया है कि अब मैं कभी किसी जाति के मनुष्य के साथ घृणा करके अपने आपको नीच न बनाऊंगा। और ईश्वर की कृपा से उनका यह निश्चय बिलकुल पूरा उतरा है। दक्षिणी गोरों की सेवा करके भी उन्हें ठीक उतनी प्रसन्नता होती है जितनी अपने जाति-भाई की सेवा करने में। जाति द्वेष रखने वालों पर उन्हें बहुत दया आती है।

भली भांति विचार करके वाशिंगटन ने निश्चय किया है कि दक्षिण अमेरिका के जो गोरे इस बात के उद्योग में लगे रहते हैं कि राजकार्य्य आदि में हबशियों की सम्मति का कोई उपयोग न हो, वे केवल हबशियों की ही हानि नहीं करते बल्कि स्वय अपनी भी हानि करते हैं। हबशियों की हानि तो अस्थायी ही होती है। पर गोरों की नीतिमत्ता की स्थायी हानि होती है। उन्होंने अनुभव करके यह बात जानी है कि जो गोरा किसी अवसर पर हबशियों की शक्ति तोड़ने के लिये कोई

अनुचित प्रयत्न करता है वह शीघ्र ही दूसरे अवसरों पर अपने जाति भाइयों के साथ भी वैसाही दुष्ट व्यवहार करने लग जाता है। जो गोरा आरंभ में हबशियों को धोखा देता है, वह अंत में गोरों को भी अवश्य धोखा देता है। इन सब बातों से यह स्पष्ट सिद्ध है कि दक्षिण अमेरिका से यह अज्ञानता उठाने में सारे राष्ट्र की सहायता बहुत आवश्यक है।

दूसरी बात यह है कि जनरल आर्मस्ट्रांग के शिक्षा-संबंधी विचारों का दिन पर दिन गोरों और हबशियों पर बहुत ही अच्छा प्रभाव पड़ता है। आज कल प्राय सभी दक्षिणी राज्यों में बालकों और बालिकाओं को शिल्प कला की शिक्षा देने का बहुत कुछ उद्योग किया जाता है और ऐसे विचारों के मूल जनरल आर्मस्ट्रांग ही हैं।

जब टस्केजी विद्यालय में विद्यार्थियों के निवास आदि का प्रबंध हो गया तो और भी अधिक संख्या में वहां विद्यार्थी आने लगे। धनाभाव होने पर भी कई सप्ताहों तक सचालकों को विद्यार्थियों के भोजन के अतिरिक्त बड़ी कठिनता से उनके बिस्तर आदि का भी प्रबंध करना पड़ा था। स्थान न होने के कारण उन्हें विद्यालय के पास ही कुछ कोठरियां किराये पर लेनी पड़ी थीं। वे कोठरियां बहुत बुरी दशा में थीं जिसके कारण जाड़े में विद्यार्थियों को बहुत कष्ट होता था। विद्यालय के संचालक प्रत्येक विद्यार्थी से आठ डालर मासिक लेते थे और उसके भोजन निवास और कपड़े धोने का प्रबंध कर देते

थे। इसके अतिरिक्त विद्यार्थी गण विद्यालय का जो कार्य्य करते थे उसका पुरस्कार इन आठ डालरों में से काट दिया जाता था। पढ़ाई की फीस पचास डालर वार्षिक होती थी और आज कल की भांति उस समय भी जो विद्यार्थी यह रकम दे सकते थे उनसे वसूल कर ली जाती थी।

केवल पढ़ाई की फीस ही नगद मिलती थी और इतने थोड़े धन से विद्यार्थियों के भोजन आदि का प्रबंध न हो सकता था। दूसरे वर्ष शरद ऋतु में विद्यार्थियों को पूरा ओढ़ना बिछौना भी न मिल सका। कुछ समय तक तो केवल थोड़े से विद्यार्थियों के लिये केवल चटाई और विस्तर का ही प्रबंध हो सका और शेष को वह भी न मिला। जिस दिन अधिक जाड़ा पड़ता उस दिन विद्यार्थियों की चिंता के कारण रात के समय वाशिंगटन को निद्रा भी न आती थी। अनेक वार उन्हें आधी रात के समय वालकों को धैर्य्य दिलाने के लिये उनकी झोपड़ी में जाना पड़ता था। वहां वे कई विद्यार्थियों को एक ही कंबल ओढ़ कर आग के चारों ओर बैठा हुआ पाते थे। रात रात भर उन लोगों को लेटने का साहस भी न होता था। लेकिन इतना होने पर भी कोई विद्यार्थी किसी प्रकार की शिकायत न करता था। वे लोग भली भांति जानते थे कि विद्यालय के संचालक यथासाध्य उनके सुख के लिये कोई बात उठा नहीं रखते थे। इसीलिये वे सदा सब कार्य्यों में शिक्षकों की सहायता करने के लिये भी तैयार रहते थे।

अमेरिका वाले प्राय कहा करते हैं कि यदि किसी हबशी को कोई उच्च पद या अधिकार मिल जाय तो फिर उसके अधीन लोग न तो परस्पर एक दूसरे का कहना मानते हैं और न किसी का आदर करते हैं। पर वाशिंगटन महाशय निज के उन्नीस वर्ष के अनुभव से दृढ़तापूर्वक कह सकते हैं कि उन्हों ने कभी एक भी ऐसी घटना नहीं देखी जिसमें उनके विद्यालय के किसी आदमी ने किसी दूसरे की अप्रतिष्ठा की हो, या उनकी उचित आज्ञा का उल्लंघन किया हो। जब कभी वे कोई पुस्तक या और कोई चीज़ हाथ में लेकर कहीं जाते हैं तो उनके विद्यार्थी तुरंत उनके हाथ से वह चीज लेकर निर्दिष्ट स्थान तक पहुंचा देते हैं। पानी बरसने के समय वे इसी भय से अपने दफ्तर से बाहर नहीं निकलते कि कोई विद्यार्थी आ कर उनके हाथ से छाता ले लेगा और उन्हें लगाए हुए साथ चलने लगेगा। यही नहीं बल्कि आज तक कभी किसी गोरे ने भी उनका किसी प्रकार अपमान नहीं किया। सब लोग उनके साथ सदा ही बड़ी सभ्यता और शिष्टता का व्यवहार करते हैं। एक बार वे कहीं बाहर जा रहे थे और लोगों को उनकी इस यात्रा का समाचार भी मिल गया था। प्राय: सभी स्टेशनों पर अनेक गोरे और अधिकारी उनसे आकर रेल में मिलते थे और दक्षिण अमेरिका के कल्याण के उद्योग के लिये उन्हें अनेक धन्यवाद देते थे।

एक बार एटलांटा जाते समय बहुत अधिक थक जाने के कारण वाशिंगटन एक ऐसी गाड़ी में गए जिसमें यात्रियों के सोने का भी प्रबंध रहता है। वहां बोस्टन की रहने वाली उनकी परिचित दो भद्र स्त्रियां बैठी थीं। संभवतः वे दक्षिण के व्यवहारों और नियमों से अपरिचित थीं इसीलिये उन्होंने बहुत आग्रह करके उन्हें अपने पास बैठाया। थोड़ी ही देर बाद वाशिंगटन के अनजान में उन्होंने नौकर को तीन आदमियों का भोजन परोसने की आज्ञा दी। उस गाड़ी में दक्षिणी गोरे भरे हुए थे और उन सभों की दृष्टि इन्हीं तीनों आदमियों पर थी। वाशिंगटन ने भोजन करने से बचने के लिये अनेक उपाय किए पर उन महिलाओं ने बहुत जोर देकर उन्हें अपने साथ भोजन करने के लिये विवश कर ही लिया। उनमें से एक स्त्री ने स्वयं उठ कर उनके लिये एक विशेष प्रकार की चाय बनाई। भोजनोपरांत वहां से उठ कर जब वे दूसरे कमरे में सिगरेट पीने के लिये गए तो वहां जार्डिया नगर के प्रायः सभी गोरे यात्रियों ने उनका बहुत आदर सत्कार किया और अपना अपना परिचय देकर उन्हें दक्षिण की उन्नति का उद्योग करने के लिये बहुत धन्यवाद दिया।

आरंभ से ही वाशिंगटन ने सदा इस बात का उद्योग किया है कि विद्यार्थी लोग विद्यालय को उनकी अथवा दूसरे अधिकारियों की सम्पत्ति न समझ कर स्वयं अपनी समझें और सदा ट्रस्टियों और शिक्षकों की भांति उसकी उन्नति की

चिंता में लगे रहें। इसके अतिरिक्त लोगों को वे यही जतलाने की चेष्टा करते हैं कि वे विद्यालय के बड़े अधिकारी नहीं बल्कि केवल मित्र और परामर्शदाता हैं। प्रति वर्ष दो तीन बार वे विद्यार्थियों से पत्र भेज कर विद्यालय के कार्यों की आलोचना करने के लिये कहते हैं। यदि विद्यार्थी उन्हें आलोचना सबधी पत्र नहीं भेजते तो वे स्वय उनसे गिरजा में मिलते और विद्यालय के विषय में बातें करते हैं। विद्यालय के भविष्य-सबधी विचारों में भी विद्यार्थी उन्हें बहुत सहायता दिया करते हैं। अनेक अवसरों पर उन्हें विद्यार्थियों के वास्तविक अभिप्रायों और विचारों का ठीक ठीक पता लग जाता है। किसी कार्य्य का उत्तरदायित्व दूसरे पर रख कर उसे यह जतला देना कि हम तुम्हारा विश्वास करते हैं बहुत ही लाभदायक होता है। उनका विश्वास है कि यदि स्वामी और सेवक में परस्पर सद्भाव और सद्व्यवहार हो, स्वामी अपने सेवकों को यह समझा दे कि दोनों का उद्देश्य एक ही है तो हड़ताल आदि अनेक कठिनाइयां दूर हो सकती हैं। यह एक साधारण नियम है कि जिस मनुष्य पर विश्वास किया जाता है वह भी अपने ऊपर विश्वास करता है। जब एक बार आप किसी को यह विश्वास करा दें कि आप निःस्वार्थ रूप से उसके शुभ की कामना करते हैं, तो फिर आप जहां तक चाहें, उसे अपना अनुगामी बना सकते हैं।

विद्यार्थियों से भवन बनवाने के अतिरिक्त वाशिंगटन उनसे मेज कुरसियां तथा दूसरे समान भी बनवाना चाहते थे। उस समय विद्यार्थियों को भविष्य में चारपाइयों और चटाइयों आदि की आशा में खाली जमीन पर सोना पड़ता था। विद्यार्थियों ने चारपाइयां बनानी आरंभ कीं। पर वे लोग बढ़ई का काम कुछ भी नहीं जानते थे, इसलिये उनकी बनाई हुई चारपाइयां बहुत ही कमजोर और भद्दी होती थीं। जब कभी वाशिंगटन किसी विद्यार्थी के कमरे में जाते तो वहां वे एक दो चारपाइयां अवश्य टूटी हुई पाते थे। चटाइयां बनाने की समस्या भी बहुत ही कठिन थी। इसलिये सस्ते कपड़ों के टुकड़े मोल लेकर उनके थैले सी लिए गए और उनमें एक प्रकार की पुआल भर दी गई और चटाइयों के बदले उनका व्यवहार होने लगा। पर अब विद्यालय में कुछ निश्चित बालिकाओं को चटाइयां बनाने की शिक्षा नियमित रूप से दी जाती है और वहां की बनी हुई चटाइयां बहुत ही सुंदर और मजबूत होती हैं। पहले पहल शयनागार या भोजनागार में कुरसियों का भी कोई प्रबंध नहीं था। कुरसियों के बदले भद्दी तिपाइयां काम में लाई जाती थीं। उस समय विद्यार्थियों को केवल एक बिस्तर, कुछ तिपाइयां और कभी कभी एक भद्दा टेबुल मिलता था। अब भी यह सब सामान विद्यार्थियों को ही बनाने पड़ते हैं, पर अब सब चीजें सुंदर और सुदृढ़ बनती हैं और विद्यार्थियों को अधिक

सख्या में मिलती हैं। सब जगह स्वच्छता का भी यथेष्ट ध्यान रक्खा जाता है।

बुरुश से दांत साफ करने पर भी वहां बहुत जोर दिया जाता है। प्रत्येक विद्यार्थी के लिये नित्य बुरुश से दांत साफ करना अनिवार्य्य है। पुराने विद्यार्थियों से जो लोग यह बात सुनते हैं वे जब विद्यालय में शिक्षा प्राप्त करने आते हैं तो अपने साथ कम से कम दांत साफ करने का बुरुश अवश्य लाते हैं। इसके अतिरिक्त शरीर के शेष अवयवों की स्वच्छता पर भी बहुत ध्यान दिया जाता है। प्रत्येक विद्यार्थी के लिये नित्य प्रति स्नान करनी भी आवश्यक होता है। वहां कोई विद्यार्थी फटे या पैबंद लगे कपडे नहीं पहनने पाता। तात्पर्य्य यह कि वहां विद्यार्थियों को सभी आवश्यक बातों की शिक्षा दी जाती है।

१२—धन संग्रह।

टस्केजी-विद्यालय में जब बालकों के निवास आदि का प्रबंध हो चुका तो पोर्टर हाल के एक खंड में बालिकाओं के निवास का भी प्रबंध किया गया। विद्यार्थी तो भवन के बाहर खुले स्थानों में भी रह सकते थे पर बालिकाएं उस प्रकार नहीं रक्खी जा सकती थीं। पर शीघ्र ही बालकों और बालिकाओं के लिये स्थान की बहुत अधिक आवश्यकता प्रतीत होने लगी, और शीघ्र ही एक और नया बडा भवन

नवाना निश्चय हो गया। उसका नकशा बनने पर मालूम हुआ कि उसके बनने में दस हजार डालर लगेंगे। यद्यपि उस समय कार्य्य आरंभ करने के लिये अधिकारियों के पास धन बिलकुल न था, पर तौ भी उन्होंने उस नए भवन का पहले से ही नामकरण कर दिया। उस राज्य के नाम पर भवन का नाम एलबामा हाल रक्खा गया। अब फिर मिस डेविडसन आस पास के गोरों और हबशियों से धन-संग्रह करने का उद्योग करने लगीं। सब लोगों ने यथासाध्य विद्यालय को सहायता भी दी। विद्यार्थियों ने भी पहले की भांति जमीन खोद कर नीव की तैयारी आरंभ कर दी।

नए भवन के लिये वाशिंगटन को धन की बहुत अधिक चिंता थी। उसी अवसर पर उन्हें जनरल आर्मस्ट्रांग का एक तार मिला जिसमें लिखा था कि क्या आप एक मास तक उत्तर प्रांत में मेरे साथ प्रवास कर सकते हैं? यदि कर सकते हों, तो शीघ्र ही हैंपटन चले आवें। तदनुसार वाशिंगटन तुरंत हैंपटन पहुंचे। वहां पहुंचने पर उन्हें मालूम हुआ कि जनरल ने अपने साथ चार गवैयों को लेकर उत्तर प्रांत के भिन्न भिन्न स्थानों में भ्रमण करना निश्चय किया था। इसके अतिरिक्त, उनका यह भी विचार था कि प्रत्येक स्थानों में सभाएं हों और उनमें जनरल महाशय और वाशिंगटन दोनों वक्तृताएं दें। जनरल महाशय के मुंह से यह सुन कर वाशिंगटन के आश्चर्य का ठिकाना न रहा कि ये सभाएं

हैंपटन-विद्यालय के लिये नहीं बल्कि टस्केजी विद्यालय के लिये होंगी और उनका सारा व्यय हैंपटन-विद्यालय देगा। महात्मा आर्मस्ट्रांग के अनेक सुकृत्यों का यह एक साधारण उदाहरण था।

इस प्रकार जनरल आर्मस्ट्रांग ने उत्तर में घूम घूम कर वहां के भले आदमियों से वाशिंगटन का परिचय कराया और पलवाना हाल के लिये धन-संग्रह किया। यदि कोई दुर्बल और संकुचित हृदय का मनुष्य होता तो वह यही समझता कि यह सारा धन मानों हैंपटन विद्यालय के कोश से ही दिया गया है। पर महात्मा आर्मस्ट्रांग के हृदय में ऐसे तुच्छ विचारों के लिये ज़रा भी स्थान न था। वे समझते थे कि उत्तर निवासियों का यह दान किसी एक विद्यालय की उन्नति के लिये नहीं बल्कि समस्त हबशी जाति की उन्नति और कल्याण के लिये है। वे यह भी भली भांति समझते थे कि हैंपटन विद्यालय को यथेष्ट शक्तिशाली बनाने के लिये यह बात बहुत आवश्यक है कि उस समस्त दक्षिण की उन्नति के प्रयत्न का केंद्र बनाया जाय।

उत्तर की वक्तृताओं के सबंध में जनरल ने वाशिंगटन को यह उपदेश दे रक्खा था कि—"श्रोताओं को प्रत्येक शब्द के साथ एक एक विचार या कल्पना दो।" अर्थात् तुम्हारे प्रत्येक शब्द से उनके हृदय में एक विचार उत्पन्न हो। वास्तव में यह उपदेश बहुत ही महत्वपूर्ण है और प्रत्येक

बहुत विरोधी हैं। उनका मत है कि ऐसे धनवानों को दोष देने वाले लोग यह बात बिलकुल नहीं जानते कि यदि वे धनवान अपने व्यापार आदि में से बहुत सा धन निकाल कर परोपकार आदि में लगा दें तो उससे कितने अधिक लोग दरिद्र हो जायंगे और कितनों की बहुत अधिक हानि होगी। इसके अतिरिक्त धनवानों के पास जितने अधिक लोग सहायता मांगने जाते हैं उनका उन्हें अनुभव भी नहीं है। अनेक धनवानों के पास दिन में बीस बीस आदमी सहायता मांगने आते हैं। अनेक ऐसे दाता भी होते हैं जो कभी अपना नाम प्रकाशित नहीं करते। बहुत से लोग ऐसे भी होते हैं जिन्हें लोग कंजूस होने के कारण बहुत बुरा भला कहते हैं, और वे ही लोग बहुत बड़े बड़े गुप्त दान दिया करते हैं। ऐसे लोगों के उदाहरण में वाशिंगटन महाशय न्यूयार्क की उन दो भद्र महिलाओं के नाम लेते हैं जिन्होंने गत आठ वर्षों में टस्केजी-विद्यालय के तीन बड़े बड़े भवन बनाने में बहुत अधिक सहायता दी है और जिनके नाम कदाचित् ही कभी प्रकाशित किए जाते हैं।

यद्यपि वाशिंगटन महाशय को टस्केजी-विद्यालय के लिये लाखों रुपये संग्रह करने का सौभाग्य हुआ है तथापि उनके संग्रह करने के प्रकार को कोई "भिक्षा" नहीं कह सकता। वे स्वयं प्रायः लोगों से कहा करते हैं कि न तो मैं "भिक्षुक" हूं और न "भिक्षा" मांगता हूं। उनका दृढ़ विश्वास है कि

किसी धनवान से लगातार धन मांगते रहने में ही प्राप्ति नहीं होती। जो लोग धन उपार्जन करना जानते हैं वे उसका व्यय करना भी खूब जानते हैं। उनका कथन है कि केवल धन माँगने की अपेक्षा अपने किए हुए कार्य्यों का परिचय कराना ही अधिक प्रभावशाली और लाभदायक होता है। दाता लोग इसी बात पर अधिक ध्यान देते हैं।

यद्यपि घर घर माँगने जाने में बहुत अधिक परिश्रम और त्रास होता है तथापि उसका प्रतिफल अवश्य मिलता है। इस कार्य्य में मानवी स्वभाव निरीक्षण करने का बहुत अच्छा अवसर मिलता है। इसके सिवाय मनुष्य को बहुत बड़े बड़े आदमियों से मिलने का भी सुयोग प्राप्त होता है। इस प्रकार किसी देश का स्थूल रूप से निरीक्षण करने में मनुष्य को मालूम हो जाता है कि सब से अधिक परोपकारी और सर्व मान्य वेही लोग होते हैं जो संसार का कल्याण करने वाली संस्थाओं की सहायता करते हैं।

एक बार वाशिंगटन महाशय बोस्टन नगर की एक धनाढ्य महिला से मिलने गए। भेंट होने से पहले ही उसके पति ने आकर उनसे रुखाई से पूछा कि तुम्हें क्या चाहिए? जब वे उसे अपने अभिप्राय जतलाने लगे तो वह इतना अधिक तेज और रूखा होगया कि वाशिंगटन को बिना उस महिला के उत्तर की प्रतीक्षा किए ही लौट आना पड़ा। थोड़ी ही दूर पर वे एक दूसरे मकान में गए जहां उनका

बहुत अच्छा स्वागत हुआ। उस मकान के स्वामी ने उन्हें एक अच्छी रकम का चेक देते हुए कहा—"वाशिंगटन महाशय! आपने मुझे एक अच्छे कार्य्य में सहायता देने का अवसर दिया है इस के लिये मैं आपका बहुत अनुगृहीत हूं। आपके कार्य्यों के लिये हम लोग आपके बहुत ऋणी हैं।" वाशिंगटन महाशय का अनुभव है कि पहले प्रकार के अर्थात् रुखाई का व्यवहार करने वाले मनुष्यों की संख्या घट रही है और दूसरे प्रकार अर्थात् सुजनता का व्यवहार करने वाले मनुष्य दिन पर दिन बढ़ रहे हैं। अर्थात दिन पर दिन धनवान् लोग यह समझते जाते हैं कि इस प्रकार सहायता मांगने वाले लोग भिक्षक नहीं बल्कि उन्हीं का काम करने वाले हैं। बोस्टन नगर में उन्हें उदार और सज्जन मनुष्य बहुत अधिकता से मिले हैं। उनका कथन है कि दाताओं की संख्या दिन पर दिन बढ़ती जाती है।

उत्तर अमेरिका में उन्हें कई कई दिन तक इधर उधर घूमते रहने पर भी कहीं से एक पैसा भी न मिलता था। जिन लोगों से उन्हें बहुत कुछ सहायता मिलने की आशा होती थी, उनसे कुछ भी न मिलता था, और जिन लोगों से कुछ भी न मिलने की आशा होती थी, वे ही कभी कभी भारी रकमें दे दिया करते थे। एक बार उन्होंने सुना कि नगर से बाहर दो मील पर देहात में एक ऐसे सज्जन रहते हैं जो विद्यालय की अवस्था जानने पर उन्हें अच्छी सहायता दे

सकते हैं। एक दिन कड़कड़ाते जाड़े और पाले में दो मील पैदल चल कर ये उनके पास गए। कुछ कठिनता से उनसे भेंट हुई। उन्होंने सब बातें सुनी तो जी लगाकर, पर दिया कुछ भी नहीं। यद्यपि वाशिंगटन ने समझ लिया कि एक पहर व्यर्थ नष्ट हुआ तौभी उन्होंने अपना कर्त्तव्य न छोड़ा। यदि ये उस मनुष्य के पास न जाते तो उन्हें अपना कर्त्तव्य पालन न करने का बहुत दुःख होता। इस घटना के दो वर्ष पीछे वाशिंगटन को दफ्तरी में उसी मनुष्य का एक पत्र मिला जिसमें लिखा था—"आपके कार्य्य की उन्नति के लिये, इस पत्र के साथ मैं न्यूयार्क की, दस हजार डालर की एक हुंडी भेजता हूं। मैंने अपने दानपत्र में यह धन आपके विद्यालय को लिख दिया था, पर अब मैं उसे अपने जीवन-काल में दे देना ही उचित समझता हूं। मैं प्रसन्नता से आपको दो वर्ष पूर्व वाली भेंट का स्मरण दिलाता हूं।

वाशिंगटन महाशय को जितना अधिक संतोष यह हुंडी पाकर हुआ था, उतना कदाचित् और कभी नहीं हुआ। विद्यालय को अब तक जितने दान मिले थे, उन सब से यह दान बड़ा था। साथ ही यह धन ऐसे अवसर पर आया था जब कि बहुत दिनों से विद्यालय को कहीं से कुछ भी न मिला था। धनाभाव के कारण उस समय अधिकारी लोग बहुत चिंतित थे। वाशिंगटन महाशय का कथन है—"किसी ऐसी बड़ी संस्था के कार्य्य-संचालन में,—जिसमें धन की आवश्यकताएं

तो बहुत अधिक हों, पर धन प्राप्ति का कोई मार्ग दिखाई न देता हो—मनुष्य जितना अधिक घबरा जाता है उतना अधिक किसी दूसरी अवस्था में पड़ कर नहीं घबरा सकता।"

वाशिंगटन पर दोहरा उत्तरदायित्व था और इसीलिये उनकी चिंता भी अधिक गहन थी। यदि टस्केजी-विद्यालय गोरों द्वारा संचालित होकर अंत में बैठ जाता तो उससे केवल हबशियों की शिक्षा की हानि होती। पर वाशिंगटन समझते थे कि यदि हबशियों द्वारा संचालित होकर यह विद्यालय बैठ जायगा तो उससे केवल शिक्षा-संबंधी हानि ही नहीं होगी बल्कि भविष्य में हबशियों की योग्यता पर से ही लोगों का विश्वास उठ जायगा। दस हजार की इस हुंडी ने वाशिंगटन को चिंता के बोझ से बहुत कुछ हलका कर दिया।

आरंभ से ही वाशिंगटन सदा अपने अध्यापकों को यही समझाया करते हैं कि विद्यालय की आंतरिक अवस्था जितनी ही निर्मल और सुंदर होगी, उसे बाहर से उतनी ही अधिक सहायता मिलेगी।

वाशिंगटन पहली बार जब हंटिंगटन नामक, रेल की सड़क बनाने वाले एक सज्जन से मिले तो उसने उन्हें विद्यालय के लिये केवल दो डालर दिए थे। उसी हंटिंगटन ने अपनी मृत्यु से कुछ ही मास पूर्व उन्हें उसी कार्य्य के लिये पचास हजार डालर दिए। इसके अतिरिक्त उसने और उसकी स्त्री ने और और भी कई बार विद्यालय की धन द्वारा सहायता

की थी। कुछ लोग कहते हैं कि ये पचास हज़ार डालर टस्केजी विद्यालय को केवल सौभाग्यवश मिल गए थे। पर वाशिंगटन का कथन है कि यह धन कठिन परिश्रम का फल है। बिना परिश्रम के कभी कुछ नहीं मिलता। पहली बार जब उन्हें हंटिंगटन से दो डालर मिले तब से वे बराबर उसे यह जतलाने की चेष्टा करते थे कि उनका विद्यालय अधिक दान का पात्र है। लगभग बारह वर्षों तक वे इसी उद्योग में लगे रहे। ज्यों ज्यों हंटिंगटन की दृष्टि में विद्यालय की उपयोगिता बढ़ती गई त्यों त्यों वे उसकी अधिक सहायता करते गए। धन द्वारा सहायता देने के अतिरिक्त वे समय समय पर वाशिंगटन को विद्यालय परिचालन के विषय में भी बहुत अच्छी सम्मति दिया करते थे।

एक बार पदवीदान के अवसर पर बोस्टन के पादरी डाक्टर डोनल्ड विद्यालय में वक्तृता देने के लिये निमंत्रित किए गए। उस समय वहां बड़े बड़े हाल या कमरे न थे, इसलिये उस अवसर के लिये एक साधारण मंडप बनाया गया। ज्यों ही डाक्टर डोनल्ड वक्तृता देने के लिये खड़े हुए, त्यों ही वर्षा होने लगी। विवश होकर पादरी महाशय को रुक जाना पड़ा और तब एक मनुष्य उन पर छाता लगा कर खड़ा हुआ। थोड़ी देर बाद वर्षा होने पर डाक्टर डोनल्ड ने अपनी वक्तृता समाप्त की। इसके उपरांत डाक्टर महाशय ने साधारणतः कहा कि यदि यहां एक गिरजा बन जाय तो बहुत अच्छा हो। दूसरे

ही दिन वाशिंगटन को इटली प्रवासिनी दो महिलाओं का एक पत्र मिला जिसमें लिखा था कि हम लोगों ने इस गिरजे के लिये आवश्यक धन देना निश्चय किया है।

इसके कुछ ही दिनों बाद अमेरिका के सुप्रसिद्ध दानी मि० एंड्रू कारनेजी ने टस्केजी-विद्यालय के पुस्तकालय के नए भवन के लिये बीस हजार डालर भेजे। विद्यालय का पहला पुस्तकालय एक बहुत ही छोटे और संकीर्ण स्थान में था। मि० कारनेजी से यह सहायता पाने के लिये वाशिंगटन को लगातार दस वर्षों तक परिश्रम करना पड़ा था। पुस्तकालय के भवन के संबंध में वाशिंगटन ने अंतिम पत्र मि० कारनेजी को १५ दिसंबर सन् १९०० को भेजा था। उस पत्र में लिखा था,—

प्रिय महाशय

कई दिन पूर्व जब मैं आपके मकान पर आपसे मिलने गया था तो आपने मुझ से पुस्तकालय-भवन के संबंध में लिखित प्रार्थना पत्र भेजने के लिये कहा था। तदनुसार मैं आज यह पत्र आपकी सेवा में भेजता हूं।

इस समय हमारे विद्यालय में ११०० विद्यार्थी और ८६ अधिकारी और शिक्षक सपरिवार रहते हैं। विद्यालय के आस पास और भी २०० हब्शी रहते हैं। ये सब लोग पुस्तकालय-भवन का उपयोग करेंगे।

हमारे पास १२००० से अधिक ग्रंथ, सामयिक पत्र, और मित्रों के दिए उपहार आदि हैं, पर हमारे पास न तो इस समय उनके रखने के लिये और न वाचनालय के लिये ही कोई उपयुक्त स्थान है।

हमारे विद्यालय के ग्रेजुएट दक्षिण के सभी भागों में कार्य्य करने के लिये जाते हैं और इस पुस्तकालय से जो ज्ञान प्राप्त किया जायगा वह समस्त हबशी जाति की उन्नति में सहायक होगा।

हमारे आवश्यकतानुसार भवन बीस हजार डालर में बन जायगा। ईंटें बनाने और गढ़ने, लकड़ियां गढ़ने और लोहारी आदि का भवन सबंधी कुल कार्य्य विद्यार्थियों द्वारा ही होगा। आपके धन से केवल भवन ही नहीं बनेगा, बल्कि भवन बनने से बहुत से विद्यार्थियों को इमारत के काम की शिक्षा मिलेगी और उनके कार्य्य के पुरस्कार स्वरूप उन्हें जो धन मिलेगा, उसकी सहायता से वे विद्यालय में रहकर शिक्षा प्राप्त कर सकेंगे। मुझे आशा नहीं है कि इतने धन से किसी दूसरी जाति की इतनी अधिक उन्नति हो सकेगी।

यदि आप कुछ और अधिक विवरण जानना चाहेंगे तो मैं आपको वह भी प्रसन्नता पूर्वक बतला दूंगा।

भवदीय

बुकर टी० वाशिंगटन

प्रिंसिपल।

इस पत्र के उत्तर में मि० कारनेजी ने लिख भेजा कि मैं इस कार्य्य के लिये बीस हजार डालर तक देने के लिये बड़ी प्रसन्नता से तैयार हूं। वाशिंगटन का विश्वास है कि यदि व्यवहार बहुत साफ रक्खा जाय तो धनवानों और बड़े आदमियों की उनसे शीघ्र ही सहानुभूति हो जाती है।

यद्यपि टस्केजी-विद्यालय को बहुत बड़ी बड़ी रकमें मिली थीं, तो भी उसका अधिकांश कार्य्य साधारण स्थिति के लोगों के छोटे छोटे दान से ही हुआ है। साधारणतः सभी परोपकारी कार्य्य छोटे छोटे दानों पर ही अवलंबित रहते हैं। एक एक पाई एकत्र करके ही अमेरिका की अनेक खीस्टीय सभाओं ने गत पैंतीस वर्षों में हबशियों की इतनी अधिक काया पलट कर दी है। साधारणतः शिक्षा प्राप्त करने के उपरांत जो ग्राजुएट विद्यालय से निकलते हैं, वे २५ सेंट से १० डालर तक प्रति वर्ष विद्यालय की सहायता के लिये भेजा करते हैं।

विद्यालय के तीसरे वर्ष में उसकी आय के तीन और मार्ग निकल आए और उन मार्गों से विद्यालय को अब तक आय होती है। एक तो एलबामा सरकार ने अपनी सहायता दो हजार डालर से बढ़ा कर तीन हजार डालर प्रति वर्ष कर दी, और आगे चल कर यह सहायता पांच हजार डालर तक पहुंच गई। इस वृद्धि में वहां की व्यवस्थापक सभा के सभ्य माननीय मिस्टर फास्टर ने बहुत उद्योग किया था। दूसरे जान स्लेटर फंड से उन्हें एक हजार डालर प्रति वर्ष मिलने लगे। इसके

अतिरिक्त पीबाडी नामक एक दूसरे फंड से भी उन्हें पांच सौ डालर मिलने लगे। इस समय पहले फंड से विद्यालय को ग्यारह हजार और दूसरे फंड से पंद्रह सौ डालर प्रति वर्ष मिलते हैं।

१३—पांच मिनट की वक्तृता के लिये दो हजार मील की यात्रा।

जब विद्यालय में विद्यार्थियों के निवास आदि का प्रबंध हो गया तो बहुत से ऐसे विद्यार्थियों ने भी विद्यालय में प्रविष्ट होने की प्रार्थना की जो योग्य और सत्पात्र होने पर भी किसी प्रकार की फीस देने में नितांत असमर्थ थे। इस प्रकार के प्रार्थी स्त्री और पुरुष दोनों ही थे। सन् १८८४ में इन लोगों के लिये एक रात्रि पाठशाला स्थापित की गई। इस पाठशाला का संगठन हैम्पटन की रात्रि-पाठशाला के ढंग पर हुआ था। आरंभ में उसमें केवल बारह विद्यार्थी थे। यह निश्चय हुआ कि ये लोग दिन में दस घंटे शिल्प-विभाग में काम करें और संध्या को दो घंटे पाठशाला में पढ़ें। शिल्प-विभाग से उन्हें उनके भोजनादि के व्यय से कुछ अधिक पुरस्कार मिलता था और उसमें से जो कुछ बच रहता था, वह विद्यालय में इसलिये जमा किया जाता था कि आगे चल कर जब ये लोग दिन के विद्यालय में प्रविष्ट हों तो उस जमा किए हुए धन से उनका व्यय चलाया जाय। इस समय इस

रात्रि-पाठशाला में साढ़े चार सौ से अधिक विद्यार्थी पढ़ते हैं।

इस रात्रि-पाठशाला में विद्यार्थियों की योग्यता और शक्ति की बहुत अच्छी परीक्षा हो जाती है। इसीलिये वाशिंगटन भी उन्हें बहुत ही विश्वसनीय समझते हैं। जो पुरुष या स्त्री विद्याभ्यास के लोभ से दिन के समय लगातार ईंटों के भट्टे या धोबीखाने में काम करे, अवश्य ही उसके उच्च शिक्षा के अधिकारी होने में कोई संदेह नहीं है। रात्रि-पाठशाला से निकल कर विद्यार्थी जब दिन की पाठशाला में प्रविष्ट होता है तो उसे सप्ताह में चार दिन पढ़ना और दो दिन काम करना पड़ता है। इसके अतिरिक्त ग्रीष्म ऋतु में भी उसे लगातार तीन मास तक काम करना पड़ता है। बड़े बड़े धनवानों के लड़कों को भी वहां शारीरिक परिश्रम अवश्य ही करना पड़ता है। विद्यालय से तैयार होकर निकलने वाले बहुत अच्छे अच्छे ग्राजुएटों में से अधिकांश ने रात्रि-पाठशाला से ही अपनी शिक्षा आरंभ की थी। विद्यालय में धार्म्मिक शिक्षा पर भी यथेष्ट ध्यान दिया जाता है। यह शिक्षा ईसाई धर्म्म की होती है।

सन् १८८५ में मिस ओलीविया डेविडसन के साथ वाशिंगटन महाशय का विवाह हुआ। विवाह के बाद भी श्रीमती डेविडसन पहले की भांति विद्यालय की उन्नति और उसके लिये धन संग्रह में लगी रहीं। सन् १८८६ में उनका

देहांत हो गया। इस बीच में उन्हें बेकर टेलियाफेरो और अरनेस्ट डेविडसन नामक दो पुत्र हुए थे। बड़े पुत्र बेकर ने ईंटों के काम की बहुत अच्छी शिक्षा पाई है।

लोग प्रायः वाशिंगटन से पूछा करते हैं कि उन्होंने सर्व साधारण में वक्तृता देने का आरम्भ किस प्रकार किया। इसके उत्तर में उनका कथन है कि सार्वजनिक भाषण में मैंने अपने जीवन का बहुत ही थोड़ा अंश लगाया है। बात यह है कि वे सदा कोरी बातें करने की अपेक्षा वास्तविक कार्य्य करना अधिक पसंद करते हैं। जनरल आर्मस्ट्रांग के साथ जब वे उत्तर में धन संग्रह करने गए थे तो वहां जातीय शिक्षा समिति (National Educational Association) के सभापति माननीय टामस डब्ल्यू बिकनेल ने एक सभा में उनकी वक्तृता सुनी थी। उसके कुछ ही समय उपरांत बिकनेल महाशय ने उन्हें उक्त एसोसिएशन के दूसरे अधिवेशन में व्याख्यान देने के लिये निमंत्रित किया। यह अधिवेशन मेडिसन नामक नगर में होने वाला था। वाशिंगटन ने यह निमंत्रण स्वीकार कर लिया। यही मानों उनके सार्वजनिक भाषण का आरम्भ हुआ।

एसोसिएशन में उनकी वक्तृता के समय प्रायः चार हजार आदमी उपस्थित थे। उनमें से बहुत से लोग एलबामा और टस्केजी के भी थे। उनमें से कुछ लोगों ने पीछे से उनसे यह भी कहा था कि हम लोग समझते थे कि वहां आप दक्षिण

अमेरिका के लोगों को कुछ कटु वाक्य सुना देंगे, पर वह बात नहीं हुई। उलटे दक्षिण अमेरिका वालों ने जो अच्छे अच्छे कार्य्य किए थे उनके लिये उनकी प्रशसा की गई थी। वाशिंगटन ने पहले पहल उसी अवसर पर अपनी सारी जाति के विषय में अपने विचार प्रकट किए थे। उनकी वक्तृता से सभी श्रोता बहुत प्रसन्न हुए थे।

जिस समय वाशिंगटन पहले पहल टस्केजी आए थे, उसी समय उन्होंने निश्चय कर लिया था कि वे उसे अपना निवास-स्थान बनावेंगे और वहां के लोगों के अच्छे कार्य्यों की प्रशसा और बुरे कार्य्यों की निंदा, वहीं के गोरों की भांति करेंगे। उन्होंने यह भी निश्चय किया था कि उत्तर में जाकर वे कोई ऐसी बात न कहेंगे, जिसे दक्षिण में कहने के लिये वे तैयार न हों। साथ ही वे भली भांति यह भी समझते थे कि किसी मनुष्य के बुरे आचार-विचार उसे कटु वाक्य सुना कर नहीं बदले जा सकते, बल्कि इस कार्य्य के लिये केवल दोषों की ओर ध्यान आकर्षित करने की अपेक्षा उसके उत्तम कार्य्यों की प्रशंसा करने क अधिक आवश्यकता होती है। अपने इस सिद्धांत का पालन करते हुए भी वे समय समय पर उचित रीति से दक्षिण वालों के दोषों की ओर उनका ध्यान आकर्षित कराया करते हैं। उनकी समझ में दक्षिण वाले उचित आलोचना पर ध्यान देने के लिये सदा तैयार रहते हैं।

अपनी मेडिसन वाली वक्तृता में उन्होंने कहा था कि सब जातियों से सदा उचित उपायों से सुहृद भाव स्थापित करने की चेष्टा करनी चाहिए और वोट देने के समय हबशियों को उन लोगों का ध्यान छोड़ देना चाहिए जो उनसे हजारों मील दूर हैं और जिनके साथ उनका कोई संबंध नहीं है, और सदा उस समाज के लाभों का ध्यान रखना चाहिए, जिसमें वे लोग रहते हैं। हबशियों का सारा भविष्य केवल इसी प्रश्न पर निर्भर है कि उन्हें अपने परिश्रम, योग्यता और आचरण से अपने आपको समाज का बहुत ही उपयुक्त और आवश्यक अंग बना लेना चाहिए या नहीं। जो मनुष्य औरों की अपेक्षा कुछ अधिक अच्छा कार्य्य करता है वह मानों इस प्रश्न की मीमांसा कर लेता है, और जो हबशी दूसरों की आवश्यकताएं जितनी ही अधिक मात्रा में पूरी कर सकता है, वह उतनी ही अधिक प्रतिष्ठा प्राप्त करता है।

अपने इस कथन की सत्यता प्रमाणित करने के लिये उन्होंने एक घटना का उल्लेख भी किया था। उनके विद्यालय के एक ग्राजुएट ने वैज्ञानिक ज्ञान और कृषि के नवीन सिद्धान्तों की सहायता से एक एकड़ भूमि से २६६ मन मीठे आलू उत्पन्न किए थे, पर और लोग एक एकड़ में केवल ४८ मन आलू ही उत्पन्न कर सकते थे। उसके पड़ोसी गोरे खेतिहर उसका आदर करने लगे और उसके पास नए सिद्धान्त सीखने के लिये आने लगे। उनके आदर सत्कार का मुख्य

कारण यही था कि उस ग्राजुएट ने अपने ज्ञान और परिश्रम से अपने समाज का सुख और वैभव बढ़ाया था। अपनी वक्तृता में उन्होंने यह बात भी भलीं भांति समझा दी थी कि हमारी शिक्षा-पद्धति का केवल इतना ही फल नहीं होगा बल्कि आगे चल कर उनके पुत्र पौत्र आदि और भी अधिक उत्तम कार्य्य कर सकेंगे। उनके विचारों का सारांश प्रायः यही था और उनके ये सिद्धांत भी अब तक ज्यों के त्यों बने हैं।

पहले जब वाशिंगटन महाशय किसी मनुष्य को हबशियों के प्रति कोई कटु वाक्य कहते हुए सुनते या उन्हें किसी प्रकार दबाने का उद्योग करते हुए देखते तो मन ही मन बहुत अप्रसन्न होते थे। पर अब उनका वह भाव बदल गया है। अब उन्हें ऐसे मनुष्यों पर उलटे दया आती है। वे समझते हैं कि ऐसी भूल मनुष्य उसी समय करता है जब उसे स्वयं किसी प्रकार की उन्नति करने का अवसर नहीं मिलता। उस मनुष्य पर उन्हें दया इसलिये आती है कि वह संसार की उन्नति में बाधा डालने की चेष्टा करता है। वे यह भी समझते हैं कि समय पाकर संसार की उन्नति में अपनी संकीर्ण अवस्था के कारण वह स्वयं ही लज्जित होगा। मानव जाति की, ज्ञान, सुधार, कला-कुशल, स्वतंत्रता, पारस्परिक सहानुभूति और प्रेम संबंधी उन्नति को रोकने

की चेष्टा करना मानो किसी चलती हुई रेल-गाड़ी को रोकने के लिये स्वयं उसके आगे लेट जाना है।

इस विचार पूर्ण और प्रभावशाली वक्तृता के कारण वाशिंगटन ने उत्तर में अच्छी प्रसिद्धि प्राप्त कर ली और इसके उपरांत समय समय पर भिन्न भिन्न स्थानों से वक्तृता देने के लिये उन्हें अनेक निमंत्रण आने लगे। उस समय वे दक्षिण के गोरे प्रतिनिधियों पर भी अपने विचार प्रकट करने के लिये उत्सुक हो रहे थे। संयोगवश सन् १८९३ में जब एटलांटा में मिशनरियों की बड़ी भारी सभा हुई तो उनकी यह इच्छा पूर्ण होने का अवसर भी उन्हें मिल गया। पर उसी अवसर पर उन्हें बोस्टन में भी कई वक्तृताएं देनी थीं, जिनके कारण एटलांटा में उनका भाषण होना असंभव मालूम होने लगा। अपने निश्चित स्थानों और तिथियों की सूची देखने से उन्हें ज्ञात हुआ कि एक ट्रेन से वे एटलांटा में वक्तृता देने के समय से आध घंटे पहले पहुंच सकते हैं और बोस्टन लौटने से पहले वहां केवल एक घंटे ठहर सकते हैं। एटलांटा से उन्हें जो निमंत्रण आया था उसमें उनकी वक्तृता के लिये केवल पांच मिनट का समय रक्खा गया था। अब उनके सामने प्रश्न केवल यही था कि केवल पांच मिनट की वक्तृता के लिये इतना बड़ा प्रयास करके वे उतनी ही अधिक उपयुक्त वक्तृता दे सकेंगे या नहीं।

वाशिंगटन ने सोचा कि उस अवसर पर बहुत, बड़े बड़े लोग एकत्रित होंगे और उन लोगों को टस्केजी-विद्यालय के कार्य्यों से परिचित कराने तथा गोरों और हवशियों के पारस्परिक संबंध के विषय में कुछ कहने का ऐसा अच्छा अवसर शीघ्र न मिलेगा। इसलिये उन्होंने इतने थोड़े समय के लिये वहां जाना ही निश्चय किया। पांच मिनट तक उन्होंने वहां दो हजार उत्तरी और दक्षिणी गोरों के सामने वक्तृता दी। सबने बड़े ध्यान और उत्साह से उनकी बातें सुनीं। उनकी वक्तृता की वहां अच्छी चर्चा हुई और समाचार पत्रों ने उसकी उत्तम आलोचना की। वाशिंगटन का उद्देश्य सफल हुआ।

अब दिन पर दिन लोगों में उनकी वक्तृता सुनने की चाह बढ़ने लगी और गोरे तथा हवशी सभी उसके लिये समान रूप से उत्सुक होने लगे। टस्केजी-विद्यालय के कार्य्यों से वे जितना समय बचा सकते, उतने समय में वे प्रसन्नतापूर्वक लोगों की इच्छा पूरी करते थे। उत्तर में अधिकांश व्याख्यान विद्यालय के लिये धन-संग्रह करने के उद्देश्य से ही होते थे और हबशियों के सामने जो व्याख्यान दिये जाते थे उनमें उन्हें साधारण और धार्म्मिक शिक्षा के अतिरिक्त औद्योगिक शिक्षा का महत्व भी समझाया जाता था।

१८ सितंबर सन् १८९५ को एटलांटा में "एटलांटा स्टेट्स और इंटरनेशनल एक्सपोजिशन" नाम की एक बड़ी

भारी प्रदर्शिनी खोली गई थी। उस अवसर पर वाशिंगटन महाशय ने जो वक्तृता दी थी, उसके कारण उनकी कीर्ति प्राय सारे राष्ट्र में फैल गई। पहली बार एटलांटा में उन्होंने पांच मिनट की जो वक्तृता दी थी उसके कारण सर्वसाधारण में उनका आदर मान बहुत अधिक बढ़ गया था और इसीलिये लोगों ने उन्हें दूसरी वक्तृता देने के लिये निमत्रण दिया था। सन् १८९५ की वसंत ऋतु में उन्हें एटलांटा के मुख्य मुख्य नागरिकों का एक तार मिला जिसमें उन्हें उस कमेटी में सम्मिलित होने के लिये निमत्रित किया गया था जो प्रदर्शिनी के वास्ते सरकारी सहायता मागने के लिये वाशिंगटन की कांग्रेस की एक कमेटी के समक्ष जाने वाली थी। जिस कमेटी में सम्मिलित होने के लिये वाशिंगटन निमत्रित किए गए थे उसमें जार्जिया के पचीस बहुत प्रतिष्ठित और विद्वान् सज्जन सम्मिलित थे, जिनमें से वाशिंगटन के अतिरिक्त केवल दो और सभ्य हबशी थे। कमेटी के सामने सब से पहले मेयर तथा अन्य कई प्रतिष्ठित नागरिकों के भाषण हुए। तदुपरात दोनों हबशी बिशपों ने अपना वक्तव्य सुनाया और सब से अंत में वाशिंगटन ने कुछ कहा। इससे पहले न तो वे कभी इस प्रकार की कमेटी के सामने कुछ बोले थे और न कभी राजनगर में उनका भाषण हुआ था। उस अवसर पर भी उन्होंने यही कहा था कि यदि कांग्रेस वास्तव में दक्षिण से जाति भेद का भाव दूर करना चाहती है तो उसे उचित है कि वह यथाशक्ति शीघ्र

उनकी सांपत्तिक और मानसिक उन्नति के लिये यथोचित चेष्टा करे। उन्होंने यह भी कहा था कि एटलांटा की प्रदर्शिनी में दोनों जातियों को, दास्तव-काल से अब तक की हुई अपनी अपनी उन्नति दिखलाने का सुयोग मिलेगा और साथ ही भविष्य में और अधिक उन्नति करने के लिये उत्तेजना मिलेगी। यद्यपि केवल राजनैतिक आंदोलन से ही हबशियों का कल्याण नहीं हो सकता तौ भी उनके राजनैतिक अधिकारों को नष्ट करने का कोई प्रयत्न नहीं होना चाहिए। इसके अतिरिक्त हबशियों को दरिद्र, परिश्रमी, मितव्ययी, बुद्धिमान् और शुद्धाचारी भी होना चाहिए, क्योंकि बिना इन बातों के कोई जाति स्थायी सफलता नहीं प्राप्त कर सकती। यदि इस कमेटी की प्रार्थना स्वीकार करके कांग्रेस धन की सहायता दे देगी तो अवश्य ही उससे दोनों जातियों का वास्तविक और चिरस्थायी कल्याण होगा। सिविल वार के उपरांत उसे इस प्रकार का यह पहला ही सुअवसर मिला है।

वाशिंगटन का यह भाषण कोई पंद्रह या बीस मिनट तक हुआ था। उसकी समाप्ति पर जार्जिया वाली तथा कांग्रेस कमेटी ने उन्हें अनेक हार्दिक धन्यवाद दिए थे। कमेटी ने एक मत होकर सरकार में बहुत ही अनुकूल सम्मति लिख भेजी और शीघ्र ही धन-दान की भी स्वीकृति हो गई। साथ ही यह भी निश्चय हो गया कि एटलांटा प्रदर्शिनी को यथेष्ट सफलता प्राप्त होगी।

इस यात्रा से लौट कर प्रदर्शिनी के संचालकों ने निश्चय किया कि प्रदर्शिनी में एक ऐसा बड़ा भवन बनवाना बहुत ही उपयुक्त होगा जिसमें यह दिखलाया जाय कि दास-काल से अब तक हबशियों ने क्या उन्नति की है। यह भी निश्चय हुआ कि यह इमारत केवल हबशी कारीगरों से ही बनवाई जाय। यह निश्चय शीघ्र ही कार्य्य रूप में भी परिणत हो गया। हबशियों का भवन किसी बात में शेष भवनों से कम नहीं था। प्रदर्शिनी के संचालक पहले चाहते थे कि इस कार्य्य का प्रबंध वाशिंगटन पर छोड़ा जाय, पर उस समय विद्यालय में कार्य्य की अधिकता होने के कारण उन्होंने यह बात स्वीकार न की। उनकी सम्मति से एक दूसरे सज्जन को यह कार्य्य सौंपा गया था और वाशिंगटन ने उन्हें यथेष्ट सहायता दी थी। हैंपटन तथा टस्केजी विद्यालय की भेजी हुई चीज़ों पर लोगों का ध्यान बहुत आकर्षित होता था। दक्षिणी गोरे इस विभाग की चीजें देख कर बहुत ही चकित और प्रसन्न हुए थे।

प्रदर्शिनी खुलने का दिन समीप आया और कार्य्यक्रम निश्चित होने लगा। कुछ लोगों ने प्रस्ताव किया कि उस अवसर पर किसी हबशी से भी आरंभिक वक्तृता दिलवाई जाय, क्योंकि इससे दोनों जातियों में सद्भाव की पूर्ति होगी। यद्यपि कुछ लोगों ने इसका विरोध किया, तौ भी सुयोग्य डाइरेक्टरों ने एक हबशी को आरंभिक वक्तृता देने के लिये निमंत्रित करना निश्चय कर लिया। कई दिनों के बाद विवाद

के उपरांत यह भी निश्चय हुआ कि यह वक्तृता वाशिंगटन महाशय दें। शीघ्र ही हमारे चरितनायक को इस संबध का निमत्रण भी मिल गया।

इस निमंत्रण के भारी उत्तरदायित्व का ठीक ठीक अनुमान वही कर सकता है जो स्वयं कभी उस स्थिति में पड़ा हो। वाशिंगटन को अपनी पहले की दीन दशा का स्मरण हो आया। सभव था कि उस अवसर पर उनके पूर्व-स्वामियों में से भी कोई उपस्थित होता। एक हबशी के लिये ऐसे महत्व पूर्ण जातीय अवसर पर दक्षिणी गोरे पुरुषों और स्त्रियों के साथ एक ही प्लेटफार्म पर खडे होकर वक्तृता देने का यह पहला ही अवसर था। वे यह भी जानते थे कि उस अवसर पर अनेक वडे बड़े दक्षिणी तथा उत्तरी गोरे और उनके बहुत से स्वजातीय लोग भी उपस्थित होंगे।

उन्होंने अपने भारी उत्तरदायित्व को समझते हुए निश्चय किया कि इस अवसर पर मैं केवल वेही बातें कहूंगा जिन्हें मैं हृदय से सत्य और ठीक समझूंगा। उन्हें इस बात की कोई सूचना नहीं मिली थी कि वे कौन सी बातें कहें और कौन सी छोड दें। वाशिंगटन के लिये यह बात कुछ कम गौरव की नहीं थी। यद्यपि प्रदर्शिनी के डाइरेक्टर यह बात भली भांति जानते थे कि यदि वाशिंगटन चाहेंगे तो वे अपने एक वाक्य से प्रदर्शिनी की बहुत सी मर्य्यादा नष्ट कर देंगे तथापि उन लोगों ने उनका विश्वास किया। यदि वाशिंगटन चाहते

तो ऐसी अनुचित वक्तृता दे सकते थे कि जिसके कारण भविष्य में कई बरसों तक कोई हबशी ऐसे अवसरों पर वक्तृता देने के योग्य न समझा जाता। पर नहीं, उन्होंने उत्तरी और दक्षिणी गोरों के संबध में बहुत ही ठीक और उपयुक्त बातें कहना निश्चय किया।

उत्तर और दक्षिण के समाचार पत्रों में वाशिंगटन की इस होनेवाली वक्तृता के संबध में खूब टीका टिप्पणियां होने लगीं। बहुत से दक्षिणी गोरे पत्र वाशिंगटन की वक्तृता के विरोधी थे। कई हबशियों ने भी उन्हें कहने के लिये अनेक बातें सुझाई थीं। उस समय विद्यालय का वर्षारंभ होने के कारण उन्हें कार्य्य भी बहुत अधिक था, तौ भी समय निकाल कर जल्दी जल्दी उन्होंने अपना भाषण तैयार किया। यद्यपि उन्होंने बहुत अच्छा भाषण तैयार कर लिया था तौ भी मन में उन्हें एक प्रकार की धुकधुकी लगी हुई थी। उन्होंने अपना भाषण अपनी स्त्री को सुनाया, उन्होंने उसे बहुत सराहा। प्रदर्शिनी खुलने से दो दिन पहले, विद्यालय के अनेक अध्यापकों के इच्छा प्रदर्शित करने पर उन्होंने अपना भाषण उन्हें भी पढ़ सुनाया। सब लोगों ने सुनकर उनके विचारों की अच्छी प्रशंसा की जिससे वाशिंगटन के मन की धुकधुकी भी कुछ कम हुई।

१८ सितंबर को प्रदर्शिनी खुलने को थी, इस लिये १७ सितंबर को प्रातःकाल मि० वाशिंगटन अपनी स्त्री और तीनों

नेताओं सहित पटलांटा के लिये रवाना हुए। मार्ग में अनेक गोरे और हवशी उनकी ओर उंगलियां उठाते थे। पटलांटा में एक कमेटी ने उनका स्वागत किया। उस समय सारा नगर अनेक विदेशी राज्यों के प्रतिनिधियों, और बड़ी बड़ी नागरिक और सामरिक संस्थाओं से ठसाठस भरा हुआ था। समाचार पत्रों में बड़ी धूमधाम से दूसरे दिन के कार्य्यक्रम प्रकाशित हो रहे थे। इन सब बातों से वाशिंगटन के हृदय का बोझ और भी बढ़ गया। उस रात को उन्हें पूरी निद्रा भी न आई। दूसरे दिन प्रातःकाल उन्होंने फिर ध्यानपूर्वक अपनी वक्तृता पढ़ी और घुटनों के बल बैठकर अपने सदा के नियमानुसार ईश्वर से उद्योग में सफलता के लिये प्रार्थना की।

वाशिंगटन का सदा यही उद्देश्य रहता है कि प्रत्येक मनुष्य के हृदय पर उनकी बातों का पूरा पूरा प्रभाव पड़े। वक्तृता देते समय वे कभी इस बात की परवाह नहीं करते थे कि समाचार पत्र या और लोग उनके विषय में क्या कहेंगे। उस समय उनकी सारी सहानुभूति और शक्ति श्रोताओं की ओर जा लगती है।

प्रातः काल बहुत से लोग जलूस निकाल कर उन्हें प्रदर्शिनी स्थल तक ले जाने के लिये उनके निवासस्थान पर आए। इस जलूस में मुख्य मुख्य हवशी नागरिक गाड़ियों पर सवार होकर सम्मिलित हुए थे। तीन घंटे में जलूस प्रदर्शिनी तक पहुंचा। रास्ते भर उस पर बहुत कड़ी धूप

पड़ी थी। बहुत अधिक गरमी के कारण वाशिंगटन बहुत शिथिल हो गए और उन्हें अपनी सफलता में सन्देह होने लगा। सारा सभास्थल मनुष्यों से ठसाठस भरा हुआ था, इसके अतिरिक्त स्थानाभाव के कारण हजारों श्रोता बाहर खड़े हुए थे। उनके पहुचने पर गोरों ने कम और हबशियों ने बहुत अधिक तालियां बजाई। गोरे श्रोताओं में कुछ तो केवल विनोद के कारण और कुछ उनसे सहानुभूति रखने के कारण आए थे, पर उन्हें पहले से ही मालूम हो गया था कि उनमें अधिकांश ऐसे ही लोग थे जो उन्हें केवल मूर्ख बनाने और उनकी हँसी उड़ाने के लिये वहां आए थे।

टस्केजी विद्यालय के एक ट्रस्टी और वाशिंगटन के एक मित्र एटलांटा में रहकर भी इसलिये उस अवसर पर जान बूझ कर उपस्थित नहीं हुए थे, कि उन्हें इस बात का बड़ा भारी सन्देह था कि न तो वाशिंगटन का वहां यथेष्ट सम्मान होगा और न उन्हें पूरी सफलता होगी।

१४–एटलांटा प्रदर्शिनी में व्याख्यान।

गवर्नर बुलक ने आरम्भ में एक छोटी सी वक्तृता देकर प्रदर्शिनी खोली। तदुपरांत दो एक प्रार्थनाएं और स्तोत्र-पाठ आदि होने पर प्रदर्शिनी के सभापति तथा महिलामण्डल के सभापति की वक्तृताएं हुईं। अंत में गवर्नर बुलक ने

लोगों को मि० वाशिंगटन का परिचय दिया। अब वाशिंगटन वक्तृता देने के लिये खड़े हुए। सब ने, विशेषतः हवशियों ने, खूब करतलध्वनि की। हजारों मनुष्यों की दृष्टि केवल वाशिंगटन पर ही गड़ी हुई थी। उन्होंने अपना व्याख्यान इस प्रकार आरंभ किया,—

"मान्यवर सभापति, डाइरेक्टर्स बोर्ड के सभ्य, तथा नागरिक महाशयो!

दक्षिण के वासियों में एक तृतीयांश हवशी हैं। बिना इन लोगों का ध्यान रक्खे किसी प्रकार की साम्पत्तिक, सामाजिक या नैतिक उन्नति में पूरी पूरी सफलता नहीं हो सकती। मेरी जाति के लोग खूब समझते हैं कि इस विशाल प्रदर्शिनी के संचालकों ने इसकी उन्नति के पद पद पर हवशियों के पराक्रम और महत्त्व का जितना आदर किया है, उतना और किसी ने कभी नहीं किया। हम लोगों की मुक्ति के उपरांत आज तक जितने कार्य्य हुए हैं उन सब की अपेक्षा इस कार्य्य से दोनों जातियों की मित्रता बहुत अधिक दृढ़ हुई है।

यही नहीं बल्कि यह अवसर प्राप्त करने के कारण हम लोगों में औद्योगिक उन्नति का एक नया युग आरंभ होगा। अज्ञान और अनुभवहीन होकर भी हम लोगों ने मूल की ओर से नहीं बल्कि शिखर की ओर से अपना कार्य्य आरम्भ किया था। आरंभ में हम लोग औद्योगिक परिश्रम करने की अपेक्षा कांग्रेस या राजसभा में स्थान पाने का अधिक प्रयत्न करते थे।

कोई दूध का कारखाना जारी करने या फलों का बाग लगाने की अपेक्षा राजसभा या अन्य स्थलों में वक्तृता देने के लिये हम लोग अधिक आकर्षित होते थे।

समुद्र में भूले भटके एक जहाज ने कई दिनों के उपरांत एक दूसरा जहाज देखा। भूले हुए जहाज के आरोही बहुत अधिक घाम के कारण मर रहे थे। उन्होंने इसी आशय का एक चिह्नपट अपने मस्तूल पर लगा रक्खा था। दूसरे जहाज ने उत्तर में कहा—'जिस स्थान पर तुम हो, वहीं बाल्टी लटकाओ।" उस जहाज ने पुनः इशारे से पानी माँगा और उसे फिर वही उत्तर मिला। तीसरी और चौथी बार फिर पानी मागा गया और वही उत्तर मिला। अत में उस जहाज के कप्तान ने बाल्टी लटका कर पानी खींचा और उसे अमेजन (अमेरिका की एक नदी) के मुहाने का सुन्दर, स्वच्छ और पीने योग्य जल मिल गया। हमारे जो जाति भाई अपने साथी दक्षिणी गोरों से मित्रता रखना अधिक महत्त्वपूर्ण नहीं समझते और विदेश में जाकर अपनी उन्नति करना चाहते हैं, उनसे मैं यही कहूंगा कि—"जिस स्थान पर तुम हो, वहीं बाल्टी लटकाओ।' अपने आस पास की जातियों के साथ मित्रता स्थापित करो।

कृषि, शिल्प और व्यापार आदि में अपनी बाल्टी लटकाओ। दक्षिण वाले और बातों के लिये चाहे भले ही दोषी हों, पर व्यापार में वे लोग हबशियों को उपयुक्त अवसर दिया

करते हैं। यह प्रदर्शिनी इस बात का बहुत अच्छा प्रमाण है। दासत्व से छूटकर स्वतंत्र होने में हम लोगों को इस बात का ध्यान नहीं रहा कि हममें से अधिकांश का जीवन केवल शिल्प और कला पर निर्भर है और हम लोग परिश्रम करके ही सम्पन्न हो सकते हैं। हम लोग यह बात भूल गए हैं कि केवल दिखौआ और तड़क भड़क का जीवन छोड़ कर अपना जीवन-क्रम जितना ही वास्तविक और उपयुक्त रक्खेंगे उतना ही अधिक हमारा कल्याण होगा। जब तक कोई जाति कविता करने और खेत जोतने में समान प्रतिष्ठा न समझेगी तब तक वह सम्पन्न नहीं हो सकती। हम लोगों को जीवन के शिखर से नहीं बल्कि मूल से अपना कार्य्य आरंभ करना चाहिए। अपने कष्टों के सामने हमें सुअवसरों को न दबने देना चाहिए।

जो गोरे दक्षिण की उन्नति के लिये विदेशियों को अपने में मिलाना चाहते हैं, उनसे भी मैं यही कहना चाहता हूँ कि—"जिस स्थान पर तुम हो, वहीं बाल्टी लटकाओ।" उन्हीं अस्सी लाख हबशियों में अपनी बाल्टी लगकाओ जिनके स्वभाव से तुम परिचित हो और जिनकी सत्यता तथा स्वामि-भक्ति की परीक्षा तुम ऐसे अवसर पर कर चुके हो जब कि वे अपने कपट-व्यवहार से तुम्हारा सर्वस्व नष्ट कर सकते थे। अपनी बाल्टी उन्हीं लोगों में लटकाओ जिन्होंने बिना हड़ताल या उपद्रव किए खेत जोते हैं, जंगल साफ किए हैं,

रेल की सड़कें बनाई हैं, नगर बनाए हैं, पृथ्वी के गर्भ से धनागार निकाले हैं और दक्षिण को इतना उन्नत बनने में सहायता दी है। इसी प्रकार उन्हें सहायता और उत्तेजना दो और उन्हें मानसिक, शरीरिक और आत्मिक शिक्षा दो। वे लोग तुम्हारी बची हुई भूमि लेंगे, तुम्हारे रद्दी खेतों को उपजाऊ बना देंगे और तुम्हारे कारखाने चलाएंगे। इस प्रकार अतीत काल की भांति भविष्य में भी आपको पूरा समाधान रहेगा कि आपके पार्श्ववर्ती संसार में सबसे अधिक धीर, विश्वसनीय और राज्यनियमों का पालन करने वाले हैं। भूत काल में हम लोगों ने जिस प्रकार आपके बालकों का पालन करके, आपके रुग्न माता-पिता की सेवा शुश्रुषा करके और प्राय उनकी मृत्यु पर आसू बहा कर आप पर अपनी भक्ति प्रकट की है उसी प्रकार भविष्य में भी हम लोग विदेशियों से कहां अधिक भक्ति के साथ आपको सहारा देंगे, सदा आप पर अपना जीवन न्योछावर करने के लिये तैयार रहेंगे और आवश्यकता पड़ने पर दोनों जातियों के हित के लिये अपने औद्योगिक, व्यापारिक और धार्मिक जीवन को आपमें मिलाकर एक कर देंगे। सामाजिक कार्यों में हाथ की उंगलियों की भांति भिन्न भिन्न होने पर भी पारस्परिक उन्नति के कामों में हम लोग हाथ की भांति एक हो जायगे।

जब तक हम सबों की वृद्धि और उन्नति न हो, तब तक हममें से कोई भी निर्भय या रक्षित नहीं रह सकता। यदि

कहीं हबशियों की उन्नति रोकने का कोई उद्योग होता हो, तो उस उद्योग को उन लोगों को उपयुक्त और बुद्धिमान् नागरिक बनाने की उत्तेजना में परिणत करो। इस प्रकार के उद्योगों से आप को हजार गुना अधिक लाभ होगा। इससे दोनों पक्षों का कल्याण होगा। मानवी अथवा दैवी नियमों से कभी छुटकारा नहीं हो सकता, कहा है,—"सृष्टि के कभी न बदलने वाले नियमों के अनुसार अन्याय करने वाले भी बँधे हुए हैं और उसे सहने वाले भी। जिस प्रकार पाप और (उसका फल) दुःख दोनों साथ हैं उसी प्रकार साथ साथ हम (अन्याय करने और सहने वाले) लोग भी अपने भाग्य (मृत्यु) की ओर बढ़ते जा रहे हैं।" *

एक करोड़ साठ लाख हाथ या तो तुम्हें भार उठाने में सहायता देंगे और या तुम्हारी इच्छा के विरुद्ध तुम्हें बोझ सहित और नीचे ढकेलेंगे। हम लोग, दक्षिण की जनसंख्या के एक तृतीयांश या तो अपराधी और अज्ञान बने रहेंगे और या उन्नत और बुद्धिमान् बन जायंगे। या तो हम लोग आपके व्यापार और वैभव में वृद्धि करेंगे और या मृतक बन कर आप की उन्नति में बाधक होंगे।

---

*The laws of changeless justice bind
Oppressor with oppressed;
And close as sin and suffering joined
We march to fate abreast.

महाशयो ! उन्नति संबंधी जितने कार्य्य हम लोगों ने इस प्रदर्शिनी में कर दिखलाए हैं, उनसे अधिक की आशा आप लोग हम से न रक्खें। तीस वर्ष पूर्व हमारी दशा बहुत ही हीन और शोचनीय था और हमारे पास कुछ भी न था। तब से अब तक खेती के औजार, बग्घियां, भाप के इंजिन, समाचारपत्र, पुस्तकें, मूर्त्तियां और चित्र आदि बनाने आदि के कामों में हम लोगों ने जितनी उन्नति की है, उसमें हम लोगों को कम कठिनाइयां नहीं सहनी पड़ी हैं। यद्यपि अपनी स्वतंत्र चेष्टा से बनाई हुई चीज़ें प्रदर्शित करने का हमें गर्व है, तथापि हम लोग यह बात नहीं भूले हैं कि यदि दक्षिण के राज्य और उत्तर के अनेक परोपकारी महात्मा धन द्वारा उदारतापूर्वक हमारी सहायता न करते तो हमारे ये कार्य्य आपके अनुमान और आशा से बहुत कम होते।

हमारी जाति में जो लोग अधिक बुद्धिमान् हैं वे सामाजिक समानता के विषय में आंदोलन करना बड़ी भारी मूर्खता समझते हैं, और बनावटी ढंग की सहायता की अपेक्षा निरंतर दृढ़ प्रयत्न करके अपने अधिकार प्राप्त करना अधिक उत्तम समझते हैं। जो जाति संसार में बिकने के लिये कोई चीज़ बना सकती है वह कभी अवहेला की दृष्टि से नहीं देखी जा सकती। यह बात बहुत ठीक है कि हम लोगों को सब प्रकार का राजनैतिक अधिकार मिलना बहुत आवश्यक और ठीक है, पर यह बात और भी अधिक आवश्यक है कि हम लोग

उन अधिकारों का भोग करने के योग्य बनें। किसी नाटक-घर में जाकर एक डालर खर्च करने की अपेक्षा किसी कारखाने में काम करके एक डालर कमाना कहीं अधिक उत्तम है।

उपसंहार में मैं फिर यही दोहराना चाहता हूं कि इस प्रदर्शिनी ने हम लोगों को जितनी अधिक आशा और उत्तेजना दिलाई है और गोरों से हमारा जितना संबंध बढाया है, उतना किसी और दूसरे अवसर या कार्य्य ने नहीं किया। तीस वर्ष पूर्व हम दोनों जातियों ने खाली हाथ प्रयत्न आरंभ किया था। इन तीस वर्षों में दोनों जातियों ने जो उन्नति की है वह इस वेदी के समक्ष उपस्थित है। इस वेदी के सामने नम्रतापूर्वक झुक कर मैं यह कहना चाहता हूं कि दक्षिण के लोगों के सामने जो बड़ा और गूढ प्रश्न उपस्थित है उसकी मीमांसा में आप लोगों को हमारी जाति से सदा सहायता और सहानुभूति मिलती रहेगी। पर इस बात का आप सदा ध्यान रक्खें कि खेत, जंगल, खान, कारखाने आदि तैयार करके प्रदर्शिनी में रक्खा हुआ माल तो अवश्य ही आपको लाभ पहुंचा देगा, पर नियमानुसार सब के साथ उचित न्याय करने के उद्देश्य से परस्पर का जातिद्वेष और भेदभाव नष्ट करने का जो फल या लाभ होगा वह इन भौतिक पदार्थों से होने वाले लाभों की अपेक्षा कहीं अधिक होगा। और इन सब बातों से हमारा प्रिय दक्षिण एक नया स्वर्ग और नया विश्व बन जायगा।"

वाशिंगटन की वक्तृता समाप्त होते ही गवर्नर बुलक तथा अन्य कई लोगों ने बढ़ कर सैटफार्म पर उन्हें हाथों हाथ लिया। उन्हें इतनी अधिक हार्दिक बधाइयां मिलने लगीं कि उस स्थान से निकलना उन्हें कठिन हो गया। दूसरे दिन प्रातःकाल जब वे बजार गए तो बहुत से लोगों ने उन्हें चारों ओर से घेर लिया और उनसे हाथ मिलाना चाहा। जिस गली कूचे में वे जाते वहीं लोग उनसे मिलने और उनका आदर सम्मान करने लगते, यहां तक कि अंत में निवश होकर उन्हें अपने डेरे पर लौट आना पड़ा। एक दिन और वहां रह कर वे टस्केजी लौट आए। एटलांटा से टस्केजी तक प्रायः सभी स्टेशनों पर उन्हें बहुत से लोग देखने और उनसे हाथ मिलाने के लिये आए थे।

प्रायः सभी समाचर पत्रों में उनकी यह वक्तृता प्रकाशित हो गई। और महीनों तक उस पर अनुकूल सम्पादकीय सम्मतियां निकलती रहीं। एक प्रसिद्ध पत्र के सम्पादक ने अपने एक सहयोगी को तार द्वारा लिखा था—"दक्षिण में आज तक जितने व्याख्यान हुए हैं, उन सब में, प्रोफेसर वाशिंगटन का व्याख्यान परम उत्कृष्ट और स्मरणीय है। उनका स्वागत भी वैसा ही अपूर्व हुआ था। उनके व्याख्यान से बहुत सी नई बातों का ज्ञान हुआ।" एक दूसरे पत्र-सम्पादक ने लिखा था—" वाशिंगटन की वक्तृता ने प्रदर्शिनी

सदा उनकी बहुत प्रशंसा करते हैं। हबशियों के भवन में वे दरिद्र और बुड्ढे हबशियों से मिल और हाथ मिलाकर उतना ही प्रसन्न होते थे जितना करोड़पतियों से मिल कर। इस समय हबशियों ने अपनी पुस्तकों या कागज के टुकड़ों पर उनसे हस्ताक्षर करा लिये थे। उन्होंने भी वे हस्ताक्षर इतनी सावधानता और धैर्य्य से किए थे, मानों वे किसी बहुत ही आवश्यकीय पत्र पर हस्ताक्षर कर रहे हों। उन्होंने टस्केजी विद्यालय को स्वयं भी आर्थिक सहायता दी है और अपने मित्रों से भी दिलवाई है।

ऐसे ही ऐसे महानुभावों से मिल कर वाशिंगटन ने सिद्धांत किया है कि केवल तुच्छ और छोटे मनुष्य ही स्वार्थी होते हैं कभी अच्छी पुस्तकें नहीं पढ़ते, कभी प्रयास नहीं करते और कभी दूसरों से नहीं मिलते। जिन लोगों की दृष्टि जाति द्वेष के कारण संकुचित हो जाती है उन्हें संसार के सर्वोत्कृष्ट पदार्थों या मनुष्यों का परिचय कभी नहीं हो सकता। जो लोग सब से अधिक परोपकार करते हैं वेही सब से अधिक प्रसन्न रहते हैं और जो लोग सब से कम परोपकार करते हैं वे सब से अधिक दुःखी रहते हैं। वे सदा सब अवसरों पर अपने सब विद्यार्थियों को यही उपदेश देते हैं कि मनुष्य का जीवन वास्तविक परोपकार के लिये ही है और आवश्यकता पड़ने पर उसके लिये प्राण तक न्यौछावर कर देने में किसी को संकोच न करना चाहिए।

एक बार एक समाचार पत्र के पादरी सम्पादक ने अपने पत्र में प्रकाशित करने के लिये वाशिंगटन से हबशी धर्मोपदेशकों के संबंध में उनकी सम्मति मांगी थी, तदनुसार उन्होंने अपनी यथार्थ सम्मति लिख भेजी थी। उसे पढ़ कर अनेक हबशी धर्मोपदेशक बहुत बिगड़े थे। एक वर्ष बाद तक सभी समितियां, सभाएं और संस्थाएं उन्हें उलटी सीधी सुनाती रहीं और उनसे अपना कथन लौटा लेने या उसमें कुछ सुधार करने के लिये कहती रहीं। अनेक संस्थाओं ने तो अपनी ओर से यहां तक निश्चय कर दिया था कि लोग अपने बालकों को टस्केजी-विद्यालय में न भेजें। एक समिति ने लोगों को यही बात जतलाने के लिये एक विशेष मनुष्य तक नियुक्त कर दिया था। उस मनुष्य ने और लोगों को तो अपने बालकों को टस्केजी-विद्यालय में भेजने के लिये अवश्य मना कर दिया था, पर स्वयं अपने पुत्र को जो उसी विद्यालय में पढ़ता था वहां से न हटाया।

इतना सब कुछ होने पर भी वाशिंगटन ने कभी अपनी सम्मति का खंडन नहीं किया। उनका कथन ठीक था और वे समझते थे कि समय पाकर और शांतिपूर्वक विचार करके लोग उनके मत का समर्थन करने लगेंगे। शीघ्र ही जब बड़े बड़े पादरियों ने उपदेशकों की दशा का अनुसंधान आरंभ किया तो उन्हें वाशिंगटन के कथन की सत्यता प्रतीत होने लगी। एक बड़े पादरी ने तो यहां तक कहा था कि

वाशिंगटन ने उपदेशकों की दुरवस्था का चित्र खींचने में उनके अनेक दोष छोड़ दिए हैं। अब लोग उपदेशकों की दशा के सुधार की अवश्यकता समझने लग गए थे। वास्तव में वाशिंगटन की सम्मति ने ही लोगों का ध्यान उस ओर आकर्षित किया था, उन दोषों को दूर करके उपदेशक के कार्य्य के लिये योग्यतर मनुष्यों को उस क्षेत्र में प्रविष्ट कराया था। जिन लोगों ने आरंभ में इस कार्य्य के लिये उनकी निंदा की थी वे ही अब हृदय से उन्हें धन्यवाद देते हैं। उपदेशकों की दशा भी अब उत्तम और संतोषजनक हो गई है।

सितंबर सन् १८९५ के अंत में बाल्टीमोर की जांस होपकिंस यूनिवर्सिटी के सभापति डा० गिलमैन ने, जो एटलांटा प्रदर्शिनी के पुरस्कार देनेवाले जजों की समिति के सभापति भी थे, वाशिंगटन को एक पत्र भेजकर उनसे उक्त प्रदर्शिनी के शिक्षा विभाग के पुरस्कार देने के लिये जज होने की प्रार्थना की थी। उत्तर में उन्होंने भी जज होना स्वीकार कर लिया और एक मास तक एटलांटा में रह कर वहां का कार्य्य किया। कुल जजों की संख्या साठ थी, जिसमें आधे गोरे और आधे हबशी थे। वाशिंगटन ही उन सब की समिति के मंत्री बनाए गए थे। हबशियों के अतिरिक्त गोरों के विद्यालयों की प्रदर्शित की गई चीजों का भी उन्होंने बहुत ही निष्पक्ष भाव से निरीक्षण किया था और सब लोगों ने अपनी चीजें दिखलाते

स्त्रियां खड़ी होकर प्रसन्नता से तालियां बजाने लगीं, ऐसा मालूम होता था कि मानो वक्ता ने सब पर जादू कर दिया है।

जब वाशिंगटन ने अपना हाथ ऊपर उठाकर और उंगलियां फैलाकर अपनी जाति की ओर से दक्षिणी गोरों से कहा—"सामाजिक कार्य्य में हाथ की उंगलियों की भाँति भिन्न भिन्न होने पर भी पारस्परिक उन्नति के कामों में हम लोग हाथ की भांति एक हो जांयगे।" और उनकी आवाज की लहर जाकर चारों ओर दीवारों से टकराई तो समस्त श्रोता उठ कर खड़े हो गए और मारे आनंद के तालियां बजाने लगे।

मैंने बड़े बड़े वक्ताओं के भाषण सुने हैं, पर मेरी समझ में इस हबशी ने उन लोगों के सामने खड़े होकर जो उसे किसी समय उसकी जाति को परतंत्र और पराधीन रखने के लिये लड़े थे, जिस उत्तमता से अपने विचार और पक्ष का समर्थन किया था उतनी उत्तमता से शायद स्वयं ग्लैडस्टोन भी न कर सकते। एक दरिद्र हबशी की आंखों से, जो ध्यान से उनकी वक्तृता सुन रहा था, आंसू बहने लगे। और भी अनेक हबशियों की यही दशा हो गई, पर कदाचित् वे लोग स्वयं अपनी इस दशा का कोई कारण नहीं जानते थे। वक्तृता की समाप्ति पर गवर्नर बुलक ने दौड़ कर वक्ता को दोनों [illegible] पकड़ लिया। लोगों ने फिर

राय कई मिनटों तक हाथ में हाथ दिए एक दूसरे को देखते हुए खड़े रह गए।"

इसमें सन्देह नहीं कि एटलांटा प्रदर्शिनी की वक्तृता के कारण समस्त देश में वाशिंगटन की योग्यता का झंडा फहराने लगा। चारों ओर से वक्तृता देने के लिये उन्हें अनेक निमंत्रण मिलते थे। वाशिंगटन भी यथा अवकाश उपयुक्त अवसरों पर जाकर वक्तृताएं दिया करते थे। वे सदा ऐसे ही अवसरों पर वक्तृता दिया करते थे जहां उन्हें अपनी वक्तृता से अपनी जाति का कुछ उपकार होने की आशा होती थी। उनका कथन है कि वे स्वयं यह नहीं समझते कि लोग क्यों उनका भाषण सुनने के लिये इतने अधिक उत्सुक होते हैं। जब वे वक्तृता-स्थल के बाहर खड़े होकर लोगों को उत्साह पूर्वक अपनी वक्तृता सुनने के लिये आते हुए देखते हैं तो बहुत ही लज्जित होते हैं। एक बार मैडिसन की किसी साहित्यिक सभा में उनकी वक्तृता होने को थी। निश्चित समय से एक घंटा पूर्व ही बड़ा भारी तूफान आया और कई घंटों तक रहा। उन्होंने समझा था कि श्रोता नहीं आएंगे और उन्हें वक्तृता न देनी पड़ेगी। पर जब वे अंदर गए तो वहां उन्हें सारा स्थान श्रोताओं से भरा हुआ मिला।

वक्तृता देने से पहले वाशिंगटन प्रायः घबरा जाया करते हैं। कभी कभी उनकी घबराहट इतनी अधिक बढ़

जाती है कि उन्हें भविष्य में कभी वक्तृता न देने का दृढ़ निश्चय कर लेना पड़ता है। इसके अतिरिक्त वक्तृता समाप्त करने पर उन्हें बोध होता है कि उन्होंने अपनी वक्तृता का कोई बहुत ही उत्तम और आवश्यक अंग छोड़ दिया है और इसके लिये उन्हें बहुत अधिक दुःख होता है।

वक्तृता देने से पहले और उसे आरंभ करने के समय तो उन्हें घबराहट अवश्य होती है, पर दस मिनट तक कुछ कह चुकने के बाद उन्हें ऐसा बोध होने लगता है कि मानों उन्होंने अपने श्रोताओं पर पूरा अधिकार जमा लिया है और उनकी सहानुभूति प्राप्त कर ली है। वास्तव में वक्ता को जब यह मालूम हो जाता है कि श्रोताओं पर उसका पूरा अधिकार हो गया है तो उसे बहुत अधिक प्रसन्नता होती है। उस समय वक्ता और श्रोता परस्पर सहानुभूति और एकता के सूत्र में बँध जाते हैं। यदि हजार श्रोताओं में से एक भी ऐसा हो जिसे उनके साथ सहानुभूति न हो अथवा जो उनके विचारों से सहमत न हो तो वे उसे तुरंत पहचान लेते हैं और उसकी ओर प्रवृत्त होकर कोई मजेदार चुटकुला छोड़ते हैं पर यह चुटकुला भी तत्व की बात से खाली नहीं होता, क्योंकि जिस बात में कोई तत्व नहीं होता वह बिलकुल व्यर्थ और प्रभाव-रहित होती है। उनका विश्वास है कि जब तक कोई निश्चित और आवश्यक उद्देश्य न हो तब तक बेचारा नाम मात्र के लिये बोलते रहना

बड़ा भारी अन्याय है। जब मनुष्य वास्तव में परोपकार की दृष्टि से कुछ कहना चाहता हो तो उसे वक्तृत्व के कृत्रिम नियमों के पालन या सहायता की कोई आवश्यकता नहीं होती, विराम और आवाज का उतार चढ़ाव आदि आवश्यक होने पर भी वे वक्तृता के प्राण नहीं हो सकते। वाशिंगटन जिस समय वक्तृता देने लगते हैं, उस समय वे भाषा संबंधी नियमों और अलंकारों का कुछ भी ध्यान नहीं रखते और अपने श्रोताओं को भी उनका विस्मरण करा देना चाहते हैं।

यदि उनकी वक्तृता के समय उनके श्रोताओं में से कोई उठ कर चला जाय तो वे बहुत विचलित हो जाते हैं। इसी लिये वे ऐसी रोचक वक्तृता देते हैं कि जिसमें किसी को वहां से उठने की इच्छा ही न हो, प्राय श्रोता लोग साधारण अथवा उपदेशों की अपेक्षा तत्त्व की बातें सुनना अधिक पसंद करते हैं। यदि लोगों को रोचक रीति पर तत्त्व की बातें बतलाई जांय तो वे शीघ्र ही उसका ठीक परिणाम भी निकाल लेते हैं। दृढ़, बुद्धिमान् और व्यवहार-चतुर व्यापारियों के समक्ष वे वक्तृता देना अधिक पसंद करते हैं और ऐसे लोग उन्हें बोस्टन, न्यूयार्क, और शिकागो में अधिकता से मिलते हैं। दक्षिणी गोरों और हबशियों के सामने वक्तृता देना भी वे पसंद करते हैं। वे बड़े उत्साह और ध्यान से वक्तृता सुनते हैं। वे लोग बीच बीच में जब "तथास्तु" कहते हैं तो

वक्ता का उत्साह और भी बढ़ जाता है। टस्केजी-विद्यालय के लिये किसी किसी अवसर पर वाशिंगटन को एक दिन में चार चार व्याख्यान तक देने पड़ते हैं।

इधर तीन चार वर्षों से वाशिंगटन और उनकी स्त्री को स्लेटर फंड से हबशियों की बस्ती में घूम घूम कर समाएं करने के लिये प्रति वर्ष कुछ निश्चित धन मिलता है और प्रति वर्ष वे इस कार्य्य में भी कई सप्ताह लगाते हैं। इस यात्रा में प्रातः काल के समय वे उपदेशकों और अध्यापकों आदि के सामने वक्तृता देते हैं और दोपहर के समय उनकी स्त्री केवल महिलाओं में व्याख्यान देती हैं। संध्या समय किसी सार्वजनिक सभा में फिर वाशिंगटन का भाषण होता है। इन सभाओं में हबशियों के अतिरिक्त, बहुत से गोरे भी आते हैं। एक बार एक स्थान पर उनके श्रोताओं की संख्या तीन हजार थी, जिसमें आठ सौ श्रोता गोरे थे।

ऐसे अवसरों पर वाशिंगटन और उनकी पत्नी को अपनी जाति की वास्तविक स्थिति जानने का बहुत ही अच्छा अवसर मिलता है। इसके अतिरिक्त सभाओं में उन्हें गोरों और हबशियों के परस्पर व्यवहार और संबंध का भी बहुत अच्छा पता लग जाता है। इस प्रकार की कई सभाओं के उपरांत उन्हें अपनी जाति के सुधार की बहुत कुछ आशा होने लगती है। यह बात भी वे बहुत भली भांति जानते हैं कि ऐसे अवसरों पर लोग प्रायः दिखौआ उत्साह प्रगट

किया करते हैं, इसलिये वे प्रत्येक बात की तह तक पहुंच कर उसका ठीक पता लगाने का भी पूरा पूरा उद्योग करते हैं। बीस बरस तक दक्षिण में रह कर और वहा के निवासियों की वास्तविक स्थिति का पता लगा कर वाशिंगटन ने भली भांति समझ लिया है कि उनकी जाति, सांपत्तिक नैतिक और शिक्षा-संबंधी उन्नति धीरे धीरे, पर निस्संदेह, कर रही है।

सन् १८९७ के आरंभ में बोस्टन निवासियों ने राबर्ट गोल्ड शा का स्मारक खोलने के अवसर पर वाशिंगटन को निमंत्रित किया। यह समारंभ बोस्टन के म्यूजिक हाल में हुआ था। उस समय वहां बहुत बड़े बड़े विद्वान् और प्रतिष्ठित लोग एकत्रित हुए थे। उनमें से बहुत से लोग पुरानी दासत्व प्रथा के विरोधी थे। मेसेच्युसेट्स नामक राज्य के गवर्नर स्वर्गीय आनरेबुल राजर वालकाट ने सभापति का आसन ग्रहण किया था। उनके साथ मंच पर सैंकड़ों अधिकारी और बड़े लोग बैठे हुए थे। प्रेसिडेंट वालकाट ने सब लोगों को वाशिंगटन का परिचय देते हुए कहा था—"गत जून मास में वाशिंगटन महाशय ने हरवर्ड विश्वविद्यालय की ए० एम० की पदवी प्राप्त की है। इस देश के प्राचीनतम विद्यविद्यालय की यह आनरेरी डिग्री प्राप्त करने वाले वाशिंगटन पहले ही हबशी हैं, और उनके इस सम्मान का मुख्य कारण उनका बुद्धिमत्ता पूर्ण नेतृत्व है।" जिस समय वाशिं

टन उठ कर वक्तृता देने के लिये खड़े हुए उस समय श्रोताओं की शांति भंग हो गई और सब में उत्साह और आवेश भर गया। सारा श्रोतृ-समाज उनका अभिनंदन करने और तालियां बजाने के लिये कई बार उठा। उनकी वक्तृता सुनते सुनते सैनिकों और नागरिकों की आंखों में प्रेमाश्रु भर आए। प्लेटफार्म पर उनके पास ही एक पलटन खड़ी हुई थी, जिस में अनेक सिपाही ऐसे थे जिन्होंने बहुत घायल हो जाने पर भी हाथ से जातीय झंडा न छोड़ा था। जिस समय वाशिंगटन ने उन लोगों की ओर मुड़ कर कहा—

"५४ वीं पलटन के बचे हुए वीर और कटे हुए पैरों और हाथों से इस स्थान को अपने आगमन से सुशोभित करने वाले सैनिको! तुम्हारे लिये, तुम्हारा सेनापति मृत नहीं,—जीवित है। यदि बोस्टन वाले उसका कोई स्मारक न बनाते और इतिहास में उसका कोई उल्लेख न होता, तो भी स्वयं तुम और वह देशभक्त जाति जिसके तुम प्रतिनिधि हो, दोनों ही राबर्ट गोल्ड शा के अदृश्य स्मारक का काम देते।" उस समय सारे श्रोता उत्साह-सागर में लहराने लगे। मैसेच्युसट्स के गवर्नर, राजर वालकाट ने तुरंत उठ कर प्रसन्नतापूर्वक कहा—"बुकर टी० वाशिंगटन के लिये तीन बार जय जय कार हो।"

उस अवसर पर प्लेटफार्म पर वीर सरजेंट कारनी भी उपस्थित थे। यद्यपि उनकी रेजिमेंट के अधिकांश सैनि

या तो मारे जाचुके थे और या भाग गए थे, तथापि अंत समय तक वह वीर कार्नी हाथ में अमेरिकन झंडा लिए हुए वागनर के किले पर दृढ़तापूर्वक खड़े रहे। प्लैटफार्म पर भी उनके हाथ में वही झंडा था। जिस समय वाशिंगटन उनकी ओर मुड़े तो वे मानों किसी दैवी शक्ति से प्रेरित होकर आप ही आप हाथ में झंडा लिए उठ खड़े हुए। यद्यपि अनेक अवसरों पर वाशिंगटन ने अपनी वक्तृता का बहुत ही अच्छा प्रभाव होते हुए देखा था तो भी सरजेंट के उठ खड़े होने का उन पर विलक्षण प्रभाव हुआ था उस अवसर पर मारे श्रोता कई मिनटों के लिये मारे आनन्द के अपने आप को भूल गए थे।

स्पेन के साथ अमेरिका का युद्ध समाप्त हो जाने पर, शांति स्थापन के उपलक्ष में अमेरिका के सभी बड़े बड़े नगरों में उत्सव हुए थे। इसी प्रकार का एक उत्सव शिकागो में भी होने वाला था। वहां की स्वागतकारिणी समिति के सभापति और शिकागो विश्वविद्यालय के प्रेसिडेंट विलयम हारपर ने वाशिंगटन महाशय को उक्त अवसर पर वक्तृता देने के लिये निमंत्रित किया। तदनुसार वहां उनकी दो वक्तृताएं हुई थीं। उनकी पहली वक्तृता आडिटोरियम में रविवार १६ अक्तूबर को हुई थी। उस अवसर पर वाशिंगटन के श्रोताओं की संख्या सदा से बहुत अधिक थी। तो भी स्थानाभाव के कारण बहुत से लोग उनकी वक्तृता सुनने से

वंचित रह गए थे। उन लोगों के लिये संध्या समय नगर में दो स्थानों पर उन्हें और भी वक्तृताएं देनी पड़ी थीं।

आडिटोरियम में श्रोताओं की संख्या सोलह हजार थी और प्रायः इतने ही श्रोता हाल के चारों ओर खड़े हुए भीतर पहुंचने का उद्योग कर रहे थे। उस दिन बिना पुलिस की सहायता के किसी का भीतर पहुंचना असंभव था। प्रेसिडेंट मेकिनले, उनके प्रायः सभी प्रधान और परराष्ट्रीय मंत्री और बड़े बड़े सैनिक और नाविक अधिकारी,—जिनमें से बहुतों ने उस युद्ध में वीरतापूर्वक बहुत से कार्य्य किए थे, वहां उपस्थित थे। वाशिंगटन के अतिरिक्त वहां और भी चार पांच बड़े वक्ताओं के भाषण हुए थे। वाशिंगटन ने अपनी वक्तृता में कहा था कि हबशी लोग नष्ट होने की अपेक्षा दासत्व ही अधिक पसंद करते हैं। जिस समय हबशियों को दासत्व में रखने और गोरों को स्वतंत्र रखने के लिये घोर संग्राम हो रहा था, उस समय क्रिसपस अटक्स ने जिस वीरतापूर्वक अपने प्राण दिए थे, उसका उन्होंने बहुत अच्छा वर्णन किया था। न्यू-ओर्लियंस में हबशियों ने जैक्सन के साथ जैसा व्यवहार किया था, उसका भी उन्होंने उल्लेख किया था। जिस समय दक्षिणी गोरे दासत्व प्रथा प्रचलित रखने के लिये युद्ध कर रहे थे, उस समय हबशियों ने जिस स्वामिनिष्ठता से उनके परिवार की रक्षा की थी, उसका भी उन्होंने बहुत ही हृदयविदारक चित्र खींचा। पोर्ट हडसन तथा वागनर और,

पिलो के क़िले में हबशियों ने जो वीरता दिखलाई थी उसका भी उन्होंने वर्णन किया। क्यूबा के दासों को स्वतंत्र करने के लिये हबशियों ने एल काने और सांटियागो नाम स्थानों पर जिस वीरता-पूर्वक छापा मारा था उसकी भी उन्होंने अच्छी प्रशंसा की। इन सब बातों में वक्ता ने यही दिखलाया कि उनकी जाति के लोगों ने सदा योग्य और युक्त कार्य्य किया। तदुपरांत उन्होंने गोरे अमेरिकनों से प्रार्थना की—' स्पेनिश अमेरिकन युद्ध संबंधी हबशियों के वीरता-पूर्ण कृत्य उत्तरी और दक्षिणी सैनिकों के मुह से सुन कर और दासत्व प्रथा बंद करनेवालों और दासों के पुराने स्वामियों से उनकी बातें जान कर आप लोग स्वयं ही इस बात का निर्णय करें कि जो जाति इस प्रकार देश के लिये अपने प्राण न्यौछावर करने के लिये प्रस्तुत रहती है उसे अपने देश के लिये जीवित रहने का सर्वोत्कृष्ट अवसर देना चाहिए या नहीं' ? तदुपरांत, स्पेनिश अमेरिकन युद्ध में प्रेसिडेंट महाशय ने हबशियों को योग देने का अवसर देकर उनका जो सम्मान किया था उसके लिये वाशिंगटन ने उनकी कृतज्ञता स्वीकार करते हुए उन्हें धन्यवाद दिया। सारा श्रोतृसमाज आनंद और उत्साह से परिपूर्ण हो गया। वे लोग बार बार खड़े होकर अपनी परम प्रसन्नता प्रकट करने के लिये रुमाल, टोपियां और छड़ियां ऊपर उठाकर हिलाने लगे। सभापति महाशय उनका धन्यवाद ग्रहण करने के लिये अपने स्थान से उठ खड़े हुए। उस समय

पुनः श्रोताओं ने जो उत्साह और आनंद प्रकट किया, उसका वर्णन नहीं हो सकता।

शिकागो के इस व्याख्यान का एक विशिष्ट अंश दक्षिणी गोरों की समझ में भली भांति नहीं आया था। इसलिये वहां के समाचार-पत्र अनेक प्रकार से उसकी तीव्र टीका-टिप्पणियां करने लगे, यहां तक कि एक समाचार-पत्र के सम्पादक ने उनसे उनका वास्तविक अभिप्राय भी पूछ मांगा। उत्तर में उन्होंने लिख भेजा कि उत्तरी श्रोताओं के सामने मैं वे बातें नहीं कहना चाहता जो मैं दक्षिणी श्रोताओं के सामने न कह सकूं। उन्होंने यह भी लिखा था कि यदि मेरी सत्रह वर्ष की सेवाओं से दक्षिण के निवासी मेरा ठीक ठीक अभिप्राय नहीं समझ सके तो मेरे मौखिक कथन मात्र से कोई बात भली भांति स्पष्ट नहीं की जा सकती, व्यापारिक और नागरिक जाति-द्वेष नष्ट करने के लिये जो बातें मैंने एटलांटा प्रदर्शिनी में कही थी वेही यहां भी कही हैं। अपनी जाति की सामाजिक स्थिति के संबंध में मैं कभी कुछ नहीं कहता। साथ ही मैंने एटलांटा वाली अपनी वक्तृता का भी कुछ अंश उद्धृत कर दिया था। इस उत्तर से सम्पादक महाशय का समाधान हो गया और लोगों ने उस प्रश्न पर टिप्पणी भी करना छोड़ दिया।

संसार में ऐसे लोगों की कमी नहीं है जो सदा दूसरों का समय नष्ट करने के लिये तैयार रहते हैं। एक दिन बोस्टन के

एक होटल में प्रात काल वाशिंगटन को समाचार मिला कि कोई आदमी उनसे मिलने आया है। जब वे जल्दी जल्दी कपड़े पहन कर नीचे उतरे तो एक गरीब आदमी ने आगे बढ़ कर बड़े शांत भाव से उनसे कहा— कल संध्या समय मैंने आपको एक सभा में बोलते हुए सुना था। मुझे आप के बोलने का ढंग बहुत पसंद आया इसलिये मैं आपकी कुछ बातें सुनने के लिये फिर यहा आया हू।"

लोग प्राय वाशिंगटन से पूछा करते हैं कि आप टस्केजी से बाहर और बहुत दूर रह कर भी विद्यालय का प्रबंध किस प्रकार करते हैं। बात यह है कि वे इस सिद्धांत को नहीं मानते कि—'जो काम तुम स्वयं कर सकते हो वह दूसरों से मत कराओ।" उनका सिद्धान्त है- 'जो काम दूसरे लोग भली भाति कर सकते हों वह तुम स्वय मत करो।'

टस्केजी विद्यालय संबंधी यह बात बहुत ही संतोषजनक है कि यहा का कोई काम किसी एक मनुष्य की अनुपस्थिति के कारण नहीं रुक सकता। इस समय यहा के कार्यकर्त्ताओं की संख्या छियासी है। उनमें से बहुत स अध्यापक ऐसे हैं जो विद्यालय पर बहुत अधिक प्रेम रखते हैं। यहां के वर्त्तमान कोशाध्यक्ष मि० लागन गत सत्रह वर्षों से विद्यालय में काम करते हैं। वाशिंगटन की अनुपस्थिति में सब कामों की देख-भाल वे ही करते हैं। इस काम में श्रीमती वाशिंगटन भी उन्हें यथेष्ट सहायता देती हैं। वाशिंगटन के

सेक्रेटरी मि० स्काट नित्य प्रति आवश्यक बातों की सूचना उन्हें दिया करते हैं। विद्यालय के सब कामों का प्रबंध करने के लिये एक कार्यकारिणी समिति है जिसका अधिवेशन सप्ताह में दो बार होता है। इस समिति में विद्यालय के नौ विभागों के नौ मुख्य अधिकारी सम्मिलित हैं। इसके अतिरिक्त छः सज्जनों की एक और समिति है जिसका अधिवेशन प्रति सप्ताह होता है और जिसका काम साप्ताहिक व्यय पर विचार करना है। प्रति मास अथवा और पहले सब अध्यापकों की एक साधारण सभा भी होती है। इन सब के अतिरिक्त अनेक विभागों के शिक्षकों और अधिकारियों की भी कई पृथक् पृथक् समितियां हैं।

वाशिंगटन चाहे कहीं रहें, नित्य प्रति उन्हें विद्यालय के कार्य्यों की रिपोर्ट मिला करती है, यहां तक कि विद्यार्थियों की अनुपस्थिति और उसके कारण का विवरण भी उन्हें नियमित रूप से मिला करता है। विद्यालय की दैनिक आय, गोशाला से आए हुए दूध और मक्खन, तथा विद्यार्थियों तथा शिक्षकों को मिलने वाले भोजन आदि का पूरा पूरा विवरण उन रिपोर्टों में रहता है, यहां तक कि बाजार से आए हुए मांस और साग तरकारी आदि का पूरा व्योरा भी उनमें रहता है। इतने कड़े प्रबंध का फल यह होता है कि कोई मनुष्य किसी काम में आलस्य नहीं कर सकता।

वाशिंगटन प्रति दिन प्रात काल अपने सब आवश्यक कार्य्यों का क्रम निश्चित कर लेते हैं और जहा तक सभव होता है, सब काम शीघ्र समाप्त करके नए कामों के लिये बहुत सा समय निकाल लेते हैं। दफ्तर से उठने के पहले वे पत्र व्यवहार तथा अन्य सब आवश्यक कार्य समाप्त कर देते हैं और दूसरे दिन के लिये कुछ भी नहीं छोडते। जिस मनुष्य के सब कार्य्य, भली भाति उसके अधीन होत हैं वह सदा प्रसन्न सुखी और सतुष्ट रहता है। वाशिंगटन का अनुभव है कि ऐसे मनुष्यों का स्वास्थ्य भी सदा बहुत अच्छा रहता है। उनका विश्वास है कि जब मनुष्य अपने कार्य्य से प्रेम करने लग जाता है तो उसमें एक विशेष प्रकार की अमूल्य शक्ति आ जाती है।

प्रात काल दैनिक आवश्यक कार्य्य आरभ करने के समय वे दिन में आनेवाली विपत्तियाँ और कठिनाइयों के लिय भी तैयार रहते हैं। वे सदा यह सुनने के लिय तैयार रहत हैं कि उनके विद्यालय का कोई भवन गिर पडा अथवा जल गया, या किसी समाचार पत्र या सार्वजनिक सभा में किसी ने उनके कामों की कड़ी आलोचना की अथवा उन्हें दो चार खरी खरी सुनाई।

गत सत्रह वर्षों में वाशिंगटन ने केवल एक बार अपने कार्य्य से अवकाश ग्रहण किया है और वह भी मेन्छ स

नहीं। तीन वर्ष पूर्व उनके मित्रों ने उन्हें धन देकर सपत्नीक युरोप जाने के लिये विवश किया था।

वाशिंगटन का सिद्धांत है कि प्रत्येक मनुष्य सदा अपने शरीर को वश में रख सकता है। उनका यह भी मत है कि यदि मनुष्य को अपनी तबियत कुछ भारी मालूम हो और वह तुरंत उसका उपाय करले तो वह अनेक बड़े बड़े रोगों से बच सकता है। जिस दिन उन्हें भली भांति नींद नहीं आती उस दिन वे समझ लेते हैं कि कुछ गड़बड़ अवश्य है। यदि उन्हें किसी अंग में शिथिलता मालूम होती है तो वे किसी चिकित्सक के पास चले जाते हैं। हर समय और हर स्थान पर सो सकने की शक्ति बहुत लाभ दायक होती है। वे जब चाहें तब पंद्रह बीस मिनट के लिये भी सो सकते हैं और इस प्रकार अपनी सारी थकावट मिटा सकते हैं। कोई विकट प्रश्न आ पड़ने पर वे उसे दूसरे दिन के लिये, अथवा उस समय तक के लिये छोड़ देते हैं जब तक कि वे उस विषय में अपनी स्त्री और मित्रों की सम्मति न ले लें।

वाशिंगटन को समाचार पत्र पढ़ने का बहुत शौक है। अच्छी अच्छी पुस्तकें पढ़ने का समय उन्हें रेल में ही मिलता है। उपन्यास उन्हें अच्छे नहीं लगते। जिन उपन्यासों की लोग प्रशंसा करते हैं उन्हें भी वे बड़ी कठिनता से पढ़ते हैं। जीवनचरित उन्हें बहुत पसंद हैं। अब्राहाम लिंकन के विषय

में आज तक जितनी पुस्तकें आदि प्रकाशित हुई हैं, प्राय सभी उन्होंने देख डाली हैं। साहित्य में यही मानो उनके अधिष्ठाता गुरु हैं।

साल में छ महीने वाशिंगटन को टस्केजी से बाहर रहना पड़ता है। यद्यपि इससे विद्यालय की अनेक हानियां होती हैं, तथापि कुछ लाभ भी अवश्य होते हैं। कार्य्य में परिवर्त्तन होने के कारण एक प्रकार का विश्राम भी मिलता है। रेल की लंबी यात्रा ये बहुत पसंद करते हैं और उसमें उन्हें सुख भी मिलता है। कभी कभी लोग रेल में उनसे मिल कर कहा करते हैं—"क्या आप ही बुकर टी० वाशिंगटन हैं? मैं आप से परिचय करना चाहता हूं।" विद्यालय से अनुपस्थित रहने के समय ये उसके संबंध की छोटी और साधारण बातों से अनभिज्ञ रह जाते हैं, पर उस समय उन्हें उसकी उन्नति के बड़े और आवश्यक उपाय सोचने का बहुत अच्छा अवसर मिलता है। विदेशों में घूम कर ये भिन्न भिन्न स्थानों की शिक्षा पद्धति का निरीक्षण करते और बड़े बड़े शिक्षकों से मिलते हैं।

सब से उत्तम विश्राम उन्हें उस समय मिलता है जब कि टस्केजी में रात के भोजन के उपरांत वे अपनी स्त्री और बच्चों सहित अपने कमरे में बैठते और कहानियां कहते और सुनते हैं। रविवार के दिन ये सपरिवार वायु सेवन करने और प्रकृति की शोभा निरखने के लिये जंगलों में चले जाते

हैं। उस अवसर पर वे स्वर्ग-सुख का अनुभव करते हैं। अपने उद्यान में भी उन्हें अच्छी विश्रांति और प्रसन्नता मिलती है। कृत्रिम वस्तुओं की अपेक्षा प्राकृतिक विषयों पर उनका प्रेम बहुत अधिक है। जब कभी उन्हें घंटे आध घंटे जमीन खोदने, बीज बोने और पौधे रोपने का अवसर मिलता है तो उन्हें ऐसा बोध होता है कि संसार के बड़े बड़े कार्य्य करने की शक्ति उनमें आ रही है। जिस मनुष्य को प्रकृति से प्रेम नहीं होता उसकी दशा पर उन्हें बहुत दया आती है।

विद्यालय के अतिरिक्त वे स्वतन्त्र रूप से भी अपने यहां बढ़िया बढ़िया सूअर और मुरगे रखते हैं। सूअर पालने का उन्हें बहुत शौक है। खेल आदि की उन्हें अधिक परवाह नहीं रहती। उन्होंने फुटबाल कभी नहीं देखा। वे ताश के पत्ते भी नहीं पहचान सकते। कभी कभी वे अपने दो लड़कों के साथ पुराने ढंग का एक प्रकार का गोटियों का खेल खेला करते हैं, इसके अतिरिक्त उन्हें और कोई खेल नहीं आता।

१६—युरोप यात्रा।

सन् १८६३ में वाशिंगटन का विवाह मिसिसिपी निवासिनी, और फिस्क युनिवर्सिटी की ग्राज्युएट मिस मारग्रेट जेम्स मरे के साथ हुआ। उस समय मिस मारग्रेट टस्केजी विद्यालय की लेडी प्रिंसिपल थीं। इन सहधर्म्मिणी से भी

वाशिंगटन को सदा विद्यालय के कामों में अमूल्य सहायता मिला करती है। श्रीमती वाशिंगटन ने टस्केजी में एक मातृ-सभा स्थापित की है। उन्होंने स्त्रियों की एक सभा को भी जन्म दिया है जिसका अधिवेशन मास में दो बार हुआ करता है। इसके अतिरिक्त वे दक्षिण की हबशी स्त्रियों के क्लबों तथा हबशी स्त्रियों के राष्ट्रीय क्लब की कार्य्यकारिणी समिति की अध्यक्ष हैं।

वाशिंगटन महाशय को तीन सन्ताने हैं। उनमें से सब से बड़ी एक कन्या है जिसका नाम पोर्शिया है और जिसने कपड़े सीना भली भांति सीख लिया है। वह बाजा बजाना भी बहुत अच्छी तरह जानती है। विद्यालय में पढ़ने के अतिरिक्त उसने अभी से वहां अध्यापन का कार्य्य भी आरम्भ कर दिया है। उनके मझले लड़के बेकर टेलियाफ़ेरो ने बाल्यावस्था से ही ईंटें बनाने का काम सीखा है और अब वह उस कार्य्य में बहुत निपुण हो गया है। एक बार वाशिंगटन महाशय जब विदेश में थे तो उसने उन्हें एक पत्र में लिखा था-"प्रिय पिता जी! आपने यहां से चलते समय कहा था कि तुम प्रति दिन अपना आधा समय अपने काम में लगाया करो। पर मुझे अपना काम इतना पसन्द है कि मैं अपना सारा समय उसी में लगाना चाहता हूं। इसके अतिरिक्त जहां तक हो सकता है मैं धन कमाने का उद्योग भी करता हूं। क्योंकि आगे चलकर जब मैं दूसरे विद्यालय में पढ़ने जाऊं गा तो वहां मुझे अपने व्यय-निर्वाह

के लिये धन की आवश्यकता होगी।" उनके सब से छोटे पुत्र का नाम अरनेस्ट डेविडसन वाशिंगटन है। वह अभी से चिकित्सक बनने की इच्छा प्रकट करता है। विद्यालय में साधारण शिक्षा पाने के अतिरिक्त वह अपना कुछ समय वहां के चिकित्सक के कार्यालय में भी लगाता है। उसने अभी से वहां का बहुत सा काम सीख भी लिया है।

वाशिंगटन महाशय को अपनी गृहस्थी बहुत प्रिय है। वे घर में रहना बहुत पसंद करते हैं। विशेषतः दिन भर का कार्य्य समाप्त करके संध्या का समय अपने घर में बिताने में उन्हें जितनी प्रसन्नता होती हैं उतनी और किसी काम में नहीं होती। उनकी वास्तविक प्रसन्नता का, दूसरा स्थान प्रार्थना-मंदिर है जहां नित्य रात को साढ़े आठ बजे सब विद्यार्थी और अध्यापक सपरिवार एकत्र होते हैं। उस समय उन लोगों की संख्या ग्यारह बारह सौ के लगभग होती है। उस समय उन लोगों का जीवन अधिक उपयुक्त और उच्च बनाने का बहुत अच्छा अवसर मिलता है।

सन् १८९९ की वसंत ऋतु में बोस्टन नगर की कुछ भद्र महिलाओं ने टस्केजी-विद्यालय की सहायता के लिये एक सभा की थी जिसमें अनेक गोरे और हबशी सम्मिलित हुए थे। सभा में सम्मिलित होनेवाले कुछ सज्जनों ने अनुमान से जान लिया कि वाशिंगटन महाशय का शरीर बहुत शिथिल हो चला है। सभा भंग होने के थोड़ी देर बाद एक भद्र

महिला ने उनसे पूछा कि क्या आप कभी युरोप गए हैं? उत्तर में उन्होंने कहा—नहीं। उसने पूछा—क्या वहां जाने का आप का विचार है? उन्होंने कहा—नहीं, यह बात मेरी शक्ति के बाहर है। उस समय के उपरांत वाशिंगटन को इन बातों का कुछ भी ध्यान न रहा। पर कई दिनों बाद उन्हें सूचना मिली कि उनके बोस्टन निवासी कुछ मित्रों ने उन्हें और उनकी स्त्री को तीन चार मास के लिये युरोप भेजने के विचार से कुछ धन संग्रह किया है। यही नहीं, बल्कि उन मित्रों ने उन्हें इस यात्रा के लिये बहुत ज़ोर भी दिया। इससे पूर्व एक वर्ष मि० गैरिसन नामक उनके एक मित्र ने उनसे विश्राम करने के लिये युरोप जाने का वचन ले लिया था और स्वयं व्यय के लिये धन संग्रह करने का भार भी ले लिया था। पर वाशिंगटन महाशय के मन में यह बैठती न थी। इसीलिये उन्होंने उस ओर अधिक ध्यान नहीं दिया। पर उस वर्ष मि० गैरिसन ने उक्त कई भद्र महिलाओं से मिल कर उनकी युरोप-यात्रा के विषय में सब बातें निश्चित करली थीं, यहां तक कि उनके जाने का मार्ग और स्टीमर भी निश्चित हो चुका था।

ये सब बातें बहुत जल्दी हो गईं और वाशिंगटन युरोप जाने के लिये विवश किए गए। गत अठारह वर्षों से उन्होंने विद्यालय के लिये अविश्रांत परिश्रम किया था और भविष्य में भी अपना शेष जीवन उसी प्रकार परिश्रम करके बिताने का

उनका दृढ़ विचार था। दिन पर दिन विद्यालय का कार्य बहुत बढ़ता जाता था और सब काम प्रायः उन्हीं पर निर्भर रहते थे। इसलिये उन्होंने अपने मित्रों को कृपा और सज्जनता के लिये धन्यवाद देते हुए कहा कि मेरे यहां से चले जाने पर विद्यालय की आर्थिक दशा बहुत हीन हो जायगी, इसलिये मैं युरोप जाने में असमर्थ हूं। इसके उत्तर में उनसे कहा गया कि हम लोगों ने यथेष्ट धन संग्रह कर लिया है, आपकी अनुपस्थिति में विद्यालय को धन का कष्ट नहीं होगा और वह बराबर जारी रहेगा। अब वाशिंगटन महाशय को बचने के लिये और कोई स्थान न मिल सका और विवश होकर उन्हें अपने मित्रों का अनुरोध पालन करने के लिये तैयार होना पड़ा।

इतना सब कुछ होने पर भी वाशिंगटन महाशय को युरोप-यात्रा का विचार स्वप्नवत् मालूम होता था। उनका जन्म घोर दासत्व में हुआ था और प्रारंभिक जीवन अज्ञानता और दरिद्रता में बीता था। वे प्रायः यही समझते थे कि संसार के सुख केवल गोरों के लिये ही हैं, हबशियों के लिये नहीं। युरोप और उसके बड़े बड़े नगरों को वे प्रायः स्वर्ग तुल्य ही समझते थे। इसलिये उन्हें इस बात का दृढ़ विश्वास ही न होता था कि वे युरोप-यात्रा करेंगे। इसके अतिरिक्त इस संबंध में दो और विचार उन्हें विकल किए हुए थे। वे समझते थे कि लोग जब उनकी इस यात्रा का समाचार

सुनेंगे तो बिना वास्तविक स्थिति का परिचय पाए ही कहने लगेंगे कि अब वाशिंगटन के दिमाग हो गया है और वे बनने लगे हैं। बाल्यावस्था में वे अपने उन स्वजातियों के विषय में ये ही बातें सुना करते थे, जो संसार में किसी प्रकार की सफलता प्राप्त कर लेते थे। इसके अतिरिक्त वे यह भी समझते थे कि अपना कार्य्य छोड़ने पर सम्भवत वे प्रसन्न न रह सकेंगे। ऐसी दशा में जब कि कार्य्य की अधिकता थी और दूसरे लोग उसमें दृढ़ता पूर्वक लगे हुए थे वे स्वयं काम छोड़ कर जाने के स्वार्थपूर्ण और अनुचित समझते थे। उन्होंने जब से ज्ञान प्राप्त किया था, तब से वे सदा काम ही करते रहे थे, इसलिये वे यह भी न समझ सकते थे कि बिलकुल खाली रह कर वे तीन चार मास किस प्रकार बिता सकेंगे। वास्तव में वे कार्य्य से अवकाश ग्रहण करना जानते ही न थे।

यद्यपि उनकी स्त्री को भी येही सब कठिनाइयां थीं तौ भी वे युरोप जाना चाहती थीं। उनकी उत्सुकता का मुख्य कारण यह था कि वे अपने पति को कुछ विश्राम दिलाना चाहती थीं। उस समय यहा अनेक महत्वपूर्ण जातीय प्रश्नों पर आंदोलन हो रहा था इसलिये उनका यहा से जाना और भी कठिन था, पर मित्रों के बहुत अनुरोध करने पर अंत में उन्हें अपनी यात्रा के लिये १० मई का दिन निश्चय करना पड़ा। उनके मित्र मि० गैरिसन ने उनकी यात्रा-संबंधी

सब आवश्यक प्रबंध कर दिए और उनके दूसरे मित्रों ने उन्हें इंगलैंड और फ्रांस के अनेक संभ्रांत पुरुषों के नाम परिचय पत्र भी दे दिए। टस्केजी से चल कर, दूसरे दिन जहाज पर सवार होने के लिये ६ मई को वे न्यूयार्क पहुंचे। वहीं उनकी कन्या जो उस समय दक्षिण फरमिंघम में पढती थी, उनसे मिलने के लिये आई। वे चलने के समय अपने सब कार्य्य समाप्त कर दिया चाहते थे, इसलिये उनके सेक्रेटरी भी वहां तक उनके साथ आए। जहाज़ पर सवार होते ही उन्हें प्रसन्नता का एक समाचार मिला। दो महिलाओं ने टस्केजी की कन्या-पठशाला के लिये एक भवन बनवाने के निमित्त यथेष्ट धन दान करने की सूचना उन्हें पत्र द्वारा दी थी।

१० मई की दोपहर को वे सपत्नीक फ्रीसलैंड नामक जहाज पर सवार हुए। जहाज के कप्तान तथा दूसरे अधिकारियों को उनके पद तथा आगमन की सूचना पहले ही मिल चुकी थी। उन लोगों ने उनका स्वागत किया। इसके अतिरिक्त अन्य यात्रियों ने भी उनका अच्छा आदर सत्कार किया। पहले तो वे समझते थे कि जहाज पर लोग उनके साथ सभ्यता का व्यवहार न करेंगे। पर यह बात नहीं हुई। जहाज पर सभी छोटे बड़ों ने उनका यथेष्ट सम्मान किया।

जब जहाज का लंगर उठ गया तो वाशिंगटन महाशय को भी अपने ऊपर का भार कुछ कम होता हुआ जान पड़ा।

कदाचित् उनके जीवन में चिंता-रहित होने का यह पहला ही अवसर था। अब उन्हें कुछ प्रसन्नता मालूम होने लगी। मि० गैरिसन ने उनके लिये जहाज में एक बहुत अच्छे कमरे का प्रबंध कर दिया था। यात्रा आरंभ करने के दूसरे ही दिन से उन्हें खूब निद्रा आने लगी, यहां तक कि बाकी दस दिनों में वे बराबर प्रति दिन १५ घंटे सोया करते थे। उसी समय उन्हें यह भी मालूम हुआ कि वे वास्तव में बहुत अधिक थक गए थे। युरोप पहुंचने के एक मास बाद तक भी उन्हें खूब निद्रा आया करती थी। उन दिनों उन्हें रात को सोते समय इस बात की चिंता नहीं रहती थी कि प्रात काल उन्हें किसी से भेंट करनी है, अमुक समय रेल पर जाना है अथवा अमुक समय कोई व्याख्यान देना है। अमेरिका में प्रवास करते समय उन्हें कई बार एक ही रात में तीन भिन्न भिन्न स्थानों पर सोना पड़ा था। और उन अवसरों का ध्यान रखते हुए इस समय वे बहुत ही निश्चिंत थे। इसी लिये उन्होंने बहुत प्रसन्नतापूर्वक यथेष्ट विश्राम किया। रविवार के दिन जहाज के कप्तान ने उनसे धर्मोपदेश करने की प्रार्थना की पर वे उपदेशक नहीं थे इसलिये उसकी प्रार्थना स्वीकार न कर सके। तथापि कई यात्रियों के आग्रह करने पर उन्होंने उस दिन भोजनागार में एक व्याख्यान अवश्य दिया था। दस दिनों बाद उनका जहाज किनारे लगा और वे बेलजियम देश के एंटवर्प नामक नगर में उतरे।

नगर के मध्य में एक अच्छे होटल में वे जाकर ठहरे। कई दिनों तक वहां रहने के उपरांत उनके कई मित्रों ने उन्हें हालैंड में सैर करने के लिये निमंत्रित किया। उन्होंने उस प्रांत के लोगों के वास्तविक जीवन का बहुत अच्छा ज्ञान प्राप्त किया। वहां से लौट कर वे हेग नगर में गए, जहां उस समय शांति महासभा (Peace Conference) का अधिवेशन हो रहा था। वहां अमेरिका के प्रतिनिधियों ने उनका बहुत अच्छा स्वागत किया था।

हालैंड की बढ़िया खेती और अच्छे अच्छे पार्क देख कर वे बहुत प्रसन्न हुए थे। वहां से ब्रूसेल्स में वाटरलू का युद्ध क्षेत्र देखते हुए वे पेरिस गए। वहां पहुंचते ही युनिवर्सिटि क्लब की ओर से उन्हें एक दावत का निमंत्रण मिला। उस दावत में बहुत बड़े बड़े लोग सम्मिलित हुए थे, सभापति का आसन अमेरिका के एलची जनरल होरेस पोर्टर ने ग्रहण किया था। उस अवसर पर वाशिंगटन ने एक बहुत अच्छा व्याख्यान भी दिया था जिसे सुन कर सब लोग बहुत प्रसन्न और संतुष्ट हुए थे। जनरल ने उनकी योग्यता और कृतियों की बहुत अधिक प्रशंसा की थी। इसके उपरांत उन्हें और भी अनेक निमंत्रण मिले, पर उनसे अपने उद्देश्य में बाधा पड़ते देख उन्होंने वे निमंत्रण अस्वीकार कर दिए।

अंत में एक दिन उन्हें अमेरिकन एलची जनरल पोर्टर की ओर से निमंत्रण मिला। वहां अमेरिका के कई बड़

बड़े बड़े आदमियों से उनकी भेंट हुई जिनमें वहा के सुप्रीम कोर्ट के दो जज भी थे। उस समय पेरिस में प्रसिद्ध अमरिकन हबशी चित्रकार मि० टैनर भी उपस्थित थ। वहां उनके बनाए हुए चित्र बहुत चाव और आदर से देखे जाते थे। वाशिंगटन का सदा से यह सिद्धात था कि जो मनुष्य कोई अच्छा काम करता जानता है, उसका यथेष्ट आदर अवश्य होता है। मि० टैनर की प्रतिष्ठा देखकर उनकी यह धारणा और भी अधिक दृढ़ हो गई। बात यह है कि ससार में सर्वोत्तम कार्य्य की बहुत चाह होती है और उसके सामने लोग धर्म्म जाति या वर्ण का विचार भूल जाते हैं। वाशिंगटन महाशय का कथन है कि—"हमारी जाति का भविष्य केवल इसी प्रश्न पर निर्भर है कि वह अपने कार्य्यों को परम उपयुक्त और सबसे अधिक आवश्यक बना सकेगी या नहीं। क्योंकि जो मनुष्य अपने परिश्रम से अपने निवासस्थान और सहवर्तियों के कल्याण के लिये उनकी आर्थिक और नैतिक उन्नति करता है, वह पुरस्कार से वंचित नहीं रह सकता।"
नैतिक विचारों में उन्होंने फ्रांसीसियों को अपनी जाति के लोगों के समकक्ष ही पाया। जीवननिर्वाह की बढ़ती हुई कठिनाइयों के कारण ये लोग भली भांति अपने को संयम करना सीख गए हैं। वाशिंगटन का अनुमान है कि उनकी जाति भी शीघ्र ही उस स्थिति तक पहुंच जायगी। सत्यता और महानुभावता में उन्होंने अपनी जाति के लोगों को फ्रांसी-

सियों के समकक्ष और पशुओं पर दया करने में बढ़ा चढ़ा हुआ पाया। फ्रांस से चलते समय उन्हें अपनी जाति की उन्नति का अधिक दृढ़ विश्वास हो गया।

पेरिस से चल जूलाई के आरंभ में वे लंडन पहुंचे। उस समय वहां पारलामेंट के अधिवेशन हो रहे थे और बाहर से अनेक प्रतिष्ठित लोग वहां आए हुए थे। वहां पहुंचते ही उन्हें अनेक प्रकार के निमंत्रण मिलने लगे पर उन्होंने अधिकांश निमंत्रण, केवल विश्राम करने की इच्छा से अस्वीकार कर दिए। उनके दो एक मित्रों ने वहां के एसेक्स हाल में उनके व्याख्यान का प्रबंध कर दिया था। अमेरिकन एलची माननीय शोर्ट ने सभापति का आसन ग्रहण किया था। सभा में पारलामेंट के अनेक सभासद तथा बहुत से अन्य प्रतिष्ठित लोग सम्मिलित हुए थे। वाशिंगटन के उस व्याख्यान की प्रशंसा इंगलंड तथा अमेरिका के बहुत बड़े बड़े पत्रों में हुई था। यहीं पर वे पहले पहल मार्क ट्वेन से भी मिले थे। अनेक बड़े बड़े लोगों ने उन्हें दावतें भी दी थीं। लंदन से चल कर वे बरमिंघम पहुंचे। यहां उन्हें दासत्व प्रथा के विरोधी स्वर्गीय गैरिसन और माननीय डगलस के अनेक पक्षपाती और भक्त मिले।

इंगलैंड के ब्रिस्टल नगर में वाशिंगटन और उनकी पत्नी ने स्त्रियों के लिबरल क्लब में व्याख्यान दिए थे। इसके अतिरिक्त अर्धों के रायल कालेज के पदवीदान के अवसर पर भी

वाशिंगटन महाशय का मुख्य भाषण हुआ था। यह उत्सव सीस महल (Crystal Palace) में हुआ था और वेस्ट-मिनिस्टर के स्वर्गीय ड्यूक ने सभापति का आसन ग्रहण किया था। ड्यूक महाशय इंगलैंड के सब से बड़े धनी थे। लेडी एवरडीन की कृपा से उन्हें और उनकी स्त्री को विंडसर कैसिल में स्वर्गीया महारानी विक्टोरिया से भेंट करने का सौभाग्य भी प्राप्त हुआ था। उसी अवसर पर उन्हें महारानी की ओर से चाय पीने के लिये निमत्रण भी मिला था।

हमारे चरित नायक हाउस-आफ-कामस में भी कई बार गए थे और वहां सर स्टैनली से मिले थे। उन्होंने अफ्रिका और अमेरिका के हबशियों के सबध में उनसे अनेक बातें की थीं जिनसे उन्हें निश्चय हो गया था कि अमेरिकन हबशियों की दशा का अफ्रिका जाने से कुछ भी सुधार नहीं होसकता था।

इंगलैंड में वाशिंगटन बहुत बड़े बड़े अंगरेज़ों के मेहमान हुए थे और वहां उन्हें उनकी सर्वोत्तम रहन सहन देखने का अवसर मिला था। उनका विश्वास है कि अमेरिकनों की अपेक्षा अंगरेज़ लोग अधिक सुख से जीवन व्यतीत करना जानते हैं। उनके कथनानुसार अंगरेज़ों का गार्हस्थ जीवन सर्वांगपूर्ण है। यहां नौकर चाकर अपने स्वामियों का बहुत अधिक आदर करते हैं। अंगरेज़ नौकर सदा नौकर ही रहना चाहते हैं और अपना कार्य्य अमेरिकन नौकर की अपेक्षा बहुत अधिक उत्तमता से करते हैं। पर अमेरिका के नौकर

शीघ्र ही स्वय मालिक बन जाने की आशा रखते हैं। दूसरी बात यह है कि इगलड में सब लोग राजनियमों का खूब ध्यान रखते है और वहा सब कार्य्य बहुत भली भांति, और सरलतापूर्वक होते है। अगरेज लोग भोजन करने में बहुत अधिक समय लगाते है।

इगलंड के उमरा और अमीरों के सबध में उनके विचार पहले की अपेक्षा अधिक अच्छे हो गए। इससे पूव उन्हें यह बात नहीं मालूम थी कि सर्वसाधारण में अमीरों का बहुत मान है और वे लोग बहुत दत्तचित्त होकर परोपकार में बहुत अधिक समय और धन व्यय करते है। अगरेजों के सामने वक्तृता देने का अभ्यास करने में उन्हें बहुत कठिनता हुई थी, वाशिंगटन के मुह से जिस किस्से को सुन कर अमेरिकन खूब हँसते थे उस किस्से को सुन कर गभीर अगरेजों के चेहरों पर मुस्कराहट भी न आती थी। अगरेज लोग जिनसे मित्रता करते हैं उन्हें वे मानों लोहे के तारों से बाध लेते हैं। अपने इस कथन के उदाहरण में उन्होंने एक घटना का उल्लेख किया है। सदरलंड के ड्यूक और डचेज ने वाशिंगटन और उनकी स्त्री को अपने स्टेफोर्ड हाउस नामक मकान में निमन्त्रित किया था। यह मकान इगलैंड भर में सब से बढ़िया समझा जाता है और डचेज इगलैंड की स्त्रियों में परम सुदरी कही जाती हैं। निमत्रण के समय वहां लगभग तीन सौ मनुष्य उपस्थित थे। उस सध्या को डचेज महाशया ने उतने

बड़े समूह में वाशिंगटन को दो बार ढूंढ कर उनसे बातें कीं और दस्केजी आने पर वहां का पूरा पूरा हाल लिख भेजने के लिये कहा। वाशिंगटन ने भी उनकी इस आज्ञा का भली भांति पालन किया था। डचेज ने बड़े दिनों पर उन्हें अपने हस्ताक्षर करके अपना एक चित्र भेजा था। अब उन लोगों में बराबर पत्र-व्यवहार होता है।

तीन मास तक युरोप में भ्रमण करके वाशिंगटन महाशय सेंट लुई नामक जहाज पर सवार होकर सौउथेंपटन से रवाना हुए। उस जहाज पर एक बहुत अच्छा पुस्तकालय था जिसमें फ्रेडरिक डगलस का एक जीवन-चरित था। वाशिंगटन ने उसे ध्यानपूर्वक पढ़ा था। उसे देखने से उन्हें मालूम हुआ कि जब डगलस महाशय पहली या दूसरी बार इंगलैंड गए थे तो लोगों ने उन्हें जहाज के कमरों में न जाने दिया था और डेक पर ही रहने के लिये कहा था। जिस समय वाशिंगटन यह वर्णन पढ़ रहे थे, उसी समय कई स्त्रियों और पुरुषों ने आकर उनसे सद्दूरे दिन सध्या समय कंसर्ट के अवसर पर एक वक्तृता देने की प्रार्थना की। इससे मालूम होता है कि अमेरिका में दिन पर दिन जाति या वर्ण भेद का विचार उठता जाता है। कंसर्ट में न्यूयार्क के गवर्नर सभापति हुए थे। सब लोगों ने बहुत ध्यान से उनका व्याख्यान सुना था। उसी अवसर पर सब श्रोताओं ने, जिनमें से अधिकांश दक्षिणी

अमेरिकन थे, टस्केजी-विद्यालय के कई विद्यार्थियों को छात्र-वृत्तियां देने के लिये चंदा इकट्ठा किया था।

पाठकों को स्मरण होगा कि वाशिंगटन महाशय ने अपनी बाल्यावस्था का अधिकांश पश्चिम वर्जीनिया में व्यतीत किया था। जब वे पेरिस में थे तो उन्हें पश्चिम वर्जीनिया के निवासियों की ओर से निम्नलिखित आशय का निमंत्रण मिला था।

चार्लस्टन १३ मई १८९९

प्रोफेसर बुकर टी० वाशिंगटन, पेरिस-(फ्रांस)

प्रिय महाशय !

पश्चिम वर्जीनिया के अनेक सुयोग्य निवासियों ने आपके कार्य्य और योग्यता की बहुत प्रशंसा की है और उनकी इच्छा है कि युरोप से लौटने पर आप यहां पधार कर उन्हें उत्साह दिलाने के लिये एक व्याख्यान देने की कृपा करें। हम लोग इस विचार को बहुत पसंद करते हैं और आपने अपने कार्य्यों से हम लोगों की जो प्रतिष्ठा बढ़ाई है, उसके बदले में आपका सम्मान करने के लिये हम लोग चार्लस्टन-निवासियों की ओर से आपको यहां आने का निमंत्रण देते हैं।

भवदीय

चार्लस्टन नगर की कामन कौंसिल

की ओर से, डब्ल्यू० हरमन स्मिथ,

मेयर।

इस निमंत्रण के साथ, एक और भी निमंत्रणपत्र था जिस पर चार्लस्टन के डेली गजट, डेली मेल ट्रिब्यून, जी डब्ल्यू. एटकिन्सन गवर्नर, डब्ल्यू ए मैक कारकल भूतपूर्व गवर्नर, तथा कई बकों के सभापतियों तथा राज्य के बहुत बड़े बड़े अधिकारियों के हस्ताक्षर थे। वाशिंगटन महाशय ने ये दोनों निमंत्रण स्वीकार कर लिए। निश्चित तिथि पर वे चार्लस्टन पहुंचे। रेलवे स्टेशन पर भूतपूर्व गवर्नर मि० मैक-कारकल तथा अन्य कई बड़े बड़े लोगों ने उनका स्वागत किया। इसके अतिरिक्त नगर के ओपेरा हाउस में उनका सार्वजनिक स्वागत किया गया। गवर्नर माननीय मिस्टर एटकिन्सन ने सभापति का आसन ग्रहण किया। मि० मैक-कारकल ने वाशिंगटन महाशय को एक अभिनंदनपत्र दिया। दूसरे दिन फिर उसी प्रकार स्टेट हाउस में श्रीयुत और श्रीमती एटकिन्सन की ओर से उनका स्वागत हुआ। इसके बाद ही एटलान्टा के हबशियों ने भी निमंत्रण देकर उनका स्वागत किया जिस में राज्य के गवर्नर सभापति हुए थे। न्यू ओरलियंस के निवासियों ने भी उनका स्वागत किया था जिसमें नगर के मेयर महाशय सभापति हुए थे। इसके अतिरिक्त और भी अनेक स्थानों से उन्हें अनेक निमंत्रण आए थे पर कई कारणों से उन्होंने कोई निमंत्रण स्वीकार नहीं किया था।

१७—सफलता का मधुर फल

युरोप जाने से पूर्व वाशिंगटन महाशय के जीवन में आश्चर्यपूर्ण घटनाएं हुई थीं। यदि सच पूछिए तो उनका सारा जीवन ही आश्चर्यपूर्ण घटनाओं से पूर्ण है। उनका दृढ़ विश्वास है कि यदि मनुष्य नित्य अपने जीवन को निर्मल, स्वार्थरहित और उपयुक्त बनाने की चेष्टा में लगा रहे तो उसे सदा अपने जीवन में इसी प्रकार की अकल्पित और उत्साह बढ़ानेवाली बातें मिला करेंगी। जो मनुष्य दूसरों को उपकृत या सुखी करके प्रसन्न और सन्तुष्ट नहीं होता उसकी स्थिति बहुत ही शोचनीय होती है।

पक्षाघात से एक वर्ष तक पीड़ित रहने के बाद और अपनी मृत्यु से छः मास पहले जनरल आर्मस्ट्रांग ने एक बार पुनः टस्केजी-विद्यालय देखने की इच्छा प्रकट की। यद्यपि उस समय वे चलने फिरने में बिलकुल असमर्थ थे तो भी वे किसी प्रकार टस्केजी लाए गए। यहां के रेलवे के गोरे मालिकों ने बिना कुछ लिए ही पांच मील की दूरी से एक स्पेशल गाड़ी पर उन्हें ले आने का प्रबंध कर दिया था। जनरल महाशय रात के नौ बजे विद्यालय में पहुंचे थे। विद्यालय के फाटक से उनके ठहरने के स्थान तक दोनों ओर एक हजार विद्यार्थी और शिक्षक हाथों में रोशनी लिए खड़े थे। यह दृश्य देख कर जनरल महाशय बहुत प्रसन्न हुए थे। गोरे मेर

मास तक वे अपने शिष्य और हमारे चरितनायक के घर मेहमान रहे थे। इस बीच में वे बोलने चलने और उठने बैठने में नितांत असमर्थ होने पर भी सदा विद्यालय की उन्नति के उपाय बतलाया करते थे। वे सदा यही कहा करते थे कि समस्त देश का कर्त्तव्य यही होना चाहिए कि वह हबशियों और दरिद्र गोरों की उन्नति के लिये समान रूप से उद्योग करे। वाशिंगटन ने उस समय उनके विचार पूर्ण करने का और भी अधिक दृढ़ निश्चय कर लिया था। उन्हों ने सोचा कि जब कार्य्य करने में सब प्रकार से असमर्थ होने पर भी जनरल महाशय ऐसी बातों की चिंता करते हैं तो मुझ ऐसे समर्थ को उसमें सहायता देना परम आवश्यक है।

इसके थोड़े ही दिनों पीछे जनरल आर्मस्ट्रांग का देहांत हो गया। उनके स्थान पर पादरी डाकृर फ्रिसेल हैंपटन विद्यालय के प्रिंसिपल बनाए गए। ये महाशय भी साधुता और परोपकार आदि में जनरल महाशय के प्राय समकक्ष ही हैं। जनरल महाशय के इच्छानुसार उन्होंने विद्यालय को परमोन्नत बनाने में कोई बात उठा नहीं रक्खी। यही नहीं बल्कि इस काम में वे अपनी जरा भी प्रसिद्धि नहीं चाहते और सारा यश जनरल महाशय को ही देते हैं।

ऊपर कहा जा चुका है कि युरोप जाने से पूर्व वाशिंगटन के जीवन में अनेक अद्भुत घटनाएं हुई थीं। २४ जून सन् १८९६ को उन्हें हरवर्ड विश्वविद्यालय से आनरेरी एम० ए०

की डिगरी मिली थी। हरवर्ड विश्वविद्यालय अमेरिका में सब से अधिक प्रचीन और प्रतिष्ठित है। विद्यालय का तत्संबंधी निमंत्रण पत्र पाकर उनके नेत्रों में जल भर आया था। सारी प्रारंभिक दीन स्थिति उनकी आंखों के सामने फिर गई। उन्हें ध्यान आ गया कि किसी समय वे दास थे, कोयले की खान में काम करते थे, उनके खाने पहनने और रहने का कोई ठिकाना नहीं था, विद्या पढ़ने के लिये उन्हें घोर परिश्रम करना पड़ा था और टस्केजी-विद्यालय का कार्य्य, पास में एक डालर न होने पर भी आरंभ करना पड़ा था।

वाशिंगटन प्रतिष्ठा या प्रसिद्धि के भूखे नहीं थे और न उन्होंने कभी इन बातों की परवाह की थी। प्रसिद्धि को वे केवल अच्छे कामों के पूरा करने में साधारण सहायक मात्र मानते थे और ये ही बातें वह सदा अपने मित्रों से भी कहा करते थे। वे केवल उतनी ही प्रसिद्धि से संतुष्ट रहना चाहते थे जिससे उनके परोपकारी कार्य्यों में कुछ सहायता मिल सके। किसी अच्छे कार्य्य में वे प्रसिद्धि को उतना ही सहायक और आवश्यक समझते थे जितना धन को। बड़े बड़े योग्य धनवानों से मिल कर उन्होंने यही निश्चय किया कि ये धनवान् लोग धन को परोपकारी कार्य्यों के लिये ईश्वर प्रदत्त साधन मात्र समझते हैं। यद्यपि वे सुप्रसिद्ध दानवीर और धनी राकफेलर के पास कभी नहीं गए थे तौ भी उन्होंने

बिना मांगे अनेक बार टस्केजी विद्यालय को सहायता दी है। जिस प्रकार किसी व्यवसाय में धन लगाने के समय ये इस बात का ध्यान रखते हैं कि उनके प्रत्येक डालर का ठीक ठीक उपयोग हो उसी प्रकार दान देने के समय भी वे इस बात का उतना ही अधिक ध्यान रखते हैं और वास्तव में इस प्रकार के विचार बहुत ही उपयुक्त और उत्साहवर्द्धक हैं।

२४ जून की सवेरे नौ बजे वाशिंगटन महाशय हारवर्ड विश्वविद्यालय के बोर्ड आफ ओवरसियर के सभापति ईलियट महाशय के पास पहुंचे। उस समय वहां और भी अनेक निमंत्रित सज्जन उपस्थित थे। पदवीदान का समारंभ सेंडर्स थियेटर में होने को था और ईलियट महाशय के स्थान से उक्त थियेटर तक निमंत्रित लोगों का एक जुलूस निकलने वाला था। उस दिन पदवी पाने वाले अनेक विद्वानों में बेल टेलीफोन (Bell telephone) का आविष्कार करने वाले डाक्टर बेल भी थे। प्रेसिडेंट और ओवरसियरों के पीछे पदवी पानेवाले लोग खड़े किए गए। इतने में बहुत से भाले बरदारों के साथ मैसेच्युसेट्स के गवर्नर वहां आए। यहां से जुलूस थियेटर की ओर रवाना हुआ। उस जुलूस में अनेक बड़े बड़े अफसर और प्रोफेसर भी सम्मिलित थे। थियेटर में साधारण कार्रवाइयों के उपरांत पदवी-दान का कार्य्य आरंभ हुआ। विद्यालय का यह समारंभ सदा ही बहुत मनोहर हुआ करता है। पदवी पाने वालों के नाम पहले गुप्त रक्खे जाते हैं और

जिन लोगों को पदवियां मिलती हैं उनके नाम पर विद्यार्थी और दूसरे लोग उनकी सर्वप्रियता के अनुसार उनका अभिनंदन करते हुए प्रसन्नता प्रकट करते हैं। उस समय लोगों का उत्साह और आनंद परम सीमा तक पहुंचा हुआ होता है।

जिस समय वाशिंगटन महाशय का नाम लिया गया, उस समय वे उठ कर खड़े हो गए। सभापति इलियट महाशय ने सुंदर और पुष्ट अंगरेजी में उन्हें एम० ए० (Master of Arts) की पदवी दी। इसके उपरांत और लोगों को भी पदवियां दी गई और तदनंतर जिन लोगों को पदवियां मिली थीं उन्हें सभापति महाशय के साथ जलपान करने के लिये निमंत्रण दिया गया। जलपान के उपरांत उन लोगों को चारों ओर घुमाया गया। स्थान स्थान पर लोग पदवी पाने वालों के नाम ले लेकर जयघोष करते थे। चारों ओर घूम फिर कर वे मैमोरियल हाल में पहुंचे जहां विश्वविद्यालय में शिक्षा पाए हुए लोगों के भोजन आदि का प्रबंध किया गया था। उस समय एक हजार बड़े बड़े अफसरों, पादरियों, व्यापारियों और शिक्षितों की उपस्थिति से जो अपूर्व दृश्य उपस्थित हुआ था उसका वर्णन प्रायः असंभव है।

भोज के उपरांत सभापति ईलियट, गवर्नर वालकाट, माननीय माइल्स, डाक्टर सैवेज, माननीय लाज तथा वाशिंगटन

महाशय के व्याख्यान हुए थे। वाशिंगटन महाशय ने अन्यान्य बातों के अतिरिक्त अपनी वक्तृता में कहा था।

'आप लोगों ने आज जो मेरी इतनी प्रतिष्ठा की है, यदि मैं अपने आपको किसी अंश में भी उसका पात्र समझूँ, तो मेरे मन का बोझ कुछ हलका हो जायगा। आप लोगों ने दक्षिण के गरीबों में से इस अवसर पर पदवी ग्रहण करने के लिये मुझे क्यों बुलाया है, यह मैं नहीं समझ सकता। पर तौ भी मेरे लिये यह कहना अनुचित या अप्रासंगिक न होगा कि अमेरिकन लोगों के सामने आज मुख्य प्रश्न यह है कि विद्वानों, धनवानों, और सशक्तों को मूर्खों निर्धनों और दुर्बलों का किस प्रकार सहायक बनाया जाय और एक के द्वारा दूसरे के कार्य्यों की प्रशंसा किस प्रकार कराई जाय। प्रश्न यह है कि अत्यंत दरिद्रों की आवश्यकताएं बड़े बड़े धनवानों पर किस प्रकार प्रकट की जाय। हरवर्ड विश्वविद्यालय आज,—अपने आपको नीचे गिराकर नहीं बल्कि सर्वसाधारण को उन्नत करके—इसी प्रश्न का निर्णय कर रहा है।

* * * * * * *

यदि आज तक अपने गत जीवन में मैंने अपने जाति भाइयों को उन्नत करने और अपनी और आपकी जाति का संबंध दृढ़ करने के लिये कोई उद्योग किया हो तो मैं आपको विश्वास दिलाता हूं कि आज से मेरा यह उद्योग द्विगुण हो जायगा। ईश्वर के यहां प्रत्येक मनुष्य और प्रत्येक जाति की

सफलता का एक ही परिमाण है। इस देश में प्रत्येक जाति को अमेरिकन परिमाण के अनुसार अपने आपको नापना चाहिए। प्रत्येक जाति की उन्नति और अवनति, सफलता और विफलता उसी परिमाण के अनुसार होगी। केवल इच्छा या उद्देश्य को कोई महत्वपूर्ण परिणाम नहीं होता। आगामी पचास वर्ष या उससे भी कुछ अधिक समय तक हमारी जाति भी इसी कठिन कसौटी पर कसी जायगी। यहीं हमारी सहिष्णुता तितिक्षा, धैर्य्य, शक्ति और मितव्ययता की परीक्षा होगी, यही नहीं बल्कि यह भी देखा जायगा कि हम लोगों में चढ़ा ऊपरी या मुकाबला करने की शक्ति है या नहीं व्यापार में हम लोग सफलता प्राप्त कर सकते हैं या नहीं वास्तविक बातों के लिये कृत्रिम बातों को छोड़ सकते हैं या नहीं, उन्नत होकर भी नम्र रह सकते हैं या नहीं, विद्वान होकर भी सरल रह सकते हैं या नहीं, और उच्च होने पर भी सब के सेवक बने रह सकते हैं या नहीं।"

अमेरिकन युनिवर्सिटी की ओर से एक हबशी को इतनी बड़ी आनरेरी पदवी मिलने का यह पहला ही अवसर था, इस लिये वहां के समाचार पत्रों में इस बात की बहुत चर्चा हुई। न्यूयार्क के एक पत्र के संवाददाता ने लिखा था—

"बु० टी० वाशिंगटन के नाम पुकारे जाने और उठने पर जितनी अधिक तालियां बजी थीं उतनी देशभक्त जनरल

माइन्स के अतिरिक्त और किसी के नाम पर नहीं बजीं। ये तालियां आनन्द, आश्चर्य और उत्साह की उत्तेजना से ही बजी थीं। यह इस बात का प्रमाण है कि लोगों ने एक भूतपूर्व दास के कार्यों और उद्योगों की उपयुक्तता स्वीकार की है।"

बोस्टन के एक पत्र के सम्पादक ने लिखा था—

"हार्वर्ड विश्वविद्यालय ने टस्केजी विद्यालय के प्रिंसिपल को एम० ए० की आनरेरी डिग्री देकर, अपनी और उनकी, दोनों की प्रतिष्ठा बढ़ाई है। वाशिंगटन ने दक्षिण के मजदूरों को शिक्षित, सुयोग्य और विज्ञ बनाने में जो परिश्रम किया है उसके कारण वे हमारे राष्ट्र के बड़े बड़े अधिकारियों में गिने जाने योग्य हुए हैं। जिस विश्वविद्यालय के सुपुत्रों में ऐसे ऐसे सुयोग्य मनुष्यों के नाम हों उसे इस बात का अभिमान होना चाहिए। वाशिंगटन महाशय को हबशी होने या दासत्व में जन्म लेने के कारण यह पदवी नहीं मिली है बल्कि उस योग्यता और दीनवत्सलता के कारण मिली है जो उन्होंने दक्षिणी लोगों की उन्नति करने में प्रदर्शित की है।'

बोस्टन के एक दूसरे पत्र ने लिखा था—

एक हबशी को आनरेरी डिग्री देनेवाला हरवर्ड विश्वविद्यालय सर्व प्रथम ही है। जो मनुष्य टस्केजी विद्यालय के कार्य्य और इतिहास से परिचित है वह वाशिंगटन महा

सभापति मैकिनले के पास नित्य बहुसंख्यक लोग, भिन्न भिन्न उद्देश्यों से, भेंट करने के लिये आया करते थे। इसके अतिरिक्त उन्हें स्वयं भी बहुत अधिक कार्य्य रहता था। वाशिंगटन महाशय यह बात बिलकुल न समझ सके कि इतना सब कुछ होने पर भी प्रत्येक आगंतुक से भेंट करने के लिये वे सदा कितने शांत, धीर और प्रसन्न चित्त होकर प्रस्तुत रहते हैं। सब से पहले सभापति महाशय ने टस्केजी के उपयोगी और देशहितकर कार्य्यों के लिये वाशिंगटन को धन्यवाद दिया। तदुपरांत वाशिंगटन ने उन्हें अपने आने का उद्देश्य कह सुनाया। उन्होंने यह बात भली भांति समझा दी कि राष्ट्र के सर्वप्रधान अधिकारी के शुभागमन से विद्यालय के विद्यार्थी और अध्यापक मात्र ही उत्साहित न होंगे बल्कि उससे समस्त जाति को विशेष लाभ पहुंचेगा। वे प्रसन्न तो अवश्य हो गए पर टस्केजी जाने के संबंध में उन्हें कोई निश्चित वचन न दे सके। इसका मुख्य कारण यह था कि उस समय तक उनकी एटलांटा-यात्रा के संबंध में सारी बातें निश्चित नहीं हो सकी थीं। इसलिये उन्होंने वाशिंगटन से कह दिया कि आप कतिपय सप्ताहों के उपरांत मुझे इस विषय का स्मरण दिलादें।

दूसरे मास के मध्य में सभापति का एटलांटा आना दृढ़ रूप से निश्चित हो गया। इसलिये हमारे चरित-नायक फिर वाशिंगटन जाकर उनसे मिले। इस बार टस्केजी नगर के निवा

ड्रेयर नामक एक प्रधान गोरे अधिवासी भी स्वेच्छापूर्वक उनके उद्देश्य में सहायता देने के लिये उनके साथ गए थे। उनको इस दूसरी यात्रा से पूर्व ही दक्षिण के भिन्न भिन्न स्थानों में कई भारी दंगे हो गए थे जिसके कारण देश में बहुत गड़बड़ फैल गई थी और हबशी लोग बहुत दुःखी हो रहे थे। सभापति से मिलने पर वाशिंगटन को मालूम हुआ कि वे इन झगड़ों के कारण बहुत चिंतित हैं। यद्यपि उस समय बहुत से लोग सभापति महाशय से भेंट करने के लिये आए हुए थे तौ भी उन्होंने वाशिंगटन को थोड़ी देर तक ठहरा लिया और उनके साथ देश और जाति के संबंध में अनेक बातें की। इस बीच में उन्होंने कई बार यह भी कहा कि मैं तुम्हारी जाति के प्रति केवल शब्दों द्वारा नहीं बल्कि कार्य्यों द्वारा अपनी अवस्था प्रकट करूंगा। इस अवसर पर वाशिंगटन ने कहा कि यदि आप अपने निश्चित मार्ग से लगभग डेढ़ सौ मील हट कर हबशियों के विद्यालय में पदार्पण करें तो लोगों के हृदय में आशा और उत्साह का बहुत कुछ संचार हो सकता है। यह बात सभापति महाशय के मन में बैठ सी गई। उसी समय अटलांटा निवासी एक गोरे सज्जन भी वहां पहुंच गए। सभापति ने उनसे भी टस्केजी जाने के विषय में सम्मति मांगी। उन्होंने तुरंत उत्तर दिया कि यह कार्य्य बहुत ही उपयुक्त होगा। इस पर वाशिंगटन के गोरे साथी ने भी ज़ोर दिया। अंत में

सभापति महाशय ने वाशिंगटन को वचन दे दिया कि मैं १६ दिसंबर के दिन विद्यालय में आऊंगा।

जब लोगों को सभापति महाशय के विद्यालय में आने का समाचार मिला तो विद्यार्थी, अध्यापक और टस्केजी के समस्त निवासी बहुत प्रसन्न हुए। नगर के गोरे निवासी अपने अपने मकान सजाने लगे और सभापति की यथोचित अभ्यर्थना का प्रबंध करने के लिये विद्यालय के अधिकारियों से मिलकर समितियां गठने लगे। उसी समय वाशिंगटन को यह बात भी मालूम हो गई कि टस्केजी और उसके आस पास के गोरे निवासियों का उनके विद्यालय पर कितना अधिक प्रेम है। जिस समय सभापति के स्वागत की तैयारियां हो रही थीं उस समय उनके पास बहुत से लोग कार्य्य में सहायता देने के लिये आया करते थे।

१६ दिसंबर को सवेरे टस्केजी में जितनी अधिक भीड़ हुई उतनी पहले कभी नहीं हुई थी। सभापति महाशय के साथ उनकी पत्नी और समस्त मंत्रि-मंडल का आगमन हुआ था। अधिकांश मंत्री भी अपनी अपनी स्त्रियों या परिवार के लोगों को अपने साथ लाए थे। बड़े बड़े सैनिक जनरल भी उस अवसर पर यहां पधारे थे। समाचार पत्रों के संवाद-दाताओं का भी एक भारी दल यहां आया था। उन्हीं दिनों मांटगोमरी में एलबामा राज्य की लेजिस्लेटिव कौंसिल का अधिवेशन होने वाला था. यह भी इसी कारण रुक गया और

कौंसिल के सब सदस्य टस्केजी आए। सभापति महाशय के दल के आने से पूर्व ही एडलाग्स राज्य के गवर्नर, बड़े बड़े राज कर्मचारी और कौंसिल के सदस्य आ गए।

टस्केजी निवासियों ने स्टेशन से विद्यालय तक का मार्ग बहुत भली भांति सजाया था। समय कम लगने के विचार से यह प्रबंध किया गया था कि सभापति महाशय सरसरी तौर पर सब विद्यार्थियों को देखलें। प्रत्येक विद्यार्थी के हाथ में एक एक ऊख दिया गया था जिसके सिरेपर रुई की फूली हुई ढोंढिया लगी हुई थीं। विद्यार्थियों के पीछे विद्यालय के भिन्न भिन्न भागों में बने हुए पुराने और नए समान घोड़ा, खच्चरों और बैलों पर लदे हुए थे। मक्खन आदि निकालने जमीन जोतने और भोजन बनाने के नए और पुराने दोनों ढंग दिखलाए गए थे। विद्यार्थियों और इन सामानों को सभापति महाशय के सामने से होकर निकलने में डेढ़ घंटे लगे थे।

विद्यार्थियों ने हाल ही में एक नया विशाल गिरजा बनाया था। उसी में सभापति महाशय की वक्तृता हुई थी। उन्होंने अन्यान्य बातों के साथ कहा था—

ऐसे आनंददायक अवसर पर आप लोगों से मिलना और आप के कार्यों को देखना बहुत ही समाधान-कारक है। टस्केजी विद्यालय के उद्देश्य और विचार आदर्श हैं, और देश तथा विदेश में इसकी ख्याति बहुत अधिक है और

बराबर बढ़ती जाती है। विद्यार्थियों को प्रतिष्ठित और उपयुक्त जीवन बिताने की शिक्षा देने और जिस जाति के लिये यह विद्यालय स्थापित हुआ है उसे उन्नत करने के काम में सहायता देनेवालों को मै बधाई देता हू।

*   *   *   *   *   *   *

बिना बुकर टी० वाशिंगटन की बुद्धिमत्ता और दृढ उद्योग की प्रशसा किए टस्कीजी विद्यालय की चर्चा असभव है। इस महत कार्य्य का आरभ उन्हीं ने किया है और इसके लिये वे उच्च श्रेय के पात्र हैं। उन्हीं के उत्साह और साहस से विद्यालय की इतनी उन्नति हुई है और यह पूर्णता की इस उच्च स्थिति को पहुचा है। उन्होंने अपनी जाति के एक बडे अगुआ होने की ख्याति प्राप्त की है और देश तथा विदेश में उत्तम अध्यापक, भारी वक्ता और सच्चे परोपकारी होने के कारण उनकी बहुत अधिक प्रतिष्ठा है।

नेवी विभाग के मन्त्री माननीय जान डी० लाग ने अपनी वक्तृता में कहा था—

मैं आज व्याख्यान नहीं दे सकता। दोनो जातियों के सबध में आशा, प्रशसा और अभिमान से मेरा हृदय परिपूर्ण हो रहा है। मै कृतज्ञतापूर्वक आपके कामों की प्रशसा करता हू और भविष्य में आपकी उन्नति और आपके सम्मुख उपस्थित प्रश्न के निराकरण के विषय में मुझे सदा दृढ़ विश्वास रहेगा।

मेरी समझ में आपके प्रश्न का निराकरण हो गया है।
आज हम लोगों के सामने जो चित्र उपस्थित है वह वाशिंगटन (जार्ज) और लिंकन के चित्रों के बराबर रखने और भावी पीढ़ी के मनन करने योग्य है। समाचार पत्रों को उचित है कि वे इस सुंदर चित्र को समस्त देश में फैला दें। उस चित्र में यह दृश्य है,—संयुक्त राज्य के सभापति इस मंच पर खड़े हैं, उनके एक ओर एलबामा के गवर्नर और दूसरी ओर त्रिमूर्ति की पूर्ति करने वाले पुरानी दास जाति के प्रतिनिधि और टस्केजी विद्यालय के हबशी अध्यक्ष खड़े हैं।

ईश्वर उस सभापति का कल्याण करे जिसके आश्रय में अमेरिकन लोगों के सामने यह दृश्य उपस्थित है। ईश्वर उस एलबामा राज्य का कल्याण करे जो यह बतला रहा है कि इस प्रश्न का निराकरण वह स्वयं कर लेगा। ईश्वर उस वक्ता, परोपकारी और जगतपति के शिष्य बुकर टी० वाशिंगटन का कल्याण करे। यदि वह जगतपति स्वयं इस संसार में आता तो वह भी यही कार्य्य करता जो कि वाशिंगटन कर रहे हैं।

पोस्ट-मास्टर जनरल स्मिथ ने अपने व्याख्यान के अंत में कहा था,—

इधर कई दिनों में हम लोगों ने बहुत से दृश्य देखे हैं। हमने दक्षिण के बड़े और प्रधान नगरों का सौंदर्य्य और वैभव देखा, वीर सैनिकों का जुलूस देखा, और फूलों से

सजी हुई फोजों की कवायद देखी। पर मुझे विश्वास है कि मेरे मित्रगण मेरे इस कथन में सहमत होंगे कि आज प्रात काल हम लोगों ने यहां जो दृश्य देखा है उससे अधिक प्रभावशाली उत्साहवर्द्धक और भविष्य के संबध में अच्छा आशा दिलाने वाला और कोई दृश्य हम लोगों ने नहीं देखा।

सभापति महाशय के टस्केजी से चले जाने के कई दिनों बाद वाशिंगटन महाशय को सभापति के सेक्रेटरी मिस्टर पोरटर का एक पत्र मिला था, जिसमें अन्यान्य बातों के अतिरिक्त यह भी लिखा था—"आपका सारा कार्य्य-क्रम बहुत ही अच्छी तरह पूरा हुआ था और प्रत्येक दर्शक उससे पूरी तरह संतुष्ट और प्रसन्न हुआ था"। * * * * * सभापति महाशय तथा मन्त्रि-मडल ने आप के कार्य्यों का जो आदर किया है वह बहुत ही उचित है और आप के विद्यालय की भावी उन्नति का सूचक है। अत मैं मैं यह कहे बिना नहीं रह सकता कि सब कार्य्यों में आपने जो नम्रता दिखलाई थी उससे हमारी मडली के सभी लोग बहुत ही प्रसन्न हुए थे। * * * * * * * * * *

आज से प्राय. बाइस वर्ष पहले वाशिंगटन महाशय ने टस्केजी की एक टूटी झोपड़ी में केवल एक शिक्षक और तीस विद्यार्थियों से जो विद्यालय खोला था, उसके अधिकार में इस समय तेईस सौ एकड़ भूमि है जिसमें से सात सौ

पखड़ में यहां के विद्यार्थी खेती करते हैं। इस समय विद्यालय में छोटे बड़े सब मिला कर चालीस भवन हैं जिनमें से चार भवनों को छोड़ कर शेष सभी भवन विद्यार्थियों के ही बनाए हुए हैं। यहां विद्यार्थियों को बिलकुल नए ढंग से इमारतें बनाना और खेती करना सिखाया जाता है।

विद्या और धर्म्म की शिक्षा के अतिरिक्त यहां अट्ठाइस विभाग ऐसे हैं जिनमें विद्यार्थियों को भिन्न भिन्न प्रकार के शिल्प आदि सिखाए जाते हैं। इसीलिये विद्यालय से निकलते ही उन लोगों को तुरत काम मिल जाता है। दक्षिण के अनेक गोरे और हबशी लोग पत्र लिख कर विद्यालय से उसके ग्राजुएट मांगा करते हैं, पर विद्यालय उनमें से आधे से अधिक प्रार्थियों की इच्छा पूरी नहीं कर सकता। इस के अतिरिक्त विद्यालय में शिक्षा पाने के लिये जितने विद्यार्थियों के आवेदन आते हैं, धन और स्थान के अभाव के कारण उनमें से केवल आधे लोगों की प्रार्थना ही स्वीकार की जा सकती है।

शिल्प संबंधी शिक्षा में विद्यालय के अधिकारी तीन बातों का विशेष ध्यान रखते हैं। पहली बात तो यह कि उन्हें देश की स्थिति और आवश्यकता के अनुसार शिक्षा दी जाती है, अर्थात् जो बातें बहुत ही आवश्यक और उपयोगी होती हैं विद्यार्थियों को उन्हीं की शिक्षा दी जाती है। दूसरे, प्रत्येक विद्यार्थी को कार्य्यकुशल, चतुर और

शुद्धाचरण बनाने का उद्योग किया जाता है जिसमें वह अपना और दूसरों का भली भांति निर्वाह कर सके। तीसरे प्रत्येक विद्यार्थी को यह सिखलाया जाता है कि परिश्रम करना बहुत ही श्रेष्ठ है, किसी को परिश्रम से भागना न चाहिए बल्कि उससे प्रेम करना चाहिए। बालिकाओं को गृहस्थी के कामों के अतिरिक्त कृषि आदि की शिक्षा भी दी जाती है। प्रत्येक बालिका बाग लगाना, फल उपजाना, दही मक्खन आदि बनाना, शहद के लिये मक्खियां पालना और बढ़िया मुरगे और बत्तक आदि पैदा करना सीखती है।

यद्यपि टस्केजी-विद्यालय किसी विशेष धर्म्म वा सम्प्रदाय का नहीं है तो भी वहां बाइबिल की शिक्षा के लिये एक अलग विभाग है जिसमें उपदेश आदि कार्य्यों के लिये विद्यार्थी तैयार किए जाते हैं। इन विद्यार्थियों को भी नित्य आधे दिन किसी न किसी शिल्प विभाग में अवश्य काम करना पड़ता है।

विद्यालय में इस समय तीन लाख डालर की सम्पत्ति है। इसके अतिरिक्त उसे दान मिली हुई सम्पत्तियों का मूल्य दो लाख पन्द्रह हजार डालर है। नए भवन बनाने तथा दूसरे खर्चों के लिये अभी इतने ही धन की और भी आवश्यकता है। विद्यालय का वार्षिक व्यय लगभग अस्सी हजार डालर है। इसका अधिकांश वाशिंगटन महाशय को घर घर घूम कर संग्रह करना पड़ता है। विद्यालय का कोई अंश रेहन नहीं है और उसके प्रबंध के लिये ट्रस्टियों का एक बोर्ड नियत है।

इस समय यहां अमेरिका के सत्ताइस राज्यों, तथा अफ्रिका, क्यूबा और जमायका आदि विदेशों से आए हुए ग्यारह सौ विद्यार्थियों को शिक्षा दी जाती है। शिक्षकों और अधिकारियों की संख्या छियासी है। शिक्षकों के साथ उनका परिवार भी विद्यालय में ही रहता है। विद्यालय स्थल में सब मिला कर कोई चौदह सौ आदमी रहते हैं।

एक साधारण प्रश्न उठता है कि इतने अधिक आदमी किस प्रकार साथ रहते हैं और किसी प्रकार का उपद्रव नहीं करते? बात यह है कि एक तो यहां के स्त्री पुरुष बड़े श्रद्धालु होते हैं और दूसरे सदा कार्य्य में लीन रहते हैं। नीचे दिए हुए कार्य्यक्रम से यह बात स्पष्ट हो जाती है—

सवेरे पाँच बजे सोकर उठने की घंटी बजती है प्रात क्रिया से निवृत्त होकर लोग ६ बजे जलपान करने बैठते हैं और ६—२० पर जलपान समाप्त हो जाता है, आध घंटे में सब कमरे साफ किए जाते हैं उसके बाद ७॥ तक काम होता है इसके उपरांत ८—२० तक सवेरे की पढ़ाई होती है, तदनन्तर सब विद्यार्थियों को एक साथ खड़ा करके उनके वस्त्र आदि का निरीक्षण होता है। ८—४० पर गिरजा में प्रार्थना होती है और ८—५५ से ६ बजे तक पांच मिनट में लोग दैनिक समाचार पढ़ते हैं। ६ से १२ बजे तक क्लास का काम होता है। १२-४५ बजे भोजन, १ बजे काम की घंटी, और १॥ बजे फिर क्लास का कार्य्य आरंभ होता है, जो ३॥। बजे

तक होता रहता है। ५॥ बजे सब कार्य्य समाप्त होने की घंटी होती है, ६ बजे संध्या का भोजन, ७ बजे ईश्वर-प्रार्थना, और ७॥ बजे से ८॥ तक रात की पढ़ाई होती है। इसके उपरांत साढ़े नौ बजे सब लोग सो जाते हैं।

अधिकारी सदा इस बात पर ध्यान रखते हैं कि विद्यालय का मूल्य उस के ग्राजुएटों से जाना जाता है। इस समय टस्केजी-विद्यालय में शिक्षा पाए हुए तीन हजार स्त्री-पुरुष दक्षिण के भिन्न भिन्न भागों में काम करते हैं। वे लोग सर्व साधारण के लिये आदर्शरूप होते हैं और उन्हें आर्थिक, नैतिक तथा धार्म्मिक उन्नति करने का मार्ग दिखलाते हैं। उन लोगों में व्यावहारिक ज्ञान और आत्म-संयमन यथेष्ट होता है जिसके कारण गोरों और हबशियों का संबंध उत्तम और दृढ़ होता है और गोरे समझते हैं कि हबशियों को शिक्षा देना बहुत ही उपयुक्त है। इसके अतिरिक्त श्रीमती वाशिंगटन की स्थापित की हुई मातृ-सभा तथा उनके अन्य कामों का भी बहुत अच्छा प्रभाव पड़ता है।

टस्केजी-विद्यालय के विद्यार्थी जहां जाते हैं वहीं भूमि के क्रय विक्रय, मितव्यय, शिक्षा, नैतिक आचरण आदि में विलक्षण परिवर्त्तन होने लगता है। उन स्त्रियों और पुरुषों के कारण सारे समाज में बड़ी भारी क्रांति हो जाती है।

बारह वर्ष पूर्व हमारे चरित्रनायक ने टस्केजी में नीग्रो कानफरेंस की नीव डाली थी। यह कानफरेंस

तक यहां प्रति वर्ष होती है जिसमें प्राय आठ सौ सौ प्रतिनिधि आते हैं। इस कानफरेंस में सब प्रकार की उन्नति के उपायों पर विचार होता है। इससे अनेक प्रांतीय कानफरेंसों की उत्पत्ति हुई है जो सब की सब इसी प्रकार के कार्य करती हैं। एक बार एक प्रतिनिधि ने सूचना दी थी कि इन सम्मेलनों का प्रभाव इतना अधिक पड़ा है कि ८०० परिवारों ने धन संग्रह करके नए मकान मोल लिए। नीगरो कानफरेंस के दूसरे दिन "काम करनेवालों की सभा" (Workers' Conference) होती है। इसमें दक्षिण के बड़े बड़े विद्यालयों के शिक्षक और शिक्षा विभाग के अधिकारी सम्मिलित होते हैं। नीगरो कानफरेंस में उन लोगों को हबशियों की वास्तविक स्थिति जानने का बहुत अच्छा अवसर मिलता है।

सन् १६०० की ग्रीष्म ऋतु में मि० फारच्यून आदि अनेक सज्जनों की सहायता से वाशिंगटन ने 'नेशनल नीगरो बिजनेस लीग' स्थापित की थी जिसका पहला अधिवेशन बोस्टन नगर में हुआ था। इस लीग में भिन्न भिन्न राज्यों के बड़े बड़े व्यापारी योग देते हैं। इससे और भी कई प्रांतीय लीगों की उत्पत्ति हुई है।

विद्यालय का प्रबंध करने तथा उसके निर्वाह के लिये घर घर घूम कर चंदा संग्रह करने के अतिरिक्त वाशिंगटन महाशय को निमंत्रित होकर दक्षिण के गोरों और हबशियों के समक्ष वक्तृता देने के लिये भी जाना पड़ता है। एक बार